पूसा सुरभि

2016-17

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली – 110012

वार्षिक हिंदी पुरस्कार वितरण समारोह
दिनांकः 21 नवम्बर, 2016

ISSN : 2348-2656

दसवां अंक

पूसा सुरभि

2016 –17

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

नई दिल्ली–110012

पूसा सुरभि

अंक : 2016–17

संरक्षक एवं अध्यक्ष

डॉ. ए.के. सिंह

निदेशक (अतिरिक्त प्रभार)

सह–अध्यक्ष

डॉ. के.वि. प्रभु

संयुक्त निदेशक (अनुसंधान)

संपादक

केशव देव

उप निदेशक (राजभाषा)

संपादन मंडल

डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, सस्यविज्ञान संभाग

डॉ. राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग

सुश्री सुनीता, सहायक निदेशक (राजभाषा)

राजेंद्र शर्मा, मु.तक.अधि., कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई

सम्पर्क सूत्र

उप निदेशक (राजभाषा)

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

दूरभाष : 011–25842451

ISSN : 2348–2656

आवश्यक सूचना

इस अंक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

मुद्रण : दिसम्बर, 2017

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली के लिए हिन्दी अनुभाग द्वारा प्रकाशित एवं मै. वीनस प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स, बी–62/8, नारायणा इन्डस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली –110 028 फोन : 4557 8780, मोबाइल : 98100 89097 द्वारा मुद्रित

आमुख

भारत एक बहुभाषी लोकतंत्र है। हमारे संविधान में राजभाषा हिंदी को संघ के कामकाज की भाषा घोषित किया गया है, क्योंकि एक करोड़ से भी अधिक शब्दों के साथ यह सर्वाधिक समृद्ध भाषा है। देश की राष्ट्रीय एकता का एक बलशाली तत्व उसकी समृद्ध भाषा का होना भी होता है। राजभाषा हिंदी में किसी भी अन्य भाषा को अपने में मिलाने की अद्‌भुत क्षमता है। इसके अलावा यह सहज व सरल भाषा है, जो सारे देश को समुन्नत करने में सर्वाधिक सुयोग्य व सक्षम है। साथ ही यह क्षेत्रीयता की समस्या को मिटाते हुए समस्त भाषा भाषियों के मध्य परस्पर सौहार्दपूर्ण वातावरण बनाते हुए सबको एकता के सूत्र में बांधे रख सकती है। संस्थान द्वारा प्रतिवर्ष प्रकाशित होने वाली गृह पत्रिका पूसा सुरभि केवल हिंदी में हमारी संस्थान के बढ़ते कदमों और प्रयासों का लेखा–जोखा भर नहीं है, बल्कि यह संस्थान की कृषि तकनीकियों को देश के दूरस्थ एवं सीमांत क्षेत्रों के किसान व जनमानस तक पहुंचाने का प्रयास भी कर रही है।

देश की कृषि वर्तमान समय में अनेक प्रकार की चुनौतियों का सामना कर रही हैं। साथ ही जलवायु में अनेक प्रकार के बदलावों का अनुभव किया जा रहा है। बाढ़ और सूखे की बारंबारता लगातार बढ़ रही है, जो कृषि के विकास में बाधा बन सकती हैं। इन जलवायु परिवर्तनों के प्रभावों से कृषि को बचाना समय की मांग है जिससे कि खाद्य सुरक्षा के साथ किसानों की आय में भी निरंतर वृद्धि हो। इसके लिए किसानों को अनेक प्रकार की नई–नई तकनीकियों को अपनाने की आवश्यकता है, विशेषकर जलवायु परिवर्तन की स्थिति में उपयुक्त तकनीकी को अपनाना।

हमारा उद्‌देश्य भी यही है कि गृह पत्रिका पूसा सुरभि के माध्यम से राजभाषा हिंदी में कृषि अनुसंधानों की ऐसी ही तकनीकियों की जानकारी आमजन तक पहुंचे। साथ ही हिंदी के प्रयोग को बढ़ाना व राजभाषा नीति से संबंधित सभी प्रावधानों का पूर्ण रूप से पालन करना भी हमारा दायित्व है। इसी दिशा में एक सशक्त प्रयास के रूप में हिंदी में प्रकाशित गृह पत्रिका पूसा सुरभि का दसवां अंक प्रकाशित किया गया है। इसके सफल संपादन के लिए डॉ के.वि. प्रभु, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) एवं अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति, श्री केशव देव, उप निदेशक (राजभाषा), संपादन मंडल के सभी सदस्य एवं राजभाषा कार्य से सम्बद्ध अधिकारी/कर्मचारी निश्चित ही बधाई के पात्र हैं।

(ए.के. सिंह)
निदेशक (अति.प्रभार)

दिनांक : 17.10.2017
स्थान : नई दिल्ली

प्राक्कथन

भारत को स्वतंत्र हुए आज 70 वर्ष से अधिक हो गए हैं। कृषि देश की एक अत्यंत महत्वपूर्ण आर्थिक क्रिया है जिसमें आज भी देश के सर्वाधिक लोग रोजगार के अवसर प्राप्त कर रहे हैं। किसानों द्वारा बेहतर फसल उत्पादन एवं अन्य कृषि–आधारित क्रिया–कलापों में आधुनिक कृषि तकनीकियों को अपनाया जा रहा है। यही कारण है कि आज भारत देश अधिकांश फसलों के उत्पादन के मामले में आत्मनिर्भर है। इसके श्रेय का एक मुख्य हिस्सा कृषि संबंधी अनुसंधानों में अनवरत लगे वैज्ञानिकों को भी जाता है जो कृषि उत्पादन से संबंधित विभिन्न समस्याओं का हल निकालने में दिन रात जुटे रहते हैं।

भारत की कृषि और समाज की मुख्य विशेषता विभिन्नता में एकता की है। भारतीय समाज की विविधता न केवल सांस्कृतिक अपितु भाषायी भी है। संविधान में 22 भाषाओं को मान्यता दी है और यहां लगभग 1600 से भी अधिक भाषाएं प्रचलन में है। अतः इस विशाल विविधताओं से भरे राष्ट्र में एकता लाने के लिए निश्चित रूप से किसी ऐसी भाषा विशेष की आवश्यकता है जो सभी भारतवासियों को एकता के एक सूत्र में पिरो सके। जिस प्रकार का कार्य अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अंग्रेजी का है, उसी तरह भारत में राजभाषा हिंदी अधिकांश भारतीयों द्वारा बोली व समझी जाने वाली भाषा के रूप में एक संपर्क भाषा का दर्जा हासिल किए है। गूगल के सी.ई.ओ. द्वारा की गई टिप्पणी के अनुसार भविष्य में कम्प्यूटर के क्षेत्र में तीन ही भाषाओं के प्रतिस्पर्धा में बने रहने की संभावना है, जिसमें हमारी राजभाषा हिंदी भी शामिल है।

कृषि विज्ञान की उन्नति व उसमें होने वाली नित नई प्रगति को जनसाधारण की भाषा हिंदी में उपलब्ध कराने का बहुउपयोगी कार्य हमारी यह राजभाषा पत्रिका 'पूसा सुरभि' बखूबी निभा रही है। पत्रिका के प्रकाशन के लिए हम संस्थान के निदेशक (अतिरिक्त प्रभार) और उप महानिदेशक (कृ. प्रसार) भा.कृ.अ.प. डॉ ए.के. सिंह का तहे दिल से आभार प्रकट करते हैं जिनके उत्कृष्ट मार्गदर्शन व दिशा निर्देशन से इस पत्रिका के 10वें अंक का प्रकाशन संभव हो सका है। पत्रिका के इस अंक के प्रकाशन के लिए आधारभूत सामग्री का संकलन व कुशल संपादन हेतु मैं संस्थान के उप निदेशक (राजभाषा) श्री केशव देव, सहायक निदेशक (राजभाषा) कु. सुनीता का आभार व्यक्त करना चाहूंगा जिनके निरंतर प्रयासों से इसके प्रकाशन को मूर्त रूप प्रदान किया गया। साथ ही पत्रिका को और अधिक समुन्नत बनाने के लिए संपादन मंडल के सदस्यों खासकर डॉ राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, डॉ दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान संभाग एवं श्री राजेन्द्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी, कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई का भी आभार व्यक्त करता हूं जिन्होंने पत्रिका के संपादन व प्रकाशन हेतु अपने बहुमूल्य सुझाव व सेवाएं प्रदान की। इस अंक में शामिल किए गए लेखों के लेखकों के प्रति भी आभार, जिनके द्वारा प्रस्तुत की गई सामग्री से यह प्रकाशन सफलतापूर्वक संभव हुआ।

(के.वि. प्रभु)
संयुक्त निदेशक (अनुसंधान)

दिनांक : 17.10.2017
स्थान : नई दिल्ली

संपादकीय

राजभाषा हिंदी भारत की सबसे बड़ी, सर्वस्वीकृत और भारतीय जनमानस की आत्मा की भाषा है, विश्व स्तर पर इसकी निरंतर स्वीकारोक्ति बढ़ रही है। इसलिए मजबूरन कॉरपोरेट को भी इसे अपनाना पड़ा है और आज इंटरनेट के युग में वैश्विक स्तर पर तो यह अपनी धाक जमाये हुए है। हमारा संस्थान भी कर्तव्यनिष्ठ भावना से राजभाषा हिंदी की निरंतर प्रगति के लिए संकल्पित है। आपके हाथों में भा. कृ.अनु.सं. (पूसा) की गृह पत्रिका पूसा सुरभि का दसवां अंक सौंपते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। यह गृह पत्रिका संस्थान के कार्यकलापों का आईना भर नहीं है अपितु इसके प्रकाशन का उद्‌देश्य, हमारे संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा कृषि क्षेत्र में किए गए अनुसंधान कार्यों को देश के किसान एवं कृषि से जुड़े आमजन तक पहुंचना भी है ताकि वे अपने खेती–बाड़ी संबंधी कार्यों में इसका प्रयोग कर, देश के कृषि उत्पादन में बढ़ोतरी के साथ अपनी आय में वृद्धि कर सकें।

इस पत्रिका में राजभाषा संबंधी लेखों का ही संकलन मात्र न होकर कृषि विज्ञान को जनमानस की भाषा हिंदी में प्रस्तुत कर उसके लोकप्रियकरण का प्रयास भी है। पत्रिका के तकनीकी एवं विविधा खंड में संस्थान के वैज्ञानिकों/तकनीकी वर्ग द्वारा लिखे गए लेख अत्यंत सरल भाषा में होने के कारण किसानों व जनसामान्य के लिए सहज व बोधगम्य हैं। पत्रिका के राजभाषा खंड में राजभाषा संबंधी लेखों का समावेशन है। जिसके अंतर्गत राजभाषा की उन्नति पर प्रकाश डालता हुआ एक लेख, मनोरंजन ढंग से आम के फल के फायदे बताती हुई एक कविता तथा संस्थान के क्षेत्रीय केन्द्रों में राजभाषा हिंदी के लिए किए जा रहे कार्यों–यथा कार्यशालाएं, हिंदी दिवस, हिंदी पखवाड़ा, हिंदी मास इत्यादि की जानकारी दी गई है। इस अंक में एक नई परंपरा प्रारंभ करते हुए इस बार कृषि जगत की जानी मानी एक हस्ती डॉ. बी.पी. पाल के जीवन परिचय को भी शामिल किया गया है जिसमें उनके भारत की कृषि में दिए गए बहुमूल्य योगदान को संकलित करने का प्रयास किया गया है। अंत में विभिन्न सुधी पाठकों द्वारा प्राप्त प्रतिक्रियाओं को उद्‌गार शीर्षक के साथ इस अंक में स्थान दिया गया है।

पूसा सुरभि पत्रिका के निरंतर प्रकाशन की अनुमति और राजभाषा कार्यान्वयन के लिए सफल दिशा निर्देशों हेतु संस्थान के निदेशक और संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) एवं अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति के प्रति हम अत्यंत आभारी हैं। पत्रिका के इस अंक के लिए सामग्री उपलब्ध कराने वाले सभी वैज्ञानिकों, तकनीकी और अन्य कर्मिकों के प्रति भी हम आभारी हैं। साथ ही सामग्री को मूर्तरूप देने के लिए संपादन मंडल के सभी सदस्यों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हैं, जिन्होंने सामग्री का सूक्ष्म रूप से संपादन कार्य का निष्पादन किया, जिसके बिना यह प्रकाशन संभव नहीं था। हिंदी अनुभाग की सहायक निदेशक (राजभाषा) एवं सभी साथियों का विशेष आभार, जिनके अथक सहयोग से यह प्रकाशन सफल हुआ।

यह अंक आपको कैसा लगा, के बारे में हमें आपके बहुमूल्य विचारों की अपेक्षा रहेगी। अंत में हम पूसा सुरभि से जुड़े सभी लोगों के प्रति पुनः आभार।

(केशव देव)
उप निदेशक (राजभाषा)

विषय सूची

आमुख (iii)

प्राक्कथन (v)

सम्पादकीय (vii)

तकनीकी खण्ड

1. डॉ. बी.पी. पाल : भारतीय कृषि के भीष्म पितामह 3
   – कुमार दुर्गेश, शैलेन्द्र कु. झा, रेखा जोशी एवं अशोक कुमार सिंह
2. सोयाबीन : एक चिकित्सीय आहार 6
   – मोनिका जौली, वेदा कृष्णण, आशीष मराठे, उर्वी मल्होत्रा एवं अर्चना सचदेव
3. भारत में तिलहन उत्पादन की दशा एवं दिशा 9
   – विजय पुनिया, अरविन्द कुमार एवं आर.एस. बाना
4. उन्नत बीज–फसल उत्पादन का मूल आधार 18
   – रमेश चन्द, ज्ञानेन्द्र सिंह, संजय कुमार, चन्दू सिंह, विपिन कुमार, राजेश कुमार एवं किरन ठाकुर
5. आमदनी बढ़ोतरी हेतु नई कृषि तकनीकियां एवं अवसर 24
   – अजय कुमार, रणबीर सिंह एवं अनिल कुमार मिश्र
6. अत्यंत विषम परिस्थितियों वाले ए1जोन के लिए बाजरे की संस्तुत किस्में 30
   – एस.पी. सिंह, मुकेश शंकर एस., तारा सत्यवती एवं युगल किशोर काला
7. बदलते मौसम में कृषि उत्पादन में बढ़ोतरी के लिए वेब पेज तथा एस.एम.एस. द्वारा दी गई.....कृषि सलाह का महत्व 34
   – अनन्ता वशिष्ठ एवं पी. कृष्णन
8. केंचुआ खाद (वर्मी–कंपोस्ट) 38
   – बलजीत कौर, तेजपाल सिंह यादव एवं ओम प्रकाश जोशी
9. फसलों के उत्पादन मे बोरॉन का महत्व 41
   – मुकुन्द कुमार, टी.आर. दास एवं सी.बी. सिंह
10. कृषक के अदृश्य शत्रु पादप परजीवी सूत्रकृमि एवं उनका प्रबंधन 44
    – राशिद परवेज एवं उमा राव
11. वर्षा जल संग्रहण की सस्ती, सुगम एवं टिकाऊ विधिः खेत तालाब (फार्म पौंड) 47
    – ए.के. मिश्रा, रविन्द्र कौर, रणबीर सिंह एवं विश्वनाथ प्रसाद
12. भविष्य की खेतीः रूफटॉप फार्मिंग/छत पर खेती 52
    – रणबीर सिहं, अनिल कुमार मिश्र एवं विश्वनाथ प्रसाद
13. सब्जियों के उत्पादन में जैव उर्वरकों का संभावित योगदान 57
    – सीमा सांगवान, एम.एस. राठी, के. अन्नापूर्णा, संगीता पॉल, जोगेन्द्र सिंह एवं यवोने एंजल लिंगदोह

14. उद्यमिता हेतु फलों और सब्जियों का न्यूनतम प्रसंस्करण 62
– श्रुति सेठी, राम रोशन शर्मा, सुनीता सिंह एवं बिंदवी अरोड़ा

15. टमाटर के नए कीट, टूटा एब्सोलूटा की निगरानी एवं त्वरित कार्यवाही योजना 67
– पी.आर. शशांक, सचिन एस. सुरोशे, नरेश एम. मेश्राम एवं जे.पी. सिंह

16. कांजीः तुरंत पीने योग्य प्रोबायोटिक पेय 70
– प्रेरणा नाथ और एस.जे. काले

17. ऐसे बचाएं अमरूद को 74
– राम रोशन शर्मा, अमित गोस्वामी, ए. नागाराजा एवं मनीष श्रीवास्तव

18. आंवले के प्रसंस्करण द्वारा ग्रामीण व्यवसाय एवं रोजगार की संभावनाएं 79
– शालिनी गौड़ रुद्रा, अल्का जोशी, ज्ञानेन्द्र सिंह एवं विद्या राम सागर

19. कीवी प्रवर्धन की उत्तम तकनीक 85
– अरुण कुमार शुक्ला, कल्लोल कुमार प्रमाणिक, संतोष वाटपाड़े, जितेन्द्र कुमार एवं सुनील कुमार

20. सजावटी तथा पुष्पीय फसलों में शुष्कन द्वारा मूल्यवर्धन 88
– नमिता, ऋतु जैन, सपना पंवर, एस.एस. सिंधु एवं रोहित पिंडर

21. भारतीय उप उष्णकटिबन्धीय कृषि परिप्रेक्ष्य में सूत्रकृमि का फैलाव व महत्व 95
– हरेन्द्र कुमार, पंकज एवं जगन लाल

विविधा

1. सस्य विज्ञान संभाग – एक परिचय 101
– दिनेश कुमार, सीमा सेपट एवं अनिता कुमावत

2. प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना – किसानों का रक्षा कवच 107
– मुरलीधर मीना, हरनारायण मीना, सुरेन्द्र सिंह

3. शीत भंडारण – दशा एवं दिशा 113
– विजय पाल, राकेश पाण्डे, आर. ऐजेकिल, प्रमोद कुमार, अतर सिंह एवं आर.सी. मीणा

4. कृषि अभियांत्रिकी में रोजगार एवं शिक्षा 116
– अनिल कुमार मिश्र एवं रणबीर सिहं

5. किसानों की आय दुगनी कैसे होः सफलता की कहानी 121
– प्रतिभा जोशी, नीलम पटेल, नफीस अहमद, निशि शर्मा, श्रुति सेठी, गीतान्जलि जोशी व जे.पी. शर्मा

6. आम सबसे खास 127
निमिशा शर्मा एवं संजय कुमार सिंह

राजभाषा खण्ड

1. हिंदी की भाषा से राजभाषा तक का सफर – *किशवर अली* 131
2. राजभाषा प्रगति रिपोर्ट 2016–17 136
3. हिंदी चेतना मास एवं हिंदी वार्षिकोत्सव 139
4. पुरस्कार व सम्मान 144

तकनीकी खण्ड....

डॉ. बी.पी. पाल : भारतीय कृषि के भीष्म पितामह

कुमार दुर्गेश, शैलेन्द्र कु. झा, रेखा जोशी एवं अशोक कुमार सिंह

आनुवंशिकी संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

बेंजामिन पियरे पाल

(26 मई 1906 – 14 सितम्बर 1989)

डॉ. बेंजामिन पियरे पाल (बी.पी.पाल) का जन्म पंजाब के मुकुन्दपुर गाँव में 26 मई, सन् 1906 को माता श्रीमती इन्दर देवी एवं पिता श्री डॉ. राला रामपाल के घर नौवीं एवं अंतिम संतान के रूप में हुआ। उनके बचपन का नाम ब्रह्मदास पाल था। इनके जन्म के बाद इनके पिता चिकित्सा अधिकारी के रूप में बर्मा (म्यांमार) चले गए, और यहीं उनका लालन–पालन एवं शिक्षा–दीक्षा हुई। उनकी प्रारंभिक शिक्षा मैओमी (म्यांमार) के सेंट माइकल स्कूल में हुई, जहां उनका नाम बदलकर बेंजामिन पियरे पाल रखा गया। इनके विद्यालय के प्रसिद्ध गुलाब उद्यान ने इनका ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया और इस आकर्षण ने डॉ. पाल को सेवाकाल और सेवानिवृत्ति के बाद भी गुलाब सुधार एवं प्रजनन में कार्य करने के लिए प्रेरित किया। वे अपनी कक्षाओं में सदैव प्रथम स्थान पाते रहे और अनेक पुरस्कार एवं छात्रवृत्तियां प्राप्त कीं।

सन् 1929 में डॉ. पाल ने रंगून विश्वविद्यालय से वनस्पति शास्त्र में एम.एस.सी. की दीक्षा ली, जहां उन्हें विज्ञान की सभी धाराओं में शीर्ष अंक प्रात हुए। यहां उन्हें छात्रवृत्ति भी मिली, जिसके तहत डॉक्टरेट की उपाधि के लिए कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, लंदन गए। जहां उन्होंने सर रोलैंड बिफन एवं फ्रैंक इग्लडोउ के सानिध्य एवं मार्गदर्शन में "गेहूं में संकर ओज के उपयोग की संभावनाओं" पर प्रारंभिक अध्ययन किया।

मार्च 1933 में इन्होंने सहायक धान अनुसंधान अधिकारी के रूप में बर्मा के कृषि विभाग में अपना योगदान दिया। अक्टूबर 1933 में वे इम्पीरियल कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा बिहार में आर्थिक वनस्पति शास्त्री के रूप में नियुक्त हुए। तत्पश्चात् सन् 1936 में संस्थान के नई दिल्ली स्थानांतरित होने के बाद वे भी नई दिल्ली आ गए।

डॉ. पाल के अनगिनत योगदानों को संक्षेप में पांच भागों में विभाजित किया जा सकता है :–

1. अनुसंधान
2. शिक्षा
3. प्रसार
4. संस्था निर्माण एवं
5. अंतरराष्ट्रीय सहयोग

इनमें सें प्रत्येक क्षेत्र को प्रासंगिक एवं उत्कृष्ट बनाने के लिए उन्होंने अथक प्रयास किए।

गेहूं आनुवंशिकी एवं प्रजनन के क्षेत्र में पाल ने अद्भुत योगदान दिया। जिसमें उन्होंने मुख्य रूप से गेहूं में रतुआ रोग के प्रतिरोध क्षमता वाली किस्मों का विकास किया है। डॉ. पाल का यह मत कि रतुआ रोग गेहूं में निम्न उत्पादकता का प्रमुख कारण है, सामयिक था। उन्होंने गेहूं की उन्नत किस्मों की श्रृंखला जैसे की एन.पी.–700 और एन.पी.–800 (एन.पी.–न्यू पूसा) का विकास किया। सन् 1954 में एन.पी.–809 नामक किस्म का विकास इनके नेतृत्व में हुआ जो सभी प्रकार के रतुआ रोगों के लिए प्रतिरोधी होने के साथ–साथ अन्य दूसरे रोगों के लिए भी प्रतिरोधी थी। इस प्रभेद के कारण गेहूं उत्पादन को बढ़ाने में मदद मिली। गेहूं की एक दूसरी किस्म एन.पी.–825 भी इनके समय में आई जो कि सूखे में अच्छे उत्पादन के लिए प्रसिद्ध हुई। उन्होंने गेहूं में जननद्रव्य बैंक की भी स्थापना की एवं गेहूं के प्रजनन में जिनोम विश्लेषण विधि के उपयोग की भी शुरुआत की। उन्होंने फसलों की

विभिन्न किस्मों के नामकरण की जटिल समस्या को सुलझाने की विधि भी सुझाई। डॉ. पाल ने गुलाब एवं बौगेनविलिया के सुधार एवं प्रजनन में भी अपनी रूचि दिखाई एवं उन्होंने गुलाब की 100 से ज्यादा किस्में विकसित की। इस अद्भुत योगदान के कारण हमेशा उन्हें पुष्प प्रेमियों के बीच याद रखा जायेगा। "दि रोज – इट्स ब्यूटी एण्ड इट्स सांइस और ब्यूटीफुल क्लाइम्बर्स" इनकी प्रमुख रचनाओं में से एक है। आजीवन ब्रह्मचारी रहे, डॉ. पाल को हम भारत में 'गुलाब प्रजनन' के जनक के रूप में भी जानते हैं। गेहूं और धान में संकर ओज के उपयोग से नए किस्मों के विकास की विचार धारा की आधार शिला भी डॉ. पाल ने रखी।

उत्पादकता की टिकाऊ प्रगति में जैविक विविधता के महत्व को समझते हुए उन्होंने वर्ष 1937 में 'एग्रीकल्चर एण्ड लाइव स्टॉक, इंडिया' नामक पत्रिका में 'सर्च फॉर न्यूजीन' आलेख लिखा जो कि आज भी पादप सुधार का मुख्य आधार है। इसमें उन्होंने पादप सुधार में विशाल जैविक विविधता के उपयोग को बढ़ावा देने पर बल दिया। उनकी इसी दूरदर्शिता के कारण भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (आई. ए.आर.आई.) में 'प्लांट इंट्रोडक्शन अनुभाग' की स्थापना हुई, जिसमें आनुवंशिकी अन्वेषण एवं जननद्रव्य संग्रह पर बल दिया गया। बाद में 1974 में इसके महत्व को देखते हुए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आई.सी.ए.आर.) के अंतर्गत एक अलग संस्थान 'राष्ट्रीय पादप आनुवंशिकी संस्थान ब्यूरो' की स्थापना हुई।

आलू, टमाटर एवं तम्बाकू समेत विभिन्न फसलों में योजनाबद्ध प्रजनन प्रयास की भी शुरुआत इनके नेतृत्व में हुई। इन्होंने चयन प्रक्रियाओं में सांख्यकीय विधियों के प्रयोग पर बल के साथ महान वैज्ञानिक डॉ. के.सी. मेहता के साथ भी साझेदारी की। उन्होंने भारत में कृषि विश्वविद्यालय में प्रशिक्षित मानव संसाधनों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर उत्कृष्ट पी.एच.डी. प्रशिक्षित छात्रों को भविष्य में अनुसंधान के क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान करने के लिए सन् 1958 में आई.ए.आर.आई. में पी.जी. स्कूल की स्थापना की जिसे तत्पश्चात् मानित विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता मिली।

सन् 1950 में डॉ. पाल स्वतंत्र भारत में आई.ए.आर. आई. के प्रथम निदेशक बने। 1950 से मई 1965 तक उनके कार्यकाल में आई.ए.आर.आई. ने शिक्षा अनुसंधान एवं प्रसार में नई बुलंदियों को छुआ। डॉ. स्वामीनाथन के शब्दों में "डॉ. पाल ने खुद माना था कि 1933 से 1965 तक आई.ए.आर.आई. में व्यतीत उनका समय व्यक्तिगत एवं पेशेवर जीवन का सबसे उम्दा समय था।" तदोपरांत मई 1965 में, पुनर्गठित आई.सी. ए.आर. के पहले महानिदेशक के रूप में डॉ. पाल ने कार्यभार संभाला एवं हरित क्रांति की सफल शुरूआत की। "डॉ. पाल का यह मानना था कि बुनियादी शोध के बिना, व्यावहारिक अनुसंधान में प्रगति लम्बे समय तक नहीं रह सकती है" और इसी वजह से बाद में चलकर आनुवंशिकी संभाग की स्थापना हुई। डॉ. पाल ने समस्याओं को सुलझाने वाले अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए बहु–आयामी, बहु–संस्थागत, 'अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना' जैसी संस्थागत संरचना विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। जिसका नेतृत्व डॉ. ए.बी. जोशी ने किया।

1965–72 तक का इनका कार्यकाल भारतीय कृषि में नए युग की शुरुआत के रूप में देखा जाता है। 1972 में आई. सी.ए.आर. से सेवानिवृत्ति के बाद उन्होंने पर्यावरण सुरक्षा के क्षेत्र में भी अपना समय दिया और वे 'राष्ट्रीय पर्यावरण सुरक्षा एवं समन्वय समिति' के पहले अध्यक्ष भी बने। उनकी पेंटिंग में रुचि बाल्य काल से ही सदैव बनी रही। वे आगे चलकर अखिल भारतीय ललित कला एवं शिल्प संस्थान के कई वर्षों तक अध्यक्ष रहे।

डॉ. पाल का घर सभी के लिए खुला था। वे युवा एवं पुराने शोधकर्त्ताओं के लिए दोस्त, दार्शनिक एवं मार्गदर्शक बने रहे। वे कई अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान संस्थाओं के न्यासी (ट्रस्टी) भी रहे। उन्होंने अनेक विकासशील देशों को कृषि संस्थागत ढांचा खड़ा करने में मदद भी की। उनकी वैज्ञानिकता को सम्मानित करते हुए सन् 1972 में 'रॉयल सोसाइटी ऑफ लंदन' ने इन्हें अपना सदस्य बनाया। 1975–76 में ये 'भारतीय विज्ञान अकादमी' के निर्वाचित अध्यक्ष रहे। डॉ. पाल ने 1941 में 'इंडियन सोसाइटी ऑफ जेनेटिक्स एण्ड प्लांट ब्रिडिंग' की

स्थापना की एवं 25 वर्षों तक 'इंडियन जरनल ऑफ जेनेटिक्स एंड प्लांट ब्रीडिंग' के सम्पादक भी रहे। उनके वैज्ञानिक एवं सामाजिक जीवन में योगदान के लिए उन्हें सन् 1958 में पद्म श्री, 1968 में पद्म भूषण एवं 1987 में पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया। भारत सरकार ने सन् 2008 में डॉ. पाल द्वारा कृषि विज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान के लिए तथा उनकी याद को अविस्मरणीय बनाने के लिए उनके नाम पर एक डाक टिकट भी जारी किया।

डॉ. पाल ने अपनी सारी सम्पति भा.कृ.अ.संस्थान को दान देकर 14 सितम्बर 1989 को इस महात्मा ने महाप्रयाण किया और इसके साथ ही भारतीय कृषि विज्ञान के एक चमकते सितारे का अन्त हो गया। डॉ. स्वामीनाथन के अनुसार–'**दि रोज – इट्स ब्यूटी एण्ड इट्स साइंस**' उनके व्यक्तित्व की ज्वलंत अभिव्यक्ति है। उनका जीवन सौन्दर्य प्रेम, गरिमा, शिष्टाचार एवं करुणा से परिपूर्ण था। उन्होंने अपने समर्पण, वैज्ञानिक नव विचारों एवं नई खोजों से न सिर्फ साथी वैज्ञानिकों में प्रशंसा पाई अपितु राजनीतिज्ञों, नीति निर्धारकों एवं किसानों के बीच भी काफी लोकप्रियता प्राप्त की। भा.कृ.अ.संस्थान स्थित प्रसिद्ध गुलाब उद्यान एवं सभागार इनको समर्पित करते हुए इनके नाम पर रखा गया है। उनका जीवन आज नई पीढ़ी के लिए एक आदर्श एवं प्रेरणाप्रद है।

स्रोत : मुख्य रूप से प्रो. एम.एस. स्वामीनाथन की दो रचनाएं :–

i. Benjamin Peary Pal: An obituary by M. S. Swaminathan (1990), Current Science, Vol. 59, pp. 237-238.

ii. Benajamin Peary Pal: A tribute by M.S. Swaminathan, (2007) pub. in ed. Search for New Genes by V.L. Chopra, R. P. Sharma, S.R. Bhat & B. M. Prasanna, published by Academic Foundation.

भारतीय भाषाएं नदिया हैं और हिन्दी महानदी। हिन्दी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाने वाली भाषा है। हमें इस भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करना चाहिए। मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि हिन्दी के बिना हमारा काम नहीं चल सकता।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

सोयाबीन : एक चिकित्सीय आहार

मोनिका जौली, वेदा कृष्णण, आशीष मराठे, उर्वी मल्होत्रा एवं अर्चना सचदेव

जैव रसायन संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

विश्वभर में, विशेष रूप से एशिया के देशों में सोयाबीन का व्यापक रूप से उपभोग किया जाता है। वैश्विक स्तर पर, कुल सोयाबीन फसल का 38% संयुक्त राज्य अमेरिका में उगाया जाता है, जिसके पश्चात् ब्राजील (25%), अर्जेन्टीना (19%), चीन (7%), भारत (3%), कनाडा (2%) एवं परागुए (2%) का स्थान है। सोयाबीन का मूल स्थान चीन है। सोयाबीन उत्पादों के विश्व में मुख्य उत्पादक देश अमेरिका, ब्राजील, अर्जेन्टीना एवं भारत है। आहार–प्रोटीन एवं तेल के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में सोयाबीन का विस्तृत रूप से उपयोग किया जाता है। सोयाबीन {*ग्लाईसीन–मैक्स मेरिल*} एक आदर्श फलीदार फसल है जिसकी विश्वभर में मानव–उपभोग अथवा पशु चारे के लिए व्यापक रूप से खेती की जाती है। इसके अतिरिक्त प्रोटीन, तेल, कार्बोहाइड्रेट्स, आहार–रेशों, विटामिनों एवं खनिजों के लिए अनेक प्रयोगशालाओं एवं औद्योगिक क्षेत्रों में इसके तेल, प्रोटीन एवं पादप–रासायनिक अंश संबंधी कार्यात्मक गुणों में परिवर्तन कर उन्हें इष्टतम बनाने के लिए लम्बे समय से अनुसंधानकर्त्ता इस दिशा में कार्य कर रहे हैं। सोयाबीन, प्रोटीन का एक उत्कृष्ट स्रोत है और इसमें विद्यमान आइसोफ्लेवोन और फोलिक अम्ल इसे चिकित्सीय आहार अनुप्रयोगों की दृष्टि से बहुउपयोगी फसल बनाते हैं और इसलिए आहार एवं चारे के लिए इसका काफी उपयोग होता है। पोषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण फसल होने के कारण अपने पौषणिक गुणों के कारण सोयाबीन लोकप्रिय बनती जा रही है क्योंकि इसमें प्रमुख अमीनो अम्ल एवं द्वितीयक उपापचयी जैसे कि आइसोफ्लेवोन, ऐपोनिन, फायाटिक अम्ल, फायटोस्टेरोल, ट्रिप्सिन संदमक एवं पेप्टाइड विद्यमान होते हैं। सोयाबीन प्रोटीन का एक बहुत अच्छा स्रोत है और अन्य फलीदार फसलों की तरह आहारीय आइसोफ्लेवोन का एकमात्र स्रोत है।

सोयाबीन एवं सोयाबीन के आटे में प्रोटीन अंश लगभग 40–50% होता है। सोयाबीन एवं उसके आटे में विद्यमान उच्च प्रोटीन अंश उसे एक प्रोटीन–समृद्ध आहार या चारा बनाता है। अध्ययनों के परिणाम दर्शाते हैं कि हमारी प्रोटीन संबंधी आवश्यकता को पूरा करने के लिए अच्छी तरह से प्रसंस्कृत सोया प्रोटीन एक सम्पूर्ण स्रोत हो सकता है। एफ.डी.ए. का दावा है कि 25% ग्रा. सोया प्रोटीनयुक्त आहार, न्यून घनत्व लाइपोप्रोटीन (एल.डी.एल.) के स्तर को 10% तक कम करता है और हृदय–स्वास्थ्य के लिए इसका उल्लेखनीय योगदान होता है। हृदय–सुरक्षा का निश्चित कारण तो स्पष्ट नहीं है

किन्तु सोयाबीन में सैकड़ों सुरक्षात्मक तत्व विद्यमान होते हैं। आहार–स्रोत के रूप में, सोयाप्रोटीन में लायसीन की अधिकता होती है। किण्वन होने से प्रोटीन एवं अमीनो अम्ल अंश में बढ़ोतरी होती है और प्रोटीन का छोटे कार्यात्मक पेप्टाइड्स में विखंडन में विद्यमान कार्बोहाइड्रेटस का पाचन कर उसका अपनी वृद्धि के लिए उपयोग करते हैं। शुष्क पदार्थ में कमी और सूक्ष्मजीवों के भार में बढ़ोतरी अनुपात के परिणामस्वरूप प्रोटीन अंश में बढ़ोतरी होती है। *स्यूडोमोनस सेरेविसी* के साथ सोयामील को किण्वण होने पर, इसके प्रोटीन स्तर में 47 प्रतिशत से 58 प्रतिशत की बढ़ोतरी होती है। सोयाबीन के किण्वन में प्रयुक्त सूक्ष्मजीव, किण्वन प्रकिया के दौरान प्रोटिएज़ एंजाइम का स्राव करते हैं। किण्वन प्रक्रिया के दौरान प्रोटिन का निम्नीकरण होता है। इसलिए सोयाबीन के किण्वन द्वारा बने उत्पादों का पाचन आसानी से होता है।

सोयाबीन के उत्पाद

तेल : सोयाबीन में लगभग 19% तेल होता है जिसमें प्रमुख घटक ट्राइग्लिसराइड्स होते हैं। सोयाबीन के तेल में बड़ी मात्रा में असंतृप्त वसा अम्ल होते हैं अर्थात कुल वसा अम्लों का 51% लिनोलिक अम्ल एवं 8% एल्फा–लिनोलिक अम्ल, स्टीयरिक अम्ल 4%, पामीटिक अम्ल 10%, ओलिक अम्ल 23% होता है। ये उपापचयी पाथवेलज़ के नियमन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं तथा पोषण एवं शरीर क्रिया विज्ञान संबंधी महत्वपूर्ण कार्य करते हैं।

असामान्य लिपिड स्तर का हृदय–वाहिका संबंधी हृदय रोग के जोखिम को उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण योगदान होता है जो एक अत्यन्त गंभीर स्वास्थ्य समस्या है। रक्त में, कॉलेस्ट्रॉल के बढ़े हुए स्तर को कम करने के लिए, आहार संबंधी अनेक उपचार खोजे जा चुके हैं। इसके लिए सोया प्रोटीन, घुलनशील रेशे तथा पादप स्टेरॉल/एस्टरयुक्त कृत्रिम मक्खन (मार्गरीन) नवीन, उत्कृष्ट आहार–घटक हैं। खून में एल.डी.एल. एवं एच.डी.एल. का अनुपात, एल.डी.एल.: एच.डी.एल., हृदय–संबंधी घटनाओं का पूर्वानुमान देता है। अध्ययनों से पता चला है कि आइसोफ्लेवॉन्स के उच्च, नियत स्तर, बीजपत्र सोया रेशा एवं सोया फॉस्फोलिविड (एबेको एवं ऐबेलॉन) युक्त नवीन सोयाबीन उत्पादों का उपभोग करने पर एल.डी.एल. : एच.डी.एल. अनुपात में 27% तक की महत्वपूर्ण कमी पाई गई। अध्ययन के दौरान, घुलनशील आहारीय रेशों जैसे कि, जई की भूसी से सिलियम एवं बीटा ग्लूकॉन का एल.डी. एल–कॉलेस्ट्राल स्तरों पर परिवर्तनशील प्रभाव देखा गया है। इस प्रकार से सोयाबीन–आधारित ये नए आहार–प्रतिपूरक, हृदय–वाहिका से जुड़े खतरे को कम करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

कार्बोहाईड्रेट्स : सोयाबीन में 35% कार्बोहाईड्रेट्स, पॉलीसैकेराइड्स जैसे कि स्टेकायोज (4%) एवं रैफिनोज़ (1.1%) होते हैं। स्टेकायोज, एक गेलेक्ट्रोज़–ग्लूकोज–फ्रक्टोज़ संरचना वाला एक ट्रायोज़ है जबकि रैफिनोज़ एक गेलेक्ट्रोज़–ग्लूकोज़–फ्रक्टोज़ संरचना वाला एक ट्रायोज़ है। पॉलीसैकेराइड्स मुख्यतः अघुलनशील, आहारीय रेशे के बने होते हैं। सोयाबीन कर्ड रिफ्यूज़ (भिंडी) में गेलेक्टुरोनिक अम्ल सहित घुलनशील पॉलीसैकेराइड्स होते हैं। इसके अतिरिक्त एक आहारीय रेशा प्रतिपूरक के रूप में उपयोग करने के लिए विभिन्न आहारों के भौतिक गुणों में परिवर्तन करने हेतु घुलनशील पॉलीसैकेराइड्स का उपयोग होता है।

विटामिन एवं खनिज : अनाजों की तुलना में, सोयाबीन विटामिन 'बी' का अच्छा स्रोत है। हालांकि इसमें 'बी 12' एवं विटामिन 'सी' नहीं होता। सोयाबीन के तेल में टोकोफेरॉल भी विद्यमान होते हैं जो बहुत अच्छे प्राकृतिक प्रतिऑक्सीकारक (एंटीऑक्सिडेंट) हैं। सोयाबीन में 5% खनिज भी होते हैं। इसमें अपेक्षाकृत पोटेशियम, फॉस्फोरस, कैल्सियम, मैगनीशियम एवं लौह अधिक मात्रा में होता है, जो लौह तत्व में बढ़ोतरी करता है। सोयाबीन, फोलिक अम्ल का अच्छा स्रोत है और इसमें शुष्क पदार्थ आधार पर 2500 माइक्रो ग्राम प्रति किलोग्राम फोलिक अम्ल होता है। अनेक प्रकार की स्वास्थ्य–समस्याओं यथा एनीमिया, पोषक तत्वों का कुअवशोषण, नवजात शिशुओं में मस्तिष्क का विकास, अलजाइमर रोग तथ वृद्धावस्था में सुनाई कम देना जैसी समस्याओं के उपचार में फोलिक अम्ल महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसकी उपस्थिति के कारण, सोयाबीन–समृद्ध आहार का पौषणिक महत्व बढ़ जाता है।

सोयाबीन से बने आहार, आइसोफ्लेवोनूस, पॉलीफीनोल से बने पादप रसायन हैं जैसे कि, चाय से एपिगैल्लसेकरेचिन गैलेट, करी से कुर्क्यमिन एवं सोया आइसोफ्लेवोनूस और इनमें कैंसररोधी रासायनिक गुण विद्यमान होते हैं। सोयाबीन के मुख्य आइसोफ्लेवोन, जेनिस्टीन, डायडज़ीन एवं बायोचानिन, प्रोस्टेट कैंसर कोशिकाओं की वृद्धि का संदमन करते हैं।

आजकल प्रोटीन आधारित उत्पादों हेतु एक वानस्पतिक स्रोत के रूप में सोयाबीन प्रोटीन महत्वपूर्ण होती जा रही है जिनमें आवश्यक अमीनो अम्ल प्रचुर मात्रा में होते हैं। सोयाबीन के उत्पादों को अकिण्वित एवं किण्वित उत्पादों में विभक्त किया जाता सकता है। अकिण्वित उत्पादों में सोयादूध, टोफू, अंकुरित सोयाबीन, भुना हुआ सोयाबीन, सोयानट, सोयाआटा, अपरिपक्व सोयाबीन एवं पकाया हुआ साबूत सोयाबीन सम्मिलित हैं। किण्वित ओरिएन्टल सोयाबीन उत्पादों में सोयपेस्ट, सोया सॉस, टेम्पेह, नाट्टों, सोया नगेट्स एवं पेस्टटोफू सम्मिलित हैं। किण्वित सोयाबीन आटे से अत्यधिक पोषक टोफू तैयार किया जाता है। तेल–निष्कर्षण के पश्चात् अवशिष्ट सोया मील की पर्त से प्रायः चार उत्पाद (बनावटदार सोया आटा, सोयाप्रोटीन कंसन्ट्रेट एवं सोया प्रोटीन विलय) प्राप्त होते हैं। बनावटदार सोया आटे का उपयोग बेकरी उत्पादों, माँस उत्पादों एवं नवजात शिशु आहार आदि में किया जा सकता है। सोया प्रोटीन कंसन्ट्रेट एवं सोया प्रोटीन विलय का उपयोग शिशु आहार, बेकरी उत्पादों, अनाजों, मीट आदि में किया जा सकता है। घुलनशील सोयाबीन पॉलीसैकेराइड्स एक दवा बनाने वाले कारक, स्थिरता प्रदान करने वाले पदार्थ एवं इमल्सीफायर के रूप में कार्य करता है और उसमें एक अच्छे आसंजक (जोड़ने वाले) के गुण होते हैं।

सोयाबीन एक न्यूट्रास्यूटिकल आहार है जो रोगों और विकारों से बचाव करने में सहायता करता है और इसका यह गुण इसे कार्यात्मक आहारों एवं आहार–पूरकों से भिन्न बनाता है।

कुछ दीर्घकालीन रोगों के कम आपतन से भी सोयाबीन–उपभोग का संबंध है। चिकित्सीय अध्ययन भी दर्शाते हैं कि सोया प्रोटीन के अंतर्ग्रहण से हृदय–शिरा रोग का जोखिम कम हो जाता है। वर्ष 1999 में यू.एस.एफ.डी.ए. द्वारा सोया प्रोटीनयुक्त आहारों पर यह लेबल लगाने का अनुमोदन कर दिया था कि इनसे हृदय–शिरा संबंधी हृदय–रोग से बचाव होता है। इसके बाद यूनाइटेड किंगडम, ब्राजील, दक्षिणी अफ्रीका, फिलीपींस, इंडोनेशिया, कोरिया एवं मलेशिया में भी सोया प्रोटीन हेतु इसी प्रकार का अनुमोदन किया गया। सोयाबीन उद्योग अब लोकप्रिय बनता जा रहा है और भविष्य में सोयाबीन से जुड़े उत्पादों एवं प्रक्रियाओं में नवोन्मेषणों के पेटेंट्स की बडी संभावनाएँ हैं। अन्य चिकित्सा कारकों की तुलना में सोयाबीन काफी सस्ता है और उल्लेखनीय परिणाम देता है।

स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियों के समाधान हेतु सोयाहार

भारत में तिलहन उत्पादन की दशा एवं दिशा

विजय पुनिया[1], अरविन्द कुमार[2] एवं आर.एस. बाना[1]

[1]सस्य विज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.–भा.कृ.अनु.सं., नई दिल्ली–110012

[2]भा.कृ.अ.प.–भारतीय मक्का अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

भारत की कृषि अर्थव्यवस्था में तिलहनों का क्षेत्रफल, उत्पादन और उपयोगिता के सन्दर्भ में अनाज के बाद महत्वपूर्ण स्थान है और वैश्विक स्तर पर यह लगभग 10 प्रतिशत तिलहन उत्पादन, 6–7 प्रतिशत वनस्पतिक तेल और 7 प्रतिशत प्रोटीन में योगदान करता है। भारत में मुख्यतः नौ तिलहनी फसलें उगाई जाती हैं जो हैं :– मूंगफली, सोयाबीन, सरसों, तिल, कुसुम, नाइजर, सूरजमुखी, अलसी और अरंडी। इनका उपयोग तेल और वसा के अलावा साबुन, पेंट, वार्निश और बालों के तेल आदि के निर्माण में कच्चे माल के रूप में किया जाता है। तिलहनों की खली का उपयोग प्रमुख रूप से पशुओं को खिलाने में किया जाता है। मुख्यतः मूंगफली, सोयाबीन और सरसों तिलहन फसलों का कुल उत्पादन में लगभग 88 प्रतिशत हिस्सा है (आई.आई.एम. रिपोर्ट, 2014)।

भारतीय कृषि में तिलहनी फसलों का महत्व

दुनिया में तिलहनों के क्षेत्रफल और उत्पादन में भारत की बड़ी हिस्सेदारी है। देश के कुल फसली क्षेत्र का लगभग 11–13 प्रतिशत क्षेत्रफल और 9–10 प्रतिशत उत्पादन के साथ अनाज के बाद तिलहन दूसरे स्थान पर है।

1. सभी प्रकार की मिट्टी और जलवायु में तिलहनी फसलें उगाई जा सकती हैं। सामान्यतः तिलहनों को बाजरा और दालों के साथ फसल चक्र में उगाया जाता हैं।
2. तिलहन मूल्यवान नकद फसलें होने से विदेशी मुद्रा का स्रोत सिद्व हो सकती हैं। कई उद्योगों जैसे साबुन, पेंट, स्नेहक, वार्निश इत्यादि के लिए कच्चा माल प्रदान करने में भी तिलहनों का योगदान हैं।
3. इनसे प्राप्त वनस्पति तेल और घी हमारे आहार का एक आवश्यक अंग है। खाद्य तेल खली (तिलहन से तेल निकाले जाने के बाद उप–उत्पाद) का उपयोग मवेशियों के भोजन, जबकि गैर–खाद्य खली को खाद के रूप में और दीमक नियंत्रण के लिए उपयोग किया जाता है।
4. कुछ तिलहन फसलें जैसे मूंगफली, सोयाबीन आदि, मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने और अगली फसल के लिए खेती की प्रारंभिक लागत को कम करने में मदद करती है। कुछ तिलहन फसलें जैसे अरंडी और तिल को मेंढ़ पर उगाने से किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।
5. कांटेदार होने के कारण कुसुम जैसी फसल को सीमा फसल के रूप में बोया जाता है ताकि चारागाहों की चराई से मुख्य फसल को बचाया जा सके।
6. तेल उद्योग लगभग 10 लाख से अधिक लोगों को रोजगार भी देता है।

तिलहन परिदृश्य

तिलहन क्षेत्र भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। विश्व के तिलहन फसलों के क्षेत्रफल में भारत का हिस्सा लगभग 12–15 प्रतिशत होने के बावजूद कम उत्पादकता और साल दर साल उतार–चढ़ाव के कारण वानस्पतिक तेल उत्पादन में हिस्सेदारी 6–7 प्रतिशत है। भारत में वर्ष 1951–1956 में 67.65 लाख है. क्षेत्र में तिलहन की खेती की गई, जिसमें मुख्य नौ वार्षिक तिलहनों का कुल उत्पादन 19.18 लाख टन और उत्पादकता 284 कि.ग्रा./है. रही और 2007–12 में कुल 267.5 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में तिलहनों की खेती की गई, जिसमें 1,082 कि.ग्रा./है. उत्पादकता के साथ कुल उत्पादन 289.3 लाख टन रहा।

तालिका 1: तिलहनों (09) का क्षेत्रफल, उत्पादन और उत्पादकता

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख है.)	उत्पादन (लाख टन)	उत्पादकता (कि.ग्रा./है.)
1951–56	67.65	19.18	284
1956–61	69.53	19.84	285
1961–66	81.53	22.80	280
1966–69	87.15	24.37	280
1969–74	136.06	63.95	470
1974–79	171.15	95.90	560
1979–80	170.42	87.39	513
1980–85	183.76	114.17	621
1985–90	204.95	139.39	680
1990–91	250.17	186.05	744
1992–97	259.47	218.86	843
1997–02	244.09	211.79	868
2002–07	254.10	233.29	918
2007–12	267.48	289.27	1082

स्रोतः कृषि मंत्रालय रिपोर्ट (2014)

खाद्य तेल परिदृश्य

खाद्य तेल आयात में हो रही वृद्धि देश के लिए बड़ी चिंता का कारण बन रही है। वर्ष 1986–87 के समय देश का खाद्य तेल आयात चिंताजनक स्तर पर पहुंच गया था। आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 1993–94 तक हम अपनी जरुरत का लगभग 3 फीसदी खाद्य तेल आयत करते थे, लेकिन खाद्य तेलों पर आयात शुल्क में हुई कटौतियों ने हमारे बाजारों को सस्ते पाम और सोयाबीन तेल से भर दिया। अब स्थिति यह है कि खाद्य तेल आयात में लगातार जारी वृद्धि के कारण भारत दुनिया का प्रमुख खाद्य तेल आयातक बन गया है। नवीनतम आंकड़ों के अनुसार 2015–16 में रिकॉर्ड 148.50 लाख टन खाद्य तेल का आयात हुआ जबकि घरेलू उत्पादन केवल 86.37 लाख टन हो सका जो वर्ष 2014–15 के मुकाबले लगभग 16.64 फीसदी अधिक हैं। आज भारत अपनी जरुरत का करीब 65–70 फीसदी खाद्य तेल आयात करता है जिससे आयात पर होने वाले खर्च से देश की कृषि अर्थव्यवस्था पर प्रभाव पड़ता है।

यदि हम पिछले वर्षों के खाद्य तेल परिदृश्य पर नजर डालें तो पाते हैं कि देश में खाद्य तेल आयात बढ़ने के पीछे तीन प्रमुख कारण हैं:

1. देश में तिलहन उत्पादन को उपयुक्त प्रोत्साहन नहीं मिलने से खाद्य तेल उत्पादन में लगातार आ रही कमी।
2. देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौते के कारण मलेशिया और इंडोनेशिया से बहुत कम कीमत पर भारतीय बाजार में पाम एवं सोयाबीन तेल की खपत।
3. दुनिया में तिलहन और खाद्य तेल के उत्पादन में भारी वृद्धि के कारण खाद्य तेल की कीमतों में कमी। वस्तुतः भारत में एक ओर तो तिलहन उत्पादन में कमी होती गई, वहीं दूसरी ओर तिलहन उत्पादन की लागत बढ़ती गई।

तालिका 2: खाद्य तेलों की उपलब्धता और आयात (लाख टन)

तेल वर्ष (नवम्बर-अक्टूबर)	समस्त घरेलू स्रोतों से खाद्य तेलों की निवल उपलब्धता	आयात	खाद्य तेलों की कुल उपलब्धता
2005–2006	83.16	40.91	124.07
2006–2007	73.70	46.05	119.75
2007–2008	86.54	54.34	140.88
2008–2009	84.56	74.98	159.54
2009–2010	79.46	74.64	154.10
2010–2011	97.82	72.42	170.24
2011–2012	89.57	99.43	189.00
2012–2013	92.19	106.05	198.24
2013–2014	100.80	109.76	210.56
2014–2015	89.78	127.31	217.09
2015–2016	86.37	148.50	234.87

स्रोतः कृषि मंत्रालय द्वारा जारी (2017) के अंतिम अनुमान के अनुसार वाणिज्यिक आसूचना एवं सांख्यिकीय महानिदेशालय

चुनौतियां

भारत में तिलहनों के उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि के बावजूद, खाद्य तेलों की मांग–उपलब्धता में अंतर है। इसका कारण है कि वानस्पतिक तेल और वसा की घरेलू मांग प्रति

वर्ष बढ़ रही है लेकिन प्रतिवर्ष घरेलू उत्पादन मांग के सापेक्ष नहीं बढ़ रहा है। भारतीय भोजन में प्रति व्यक्ति वसा एवं तेल की वार्षिक उपलब्धता केवल 6 किलोग्राम है जबकि विश्व की उपलब्धता औसतन 18 किलोग्राम है। भारत में तिलहनों की खेती उच्च जोखिम वाले क्षेत्रों में होती है जहां निवेश पर आय में अनिश्चितता बनी रहती हैं। भारत में अधिकांश तिलहनों की औसत पैदावार दुनिया के अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। वर्तमान समय में, भारत खाद्य तेल का बड़ा आयातक है। मांग आपूर्ति का अंतर इतना बड़ा है कि भारत खाद्य तेलों के मामले में वानस्पतिक तेलों के लिए आयात पर निर्भर है।

तालिका 3: भारत के लिए वानस्पतिक तेलों की मांग अनुमान

	2020	2030	2040	2050
अनुमानित जनसंख्या (बिलियन)				
निर्धारित उपभोग स्तरों के मुकाबले 40, 45, 50 और 55 प्रतिशत के आधार पर प्रति व्यक्ति खपत	1.32	1.43	1.55	1.68
प्रति व्यक्ति खपत (किग्रा/वार्षिक)				
अनुमानित आवश्यकता (मिलियन टन)	15.33	15.88	16.43	16.97
प्रत्यक्ष खपत के लिए वानस्पतिक तेल की आवश्यकता	20.24	22.71	25.47	28.51
गैर–खाद्य औद्योगिक उपयोग के लिए वानस्पतिक तेल की आवश्यकता	3.57	6.34	8.88	10.65
कुल वानस्पतिक तेल की आवश्यकता	23.81	29.05	34.35	39.16
वनस्पति तेल बीजों का अनुमानित उत्पादन (मिलियन टन)				
नौ वार्षिक तिलहन फसलों से कुल वानस्पतिक तिलहन उत्पादन	60.0	65.89	81.61	94.94
कुल पाम आयल उत्पादन	8.50	30	39.6	42
वानस्पतिक तिलहन का कुल घरेलू उत्पादन	68.50	95.89	121.21	136.94
वनस्पति तेलों की अनुमानित उपलब्धता (मिलियन टन)				
वार्षिक तिलहन फसलों से कुल वानस्पतिक तेल की उपलब्धता	17.16	19.93	23.23	26.62
पाम आयल से वानस्पतिक तेल की उपलब्धता	1.87	7.2	9.9	14.04
माध्यमिक स्रोतों से वानस्पतिक तेल की उपलब्धता	5.05	5.89	6.85	7.18
प्राथमिक और माध्यमिक स्रोतों से कुल वनस्पति तेल की उपलब्धता	24.08	33.02	39.98	47.84
कुल वानस्पतिक तेल की आवश्यकता	23.81	29.05	34.35	39.16
अधिशेष (मिलियन टन)	(+) 0.27	(+) 3.97	(+) 5.63	(+) 8.68

स्रोत: विजन 2050, भारतीय तिलहन अनुसंधान संस्थान

तिलहन उत्पादन में कमी और खाद्य तेल आयात में लगातार बढ़ोतरी देश के लिए चिंता का विषय बन गई है।

तिलहन उत्पादन कम होने के कारण

भारत में तिलहन उत्पादन के लिए नीतिगत प्रोत्साहन 1986 में पहली बार आया जब सरकार ने तिलहन पर प्रौद्योगिकी मिशन की शुरुआत की। यह भारत में तिलहन उत्पादन के लिए एक सुनहरा समय था जब वर्ष 1994–95 में उत्पादकता 605 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर (वर्ष 1986–87) से बढ़कर 847 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर हो गई। हालांकि, उसके बाद विकास की धीमी गति रही है। आज तिलहन उत्पादन में सबसे बड़ी समस्या कम उत्पादकता है। वर्तमान समय में तिलहन की उत्पादकता में भारत विकसित और पड़ोसी देशों जैसे चीन आदि से काफी पीछे है। चूंकि उत्पादन में वृद्धि बढ़ती हुई मांग के साथ तालमेल नहीं रख पाई इसलिए भारत खाद्य तेल के आयात पर और अधिक निर्भर रहा। तिलहन उत्पादन को

तालिका 4: भारत में तिलहन और तेलों की अनुमानित उत्पादन एवं आपूर्ति (मिलियन टन)

फसल	2020		2030		2040		2050	
	बीज	तेल	बीज	तेल	बीज	तेल	बीज	तेल
सोयाबीन	18.4	2.90	27.5	4.33	37.2	5.86	46.8	7.38
सरसों	21.0	8.46	22.05	8.89	24.0	9.6	26.5	10.6
मूंगफली	14.8	3.50	17.8	4.21	21.6	5.11	24.6	5.82
सूरजमुखी	1.37	0.57	1.56	0.65	1.6	0.67	1.63	0.68
तिल	1.31	0.56	1.35	0.58	1.4	0.6	1.45	0.62
कुसुम	0.36	0.10	0.34	0.1	0.36	0.1	0.38	0.11
अलसी का बीज	0.31	0.10	0.32	0.1	0.35	0.11	0.4	0.13
नाइजर	0.18	0.06	0.22	0.07	0.25	0.08	0.28	0.08
अरंडी	2.27	0.91	2.5	1.0	2.75	1.1	3.0	1.2
कुल नौ वार्षिक तिलहन	60.00	17.16	73.64	19.93	89.51	23.23	105.04	26.62
पाम आयल	8.5*	1.87	30.0*	7.2	39.6*	9.9	42.0*	14.04
कुल तिलहन उत्पादन	68.5		103.64		129.11		147.04	
माध्यमिक स्रोत	5.05		5.89		6.85		7.18	
कुल वानस्पतिक तेल उत्पादन	24.08		33.02		39.98		47.84	
कुल वानस्पतिक तेल की आवश्यकता	23.81		29.05		34.35		39.16	
अधिशेष	(+) 0.27		(+) 3.97		(+) 5.63		(+) 8.68	

स्रोतः विजन 2050, भारतीय तिलहन अनुसंधान संस्थान

बढ़ाने के लिए सबसे बड़ी बाधाएं आ रही कि भारत में तिलहन की खेती मुख्यतः वर्षा आधारित क्षेत्रों में होती है और देश में तिलहन उत्पादित क्षेत्र का केवल एक–चौथाई हिस्सा सिंचाई के अधीन है। तिलहन उत्पादन और उत्पादकता के प्रदर्शन के बारे में साहित्य की एक संक्षिप्त समीक्षा से पता चलता है कि देश में तिलहन क्षेत्र के खराब प्रदर्शन के लिए कई कारक जिम्मेदार हैं। जैसे –

1. कुल कृषि भूमि में तिलहनी फसलों का कम क्षेत्रफल।
2. घरेलू बीजों का उपयोग, जिसके कारण तेल की गुणवता पर प्रतिकूल प्रभाव।
3. खाद एवं उर्वरकों का नगण्य उपयोग।
4. फसल सुरक्षा एवं वैज्ञानिक तरीकों का उपयोग न किया जाना।
5. मिश्रित फसली खेती में दलहन उत्पादन को प्राथमिकता देना।
6. उत्पादन में उच्च जोखिम और अनिश्चितता कारक।
7. प्रसार सुविधाओं की अपर्याप्तता।
8. घरेलू खाद्य तेल उत्पादक ऊँची लागत के कारण विदेशों से आयातित खाद्य तेल से प्रतिस्पर्धा नहीं कर पा रहे हैं। इस समय आयातित खाद्य तेल और घरेलू खाद्य तेल की कीमतों में लगभग 40–50 डॉलर प्रति टन का अंतर है। आसियान देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौतों के कारण भारत को सस्ते में पाम तेल मिलने लगा है। चूंकि मलेशिया और इंडोनेशिया ने पिछले वर्षों से पाम उत्पादों पर शुल्क खत्म किया हुआ है। इन देशों में बायो–डीजल के लिए कच्चे पाम तेल की मांग भी घट रही है। ऐसे में इन निर्यातक देशों ने बढ़ते स्टॉक को कम करने के लिए पाम उत्पादों का भारत को कम कीमत पर निर्यात बढ़ाया है। आयात निर्भरता बढ़ने से तिलहन फसलों की खेती घाटे का सौदा बन गई है, लिहाजा किसानों ने तिलहन खेती से ही मुंह मोड़ लिया है।

9. भारत के घरेलू खाद्य तेल उत्पादन को नुकसान पहुंचाने में खाद्य तेल से संबद्ध कई बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की भी बड़ी भूमिका रही। उन्होंने अफवाह फैलाई कि सरसों के तेल में सत्यानाशी (आर्जीमोन) नामक खरपतवार के बीजों का तेल मिलाया जाता है जो खाने योग्य नहीं है। अतः देश में सरसों के तेल को शंका की दृष्टि से देखा जाने लगा और इससे पाम व सोयाबीन तेल के आयात को भारी बढ़ावा मिला। स्थिति यह है कि कुल खाद्य तेल आयात में पाम व सोयाबीन तेल की हिस्सेदारी लगभग आधी है।

तिलहन उत्पादन बढ़ाने हेतु किए गए प्रयास

1. **तिलहनों का तकनीकी मिशन की स्थापना** –1980 के दशक में जब देश का खाद्य तेल आयात चिन्ताजनक स्तर पर पहुंच गया तब 1986 में स्वर्गीय प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने स्वयं हस्तक्षेप करके तिलहन पर पहला कार्यक्रम 'तिलहन पर तकनीकी मिशन (टी.एम.ओ.) के रूप में शुरू कराया था। इस महत्वपूर्ण क्षेत्र में देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए तिलहन की उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि करना मुख्य विचार था। इसके अंतर्गत सिंचित क्षेत्रों में तिलहनों (राई, सरसों, सूरजमुखी, मूंगफली, तिल आदि) की खेती को प्राथमिकता दी गई। कई उन्नत तिलहन प्रजातियों का विकास किया गया। परिणामस्वरूप तिलहन उत्पादन में बढ़ोतरी दर्ज की गई। देश में 1990 के दशक में दलहन, पाम तेल और मक्का को इसके दायरे में लाया गया था। बाद में इस योजना को 2004 में तिलहन, दलहन, पाम तेल और मक्का (आई.एस.ओ.पी.ओ.एम.) की एकीकृत योजना के रूप में पुनर्गठन किया गया था। तिलहन के लिए इसे देश के 14 राज्यों में लागू किया जा रहा हैः आंध्र प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल।
2. तिलहन के उत्पादन को आकर्षक बनाने के लिए सरकार ने न्यूनतम समर्थन मूल्य में भी पर्याप्त वृद्धि के साथ ही बोनस देने की घोषणा भी की है।
3. सरकार ने किसानों को उन्नत किस्म के बीज उपलब्ध करा कर देश की तिलहन उत्पादकता को बढ़ाने का प्रयास किया है।
4. भंडारण और वितरण की सुविधाएं।
5. राष्ट्रीय कृषित सहकारी विपणन संघ लिमिटेड (नेफेड) की स्थापना।
6. राष्ट्रीय तिलहन एवं वानस्पतिक विकास बोर्ड की स्थापना।

इस प्रकार इस क्षेत्र में अपनाए गए समन्वित प्रयासों के बाद भारत में तिलहन का कुल उत्पादन वर्ष 2013–14 में बढ़कर 328 लाख टन पहुंच गया जो वर्ष 1970–80 में 96 लाख टन था अर्थात् तीन गुनी से अधिक वृद्धि हुई जो एक अच्छी सफलता है। तिलहन के इस उत्पादन वृद्धि में सर्वाधिक योगदान मूंगफली का है, जो कुल उत्पादन का लगभग 35 प्रतिशत है। मूंगफली के अतिरिक्त सरकार ने सोयाबीन तथा सूरजमुखी फसल को किसानों के बीच एक मुख्य आकर्षक तिलहन उत्पादन के रूप में स्थापित किया है। सोयाबीन का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य होने के कारण मध्य–प्रदेश को सोया–प्रदेश के नाम से भी जाना जाता है। भारत में सभी तिलहनों के सम्मिलित उत्पादन में राजस्थान का प्रथम स्थान है इसलिए इसे सुनहरा राज्य भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त, उत्तर–प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, बिहार आदि में भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जाती है।

तिलहन उत्पादन बढ़ाने के उपाय

देश में कुल तिलहन का करीब 70 फीसदी हिस्सा गैर–सिंचित क्षेत्र में उगाया जाता है। पिछले कुछ सालों के दौरान कई ऐसी किस्में आई हैं जिनसे तिलहन उत्पादन में अच्छी वृद्धि की जा सकती है इसके साथ ही देश में तिलहन से तेल निकालने की कुल क्षमता का अधिकतम इस्तेमाल किए जाने की रणनीति भी बनाई जानी चाहिए। तिलहन उत्पादन में सुधार के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय अग्रलिखित हैंः–

1. **तिलहन क्षेत्र का विस्तार** – सामान्यतया, तिलहन फसलों के तहत आने वाले क्षेत्र के विस्तार की बहुत सीमित संभावनाएं हैं क्योंकि बढ़ती जनसंख्या की जरूरतों

को पूरा करने के लिए विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन की मांग बढ़ती जा रही है। हालांकि, कुछ विशिष्ट पहचान वाले क्षेत्रों में तिलहन क्षेत्र के विस्तार की कुछ संभावनाएं अभी भी हैं। आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल और पूर्वी भारत में धान की फसल के बाद भूमि में उपलब्ध नमी में सूरजमुखी, कुसुम, सब्जी, रेपसीड–सरसों और तिल की खेती तिलहन फसलों के क्षेत्र में वृद्धि करने का एक विकल्प है। इन फसलों को उचित भूमि की तैयारी या रोपण की उतेरा विधि द्वारा सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। तिलहन फसलों का विभिन्न फसल प्रणाली जैसे चावल–चावल और चावल–गेहूं के विविधीकरण में भी विशेष स्थान है। सिंचाई के लिए नहर के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रफल से दूर के क्षेत्र में, तिलहन की फसलें कम सिंचाई की आवश्यकता के कारण बेहतर विकल्प हैं। छोटी अवधि की तिलहन वाली फसलें जैसे सूरजमुखी, तिल और तोरिया आकस्मिक फसल के लिए बेहतर विकल्प हैं।

2. सिंचाई के तहत अतिरिक्त तिलहन क्षेत्रफल को लाना।
3. आधुनिक फसल प्रौद्योगिकी और बेहतर शुष्क भूमि पर खेती का प्रचार।
4. तिलहन फसलों में प्रसंस्करण और मूल्य वृद्धि में निजी क्षेत्र को भागीदारी के लिए प्रोत्साहन प्रदान करना। इसके अलावा, कम उपयोग दक्षता की कमी को कम किया जाना चाहिए।
5. मिश्रित एवं अन्तः फसलीय खेती करके जलवायु परिवर्तन से मुकाबला किया जा सकता है। केवल एक फसल की अपेक्षा, अंतः सस्य प्रणालियाँ लेने से उत्पादकता, लाभ व पानी उपयोग दक्षता में 15–20% तक की बढ़ोतरी की जा सकती है। मुख्यः प्रचलित अंतः सस्य प्रणालियाँ हैं: आलू + सरसों (3:1 अनुपात), सरसों + चना /मटर/ मूली (युग्म कतार 2:1 अनुपात), गेहूं + सरसों/चना (6:1/1:6 कतार अनुपात), मक्का + मूंग/सोयाबीन (1:1 अनुपात) और कपास + मूंग/लोबिया/मूंगफली (1:2 कतार अनुपात)।
6. एक्वा बुवाई (बीज के साथ जल डालना) विभिन्न शुष्क क्षेत्रों की फसलों जैसे सरसों की अच्छी बढ़वार तथा अधिक उत्पादन में सहायक है। एक्वा बुवाई तकनीक रबी मौसम की फसलों के लिए राजस्थान, हरियाणा, पंजाब एवं उत्तर प्रदेश के असिंचित क्षेत्रों के लिए उपयोगी है।
7. प्रमुख फसल पारिस्थितिकी क्षेत्र में तिलहन फसलों के लिए भौतिक (उर्वरक, कीटनाशक), वित्तीय (ऋण सुविधा, फसल बीमा) और तकनीकी जानकारी (विस्तार सेवाएं) की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
8. तिलहन फसलों के लिए प्रमुख फसल पारिस्थितिकी क्षेत्र में प्रमुख भौतिक (उर्वरक, कीटनाशक), वित्तीय (ऋण सुविधा, फसल बीमा) और तकनीकी जानकारी (विस्तार सेवाएं) की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
9. अंतरराष्ट्रीय बाजारों में अनुचित प्रतिस्पर्धा से बचने के लिए पर्याप्त सुरक्षात्मक उपायों के साथ तिलहनों और खाद्य तेल के प्रतिस्पर्धी बाजार को सुनिश्चित करने के लिए बाजार सुधार और नीतियां, जैसे कि अनुबंध खेती, उत्पादन और प्रसंस्करण में सार्वजनिक–निजी साझेदारी को लागू करना।
10. **नीम/सल्फर लेपित यूरिया** : आज फसलों को 80 प्रतिशत से भी अधिक नाइट्रोजन यूरिया के माध्यम से ही प्राप्त होती है। कृषि में नाइट्रोजन युक्त खाद के रूप में इसका उपयोग होता है। मिट्टी में सभी नाइट्रोजनित उर्वरकों से नाइट्रोजन की बड़ी हानि का कारण नाइट्रोफाईंग बैक्टीरिया है जो अमोनिकल नाइट्रोजन को नाइट्रेट में रूपान्तरित करता है तथा जिस पर यदि दक्ष कृषि पद्धतियों से नियंत्रण न रखा जाए तो यह आसानी से जमीन की गहराई में चली जाती है तथा विनाइट्रीकृत हो जाती है। नीम लेपित यूरिया का निर्माण आसानी से उपलब्ध दो उत्तम वस्तुओं का प्रयोग करके किया जाता है। प्रथम वायु तथा प्राकृतिक गैस से तकनीक द्वारा तथा दूसरा दैविक रूप से उपलब्ध नीम के पेड़ से यूरिया का निर्माण किया जाता है। नीम में नाइट्रीकृत निषेध गुण प्रमाणित है और इसके उपयोग से यूरिया की नाइट्रोजन

छोड़ने की गति धीमी होती है तथा इस प्रकार नाइट्रोजन लम्बे समय तक उपलब्ध रहता है जिससे नाइट्रोजन की कम से कम हानि होती है जिसके फलस्वरूप इसके दक्ष उपयोग में वृद्धि होती है। जबकि सल्फर युक्त यूरिया उपयोग करने से तिलहन फसल को एक तत्व और उपलब्ध हो जाता है।

11. **फसल अवशेषः** फसल अवशेष अपने पोषक मान के अतिरिक्त भूमि के गुणों में सुधार और प्रदान किए गए उर्वरकों की क्षमता में वृद्धि करते हैं। इनके प्रयोग से मृदा से तत्वों का ह्रास लीचिंग, वाष्पीकरण और स्थिरीकरण जैसे रासायनिक प्रक्रमों द्वारा रुक जाता है। धान का पुआल, बाजरे का भूसा, सरसों की तूरी एवं डंठल, मूँग एवं उर्द के सूखे पौधे, सड़ा बेकार भूसा आदि को सड़ाकर खेतों में प्रयोग करना चाहिए। तिलहनी फसलों के अवशेषों में अधिक पोषक तत्व एवं कार्बन होता है अतः इन का पुनः चक्रीकरण करके अगली फसल में उर्वरक की मात्रा को विस्थापित किया जा सकता हैं। मूँगफली के अवशेषों को 5 टन/है. की दर से अगली गेहूं की फसल में डालने से 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/है. की बचत, 10–12 प्रतिशत उत्पादकता में वृद्धि एवं मृदा के स्वास्थ्य में बढ़ोतरी की जा सकती है। अरहर–सूरजमुखी प्रणाली में सूरजमुखी अवशेष 8 टन/है. अरहर में डालने से अगली सूरजमुखी की उपज में वृद्धि व नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की आवश्यकता में कमी की जा सकती हैं।

12. **हरी खादः** हरी खाद की फसलें जहां एक ओर प्रचुर मात्रा में वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को मृदा में स्थिर करती हैं वहीं दूसरी ओर इनके मृदा में सड़ने से मृदा को कार्बनिक पदार्थ में बढ़ोतरी होती है जिससे मृदा के भौतिक एवं रासायनिक गुणों में सुधार होता है और लाभकारी सूक्ष्म जीवाणुओं की गति विधियों में सक्रियता आती है। हरी

खाद देने से मृदा में लगभग 40–60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की आपूर्ति हो जाती है।

समन्वित पादप पोषक तत्व प्रबंधन

समन्वित पादप पोषक तत्व प्रबंधन का उद्देश्य यह है कि कम से कम उर्वरकों का तथा अधिक से अधिक कार्बनिक खादों एवं जैव उर्वरकों का प्रयोग करके अधिक समय तक उत्पादन क्षमता को स्थिर रखा जा सके, साथ ही साथ मृदा स्वास्थ्य को लम्बे समय तक टिकाऊ बनाया जा सके। समन्वित पादप पोषक तत्व प्रबंधन एक व्यापक अवधारणा है जिसमें मृदा के पोषक तत्वों के चक्र, उर्वरकों का संतुलित प्रयोग, कार्बनिक तत्वों का पुनः प्रयोग, कार्बनिक तथा रासायनिक उर्वरकों का संयुक्त प्रयोग, जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण एवं फसल चक्र के प्रति व्यापक दृष्टिकोण सम्मिलित हैं। समन्वित पादप पोषक तत्व प्रबंधन में पादप पोषक तत्वों के सभी स्रोतों जैसे रासायनिक उर्वरकों को खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद, जैव उर्वरक, फसल अवशेष, फसल चक्र में दाल वाली फसलों एवं अन्य स्थानीय उपलब्ध पादप पोषक तत्वों के स्रोतों का प्रयोग इस ढ़ंग से करते हैं कि पौधों को आपूर्ति किये जाने वाले पोषक तत्व न्यायपूर्ण संतुलित मात्रा में दक्षता के साथ हों, जिससे मृदा की उर्वरता एवं उत्पादकता सतत् बनी रहती है।

समन्वित पादप पोषक तत्व प्रबंधन क्यों ?

- कार्बनिक खादों के सड़ने से मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणवता में वृद्धि होती है। समन्वित पादप पोषक तत्व प्रबंधन आर्थिक दृष्टि से लाभकारी एवं पर्यावरण सुधारक है। पौधों के आवश्यक तत्वों की सम्पूर्ण मात्रा कार्बनिक खादों एवं जैविक खादों से पूर्ति करना सम्भव नहीं है।
- पौधों की अपनी वृद्धि एवं उत्पादकता के लिए 17 अनिवार्य तत्वों की आवश्यकता होती है। अकार्बनिक उर्वरक एक,

दो या तीन तत्वों के मुख्य स्रोत ही होते हैं। जबकि जैविक खादें प्रायः सभी आवश्यक तत्वों को देने में सक्षम होती हैं किन्तु इनकी सांद्रता कम होती है।

- मृदा की उत्पादकता एवं स्वास्थ्य में सुधार। मृदा में पोषक तत्वों का असन्तुलन दूर करना।
- जैविक पदार्थों जैसे गोबर, व्यर्थ आहार सामग्री, फसल अवशेष व कृषि औद्योगिकी अपशिष्ट आदि के प्रयोग से आदान–लागत कम होने से शुद्ध आर्थिक लाभ में वृद्धि।
- पर्यावरण प्रदूषण से बचाना। उर्वरक प्रयोग कार्य कुशलता में सुधार होता है।
- अधिकतम अच्छी गुणवत्ता वाली फसल का उत्पादन करना। उर्वरकों पर निर्भरता में कमी।
- मृदा की भौतिक दशा में सुधार करना। पोषक तत्वों की बरबादी न होने देना।
- स्थानीय स्रोतों का सदुपयोग। मृदा नमी संरक्षण।

समन्वित पादप पोषक तत्व प्रबंधन के अवयव

1. **रासायनिक उर्वरकः** मृदा परीक्षण के आधार पर सिफारिश के अनुसार यूरिया, डी.ए.पी., एम.ओ.पी., एस.एस.पी., जिंक सल्फेट आदि रासायनिक उर्वरकों का संतुलित उपयोग ही पैदावार को बढ़ाने का साधन हो सकता है। प्रदान किए गए उर्वरकों का मुश्किल से 30–40 प्रतिशत भाग ही फसल द्वारा उपयोग किया जाता है व शेष मात्रा विभिन्न रास्तों से जैसे लीचिंग, बहाव, वाष्पीकरण, मृदा कटाव, विनाइट्रीकरण, स्थिरीकरण आदि के द्वारा मृदा से नष्ट हो जाती है। अतः किसी फसल विशेष की उर्वरक सिफारिश देने के बजाय फसल क्रम की सिफारिशें देना ज्यादा उपयोगी हो सकता है।

2. **कार्बनिक खादें:** गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद, परंपरागत रूप से मृदा की उर्वरा–शक्ति में वृद्धि कर फसलों से अच्छी उपज लेने के लिए उपयोग की जाती हैं क्योंकि इनमें सभी आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा होने के कारण फसल उत्पादन में उपयोग भूमि की भौतिक–रासायनिक और जैविक दशाओं में पर्याप्त सुधार लाता है।

3. **दलहनी फसलें:** विभिन्न दलहनी फसलें नाइट्रोजन की विभिन्न मात्रायें मृदा के अन्दर छोड़ती हैं जो अगली फसल के काम आती हैं। चारे वाली दलहनी फसलें दाने वाली दलहनी फसलों की अपेक्षा मृदा में अधिक मात्रा में नाइट्रोजन छोड़ती हैं। औसतन 40 से 60 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर नत्रजन अगली फसल को मिल जाती है जैसे बरसीम से 60 से 120 कि.ग्रा., उर्द से 55 कि.ग्रा., मूंगफली से 60 कि.ग्रा., चना से 68 कि.ग्रा. आदि।

4. **जैव उर्वरकः** जैव उर्वरक मृदा में अघुलनशील एवं स्थाई फॉस्फोरस की उपलब्धता को बढ़ा देते हैं। फसलों में राइजोबियम, एजोटोबैक्टर एवं एजोस्पिरीलम जीवाणु कल्चर का प्रयोग करके रासायनिक उर्वरकों की खपत में 20 प्रतिशत कमी कर सकते हैं और उपज बढ़ा सकते हैं।

5. उपयुक्त सस्य तकनीकें जैसे फसल चक्र में दलहनी फसलों का प्रयोग, समय पर बुवाई, सही किस्मों का चुनाव, समन्वित पोषक तत्व, उचित जल, खरपतवार, रोग व कीट प्रबंधन करके आने वाली समस्याओं का उचित समाधान किया जा सकता है।

कीट एवं रोग प्रबंधन

तिलहनों की खेती में मित्र कीटों, नीम के विभिन्न उत्पाद एवं बायोएजेंट तथा कीटनाशी रसायनों का प्रयोग कर कीटों एवं रोगों को काफी हद तक नियंत्रण किया जा सकता है कीट नियंत्रण के लिए जैसेः बीजोपचार, मेंड के चारों ओर खरपतवार न रहने दें, फसल चक्र, अन्तवर्ती खेती, परजीवी कीट, ट्राइकोडर्मा, फेरोमोन ट्रेप, मृदा सौरीकरण आदि अपनायें जा सकते हैं। रोग प्रतिरोधक फसलों की किस्मों का चुनाव, फसल चक्र, मिश्रित खेती, बीजोपचार व भूमि उपचार, रोग ग्रस्त पौधों का उखाड़ कर जलाना, रोग फैलते ही उचित कृषि रसायनों का प्रयोग तथा समेकित जल प्रबंधन व संतुलित पोषण आदि समेकित रोग प्रबंधन के लिए अपनाये जा सकते हैं।

निश्चित रूप से ऐसा किए जाने पर एक बार फिर देश खाद्य तेल के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ सकता है

साथ ही खाद्य तेल आयात पर व्यय हो रही बहुमूल्य विदेशी मुद्रा की भी बचत होगी।

सारांश

भारत में निरंतर बढ़ रहा खाद्य तेलों का आयात एक चिंता का विषय है। इससे न केवल विदेशी मुद्रा व्यय होती है बल्कि यह घरेलू तिलहन उत्पादन क्षेत्र के लिए भी अच्छी खबर नहीं है। तिलहनी फसलों के उत्पादन में आने वाली समस्याओं को ध्यान में रखते हुए एक ऐसी सुनियोजित दीर्घकालिक रणनीति बनाए जाने की आवाश्यकता है जिससे फसलोत्पादन वृद्धि के साथ–साथ संस्थागत एवं नीतिगत ढांचे में भी सकारात्मक परिवर्तन हों। आज उन्नत सस्य विधियाँ, अधिक उपज देने वाली रोग एवं सूखा–रोधी किस्में तथा टिकाऊ मृदा तथा फसल–प्रणाली प्रबंधन अपनाकर तिलहन उत्पादन में नए कीर्तिमान स्थापित किए जाने की आवाश्यकता है।

भारतवर्ष की राजभाषा चाहे जो हो और जैसी भी हो, पर इतना निश्चित है कि भारतवर्ष की केन्द्रीय भाषा हिन्दी है। लगभग आधा भारतवर्ष उसे अपनी साहित्यिक भाषा मानता है, साहित्यिक भाषा अर्थात् उसके हृदय और मस्तिष्क की भूख मिटाने वाली, करोड़ों की आशा–आकांक्षा, अनुराग–विराग, रुदन–हास्य की भाषा। उसमें साहित्य लिखने का अर्थ है करोड़ों के मानसिक स्तर को ऊंचा करना, करोड़ों मनुष्यों को मनुष्य के सुख–दुख के प्रति संवेदनशील बनाना, करोड़ों को अज्ञान, मोह और कुसंस्कार से मुक्त करना।

हजारी प्रसाद द्विवेदी

उन्नत बीज-फसल उत्पादन का मूल आधार

रमेश चन्द, ज्ञानेन्द्र सिंह, संजय कुमार, चन्दू सिंह, विपिन कुमार, राजेश कुमार एवं किरन ठाकुर

बीज उत्पादन इकाई

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

फसल उत्पादन में गुणवतायुक्त बीजों का महत्वपूर्ण योगदान है। फसल उत्पादन की सभी लागत जैसे उन्नत कृषण क्रियाएं, खाद एवं उर्वरक, सिंचाई, पादप सुरक्षा हेतु कृषि रसायनों का प्रयोग आदि का भरपूर उपयोग तभी किया जा सकता है जबकि उन्नत प्रजातियों के उच्च गुणवता वाले बीजों का प्रयोग किया जाये। उच्च गुणवता वाले बीजों के प्रयोग से न केवल फसल की पैदावार में वृद्धि होती है बल्कि फसल की गुणवता में भी वृद्धि होती है तथा साथ ही साथ, फसल में कीटपतंगों व बीमारियों का प्रकोप भी अपेक्षाकृत कम होता है। उत्पादन के कारकों में बीज का महत्व 20 प्रतिशत तक माना गया है परन्तु यह प्रतिशत अधिक उत्पादन देने वाली विभिन्न फसलों की विभिन्न प्रजातियों के अनुसंधान के बाद और भी बढ़ गया है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित प्रमुख खाद्यान्न फसलों की उन्नत प्रजातियों का विवरण सारणी–1 में दर्शाया गया है। बीज प्रकृति की अमूल्य देन हैं जो रूप एवं आकार में बहुत छोटा होता है, लेकिन उसमें अत्यंत शक्तियां विद्यमान होती हैं। उन्नत बीज फसल उत्पादन को बढ़ाने में एक उत्प्रेरक का कार्य करता है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में स्थित बीज उत्पादन इकाई ने उच्च गुणवता वाले बीजों के उत्पादन में उत्तरी भारत के किसानों के बीच अत्यंत लोकप्रियता हासिल की है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा वर्ष 2006–2007 में महाबीज परियोजना के लागू होने के उपरान्त उन्नत बीजों के उत्पादन में निरंतर वृद्धि हो रही है। बीज उत्पादन का ज्ञान फसल उत्पादन के बाद प्रारम्भ हुआ। जैसे–जैसे खाद्यान्न की मांग बढ़ती गई वैसे–वैसे बीज उत्पादन का महत्व भी बढ़ता गया। अनुवांशिक व भौतिक शुद्धता एवं उत्पादन की दृष्टि से बीजों को पांच भागों में विभक्त किया गया है। जिनका विवरण निम्न प्रकार है :

1. **नाभिकीय बीज** : यह प्रजनक की देखरेख में तथा कम क्षेत्रफल में पैदा किया जाता है। नाभिकीय बीज का उत्पादन सामान्यतः एकल पौध/बीज/बाली/भुट्टा पद्धति द्वारा किया जाता है। इसके बनने की प्रक्रिया में उचित पृथकता दूरी का ध्यान रखा जाता है। प्रत्येक प्रजाति के खेत में घूमकर प्रजाति विशेष के गुणों के अनुरूप लगभग 400–500 पौधों, बालियों, भुट्टों आदि का चुनाव किया जाता है तथा उनकी अलग–अलग कटाई व थ्रेशिंग इस प्रकार की जाती है कि मिश्रण की सम्भावना न रहे। कटाई व थ्रेशिंग के उपरान्त उनका आनुवंशिक व भौतिक गुणों के अनुसार चुनाव किया

धान पूसा सुगन्ध–5 का प्रजनक बीज

धान पूसा–1612 का प्रजनक बीज उत्पादन

जाता है। आनुवंशिक व भौतिक गुणों के अनुरूप चुने हुऐ बीजों की अगले वर्ष अलग–अलग लाइनों में बुवाई की जाती है फिर इन लाइनों में से प्रजातीय गुणों के अनुरूप कीट एवं रोग रहित लाइनों का चुनाव करके शेष को निकाल दिया जाता है। इन चुनी हुई लाइनों को अलग–अलग काटकर थ्रेशिंग व सफाई करके सभी लाइनों का प्रयोगशाला में परीक्षण करने के बाद इन गुणवतायुक्त लाइनों को मिलाकर नाभिकीय बीज तैयार किया जाता है। नाभिकीय बीज उत्पादन की प्रक्रिया फसल के अनुरूप अलग–अलग होती है। परपरागणित जैसे सरसों, बाजरा, अरहर आदि की प्रजातियों का नाभिकीय बीज प्लास्टिक की जाली के केज के अन्दर रखा जाता है तथा केज के अन्दर परागण के लिए मधुमक्खियों का बक्सा रख दिया जाता है। नाभिकीय बीज की भौतिक व आनुवंशिक शुद्धता 100 प्रतिशत होनी चाहिए।

2. **प्रजनक बीज** : यह बीज भी प्रजनक की देखरेख में ही पैदा किया जाता है। प्रजनक बीज का उत्पादन नाभिकीय बीज द्वारा ही किया जाता है। इसके उत्पादन में पृथकता दूरी का विशेष ध्यान रखा जाता है। इसके उत्पादन के लिए प्रजाति की बढ़वार की अवस्था, फूल आने की अवस्था तथा पकने की अवस्था पर प्रजनक की देखरेख में अवांछनीय पौधों को खेत से बाहर निकाल दिया जाता है। फसल पकने के समय इस बीज फसल की निगरानी की जाती है जिसमें राज्य के कृषि विभाग के अधिकारी, राष्ट्रीय बीज निगम के अधिकारी, संबंधित प्रजनक, सस्य वैज्ञानिक, बीज वैज्ञानिक, पादप रोग वैज्ञानिक, बीज उत्पादन से संबंधित विभाग के वैज्ञानिक आदि शामिल होते हैं। प्रजनक बीज की अनुवांशिक शुद्धता 99.8 प्रतिशत तथा भौतिक शुद्धता 98 प्रतिशत होनी चाहिए। यह बीज मांग पत्र के आधार पर पैदा किया जाता है।

3. **आधार बीज** : यह बीज अपेक्षाकृत अधिक क्षेत्रफल में पैदा किया जाता है। इस बीज का उत्पादन प्रजनक बीज के द्वारा किया जाता है। इस बीज की अनुवांशिक व भौतिक शुद्धता 98 प्रतिशत से कम नहीं होनी चाहिए। प्रजनक की तरह इस बीज का निरीक्षण भी अनिवार्य होता है।

4. **प्रमाणित बीज** : यह बीज आधार बीज की अपेक्षा अधिक क्षेत्रफल में पैदा किया जाता है। इस बीज के उत्पादन के लिए प्रजनक अथवा आधार बीज का प्रयोग किया जाता है। इस बीज की शुद्धता भी 98 प्रतिशत से कम नहीं होनी चाहिए। निरीक्षण समीति के द्वारा प्रजनक की भांति इस बीज फसल का निरीक्षण भी किया जाता है। इस बीज को पुनः बीज उत्पादन के लिए प्रयोग नहीं करना चाहिए।

5. **सत्य बीज** : यह टी.एल. बीज के नाम से प्रसिद्ध है। इसको बनाने के लिए बीज फसल का निरीक्षण कराने की आवश्यकता नही होती है। इसकी शुद्धता एवं गुणवता के लिए उत्पादक स्वयं जिम्मेदार होता है। उत्पादक प्रजाति के समस्त गुणों को ध्यान में रखकर उत्पादन करता है। इस बीज को भी पुनः बीज उत्पादन के लिए प्रयोग नहीं कर सकते हैं। यह बीज भी प्रजनक अथवा आधार बीज के द्वारा तैयार किया जाता है।

गुणवतायुक्त बीज के लक्षण

गुणवतायुक्त बीज में सामान्यतः निम्न लक्षणों का होना आवश्यक है :

- सामान्यतः सभी बीजों की आनुवंशिक शुद्धता 98.5 प्रतिशत से कम नहीं होनी चाहिए।
- गुणवतायुक्त बीजों की भौतिक शुद्धता 98 प्रतिशत से कम नहीं होनी चाहिए।
- गुणवतायुक्त बीजों की भंडारण क्षमता अच्छी होनी चाहिए।
- बीजों का अंकुरण न्यूनतम स्तर के बराबर या अधिक होना चाहिए।
- बीजों में अधिक उपज देने की क्षमता होनी चाहिए।
- गुणवतायुक्त बीजों से पैदा फसल जातीय लक्षणों के अनुरूप होनी चाहिए।
- गुणवतायुक्त बीज जलवायु की भिन्नता के कारण कम से कम प्रभावित होने चाहिए।
- उन्नत बीजों में भंडारण तथा उत्पादन के दौरान कीटों एवं बीमारियों का प्रकोप कम से कम होना चाहिए।
- उन्नत बीजों में निराई, गुड़ाई, सिंचाई तथा खाद एवं उर्वरकों के उपयोग की अधिक क्षमता होनी चाहिए।

- गुणवतायुक्त बीजों में फसल के गिरने की प्रकृति कम से कम होनी चाहिए।
- गुणवतायुक्त बीज रोग व व्याधियों से मुक्त होना चाहिए।
- गुणवतायुक्त बीजों से तैयार फसल एक साथ पकनी चाहिए।
- गुणवतायुक्त बीजों से तैयार फसल खाने में स्वादिष्ट तथा पोषक तत्वों की अधिकता वाली होनी चाहिए।

खेत, खलियान तथा श्रेणीकरण के समय बीज की शुद्धता के उपाय

बीजों की गुणवता बनाये रखने के लिए निम्नलिखित सावधानियां रखनी चाहिए :

- बीज की बुवाई के लिए समतल, जल निकास की व्यवस्था वाली, खरपतवार रहित, खेत में पुराने बीजों से रहित तथा जहां तक सम्भव एवं आवश्यकता हो फसल चक्र का ध्यान रखें। जिन फसलों के बीज अगली फसल की बुवाई तक जिन्दा रहते हैं जैसे सरसों आदि के लिए फसल चक्र अति आवश्यक हो जाता है। अन्यथा पुराने खेत में पड़े बीज भी अंकुरित हो जाते हैं जिससे बीज में मिश्रण की संभावना बढ़ जाती है।
- बीज की बुवाई हमेशा पलेवा करके करनी चाहिए। इससे बीजों का अंकुरण एक समय पर होने से फसल की कटाई में सुविधा रहती है तथा फसल में एकरूपता भी बनी रहती है।
- बुवाई के लिए उन्नत प्रजाति का शुद्ध बीज प्रयोग करना चाहिए।
- बीज की निर्धारित मात्रा बुवाई के लिए प्रयोग करनी चाहिए।
- बीज उत्पादन हेतु प्रयुक्त प्रजाति उस क्षेत्र के लिए अनुमोदित होनी चाहिए।
- बुवाई से पूर्व बीजों को उपचारित करना चाहिए जिससे उनका अंकुरण अच्छा हो तथा कीट, फफूँद आदि से बचाव हो सके। उपचारक के लिए थायरम, कैप्टाफ, बाविस्टिन कीटनाशक से तथा बाद में जैविक उपचार जैसे–राइजोबियम आदि द्वारा उपचारित करके बीज की बुवाई करनी चाहिए।

गेहूं का बीज उत्पादन

उन्नत बीज हेतु गेहूं में रोगिंग प्रक्रिया

- शुद्ध बीज पैदा करने के लिए निर्धारित पृथकता दूरी आदि मानकों का ध्यान रखना चाहिए जो सारणी–2 में दर्शाये गए हैं।
- उर्वरकों की निर्धारित मात्रा का उचित अवस्था पर प्रयोग करना चाहिए।
- फसल में निर्धारित अवस्था पर सिंचाई करनी चाहिए।
- फसल को निराई–गुड़ाई करके खरपतवार से रहित रखना चाहिए।
- उचित अवस्थाओं जैसे–बढ़वार की अवस्था, फूल आने की अवस्था तथा बीज पकने की अवस्था पर खेत में घूमकर अन्य प्रजातियों के पौधों को निकालते रहना चाहिए।

- बीज फसल को कीट तथा बीमारियों से बचाने के लिए कृषि रसायनों का उचित समय पर प्रयोग करना चाहिए।
- फसल की कटाई पूर्ण परिपक्व अवस्था पर करनी चाहिए।
- प्रत्येक प्रजाति की कटाई से पूर्व कम्बाइन आदि मशीनों की अच्छी प्रकार सफाई करनी चाहिए।
- प्रत्येक प्रजाति की थ्रेशिंग से पूर्व थ्रेशिंग मशीन की सफाई अवश्य करनी चाहिए।
- खलियान को पूर्ण रूप से खरपतवार तथा अन्य बीजों से रहित रखना चाहिए।
- खलियान का स्थान ऊँचा, खुला हुआ तथा प्रकाश युक्त होना चाहिए।
- बीजों का श्रेणीकरण करते समय भी प्रत्येक प्रजाति से पूर्व ग्रेडिंग मशीन तथा फ्लोर की अच्छी सफाई करनी चाहिए।
- श्रेणीकरण से पूर्व बीज को दरार रहित फर्श पर सुखाना तथा पंखे से साफ करना चाहिए।
- बीज के लिए हमेशा नई बोरियां प्रयोग करनी चाहिए।
- श्रेणीकरण करते समय प्रत्येक प्रजाति के लिए निर्धारित आकार की जालियों का प्रयोग करना चाहिए।

  सारणी 3 में श्रेणीकरण के लिए प्रमुख फसलों की जालियों के आकार दर्शाये गये हैं।
- थ्रेशिंग के बाद ग्रेडिंग में देरी नहीं करनी चाहिए अन्यथा कटे हुये दानों में कीटों का प्रकोप तेजी से होता है, जिसके कारण बीज खराब हो जाता है।

भंडारण में सावधानियां

बीज को थ्रेशिंग व श्रेणीकरण के बाद बीज की बुवाई तक भंडार गृह में रखा जाता है। एक अध्ययन के अनुसार भारत में भंडार के दौरान 9.33 प्रतिशत बीज की हानि होती है जिसमें कीटों, चूहों, गिलहरी, पक्षियों तथा नमी के कारण क्रमशः 2.55, 2.5, 0.85, 0.68 तथा 2.75 प्रतिशत तक की हानि होती है। बीज को भंडारण से पूर्व अच्छी प्रकार से सुखाना चाहिए। सामान्यतः देखा गया है कि 12 प्रतिशत से अधिक नमी तथा 27–37 डिग्री सेल्सियस तापक्रम पर कीटों की अधिक क्रियाशीलता होती है। बीजों की गुणवता बनाये रखने के लिए भंडारण में निम्नलिखित सावधानियां रखनी चाहिए :

- बीज रखने से पूर्व गोदाम की अच्छी प्रकार सफाई तथा संभव हो तो सफेदी भी अवश्य करनी चाहिए।
- बीज गोदाम में दरारें आदि नहीं होनी चाहिए।
- बोरियों में बीज की निर्धारित मात्रा भरकर सिलाई करके प्रजाति का टैग लगाकर रखना चाहिए।
- बीज को भंडार ग्रह में रखने से पूर्व डेसिस या न्यूवान (5 मि.ली./ली. की दर से) घोल का छिड़काव करना चाहिए।
- भंडार गृह में बीज की बोरियों को दीवारों से एक फीट की दूरी पर 6 इंच ऊँचे लकड़ी या प्लास्टिक की आकृति पर रखना चाहिए।
- नियमित अन्तराल पर बीज गोदाम की सफाई तथा बीज का निरीक्षण करना चाहिए। आवश्यकतानुसार कीटनाशकों का छिड़काव करते रहना चाहिए।
- वर्षा ऋतु में 3 ग्रा. सल्फास की गोलियां प्रति वर्ग मी. स्थान या 3 ग्रा. की 2–3 गोली प्रति टन बीज के हिसाब से 20 दिन के अन्तर पर अथवा 2–3 ध्रुमण अवश्य करने चाहिए। ध्रुमण करते समय इस बात का ध्यान रखें कि बीज गोदाम सील बन्द हो, ताकि गैस बाहर न निकले तथा ध्रुमण करते समय मुंह पर मास्क बांधकर रखें।
- प्रत्येक ध्रुमण के 10 दिन बाद गोदाम की खिड़कियां तथा दरवाजे खोल देने चाहिए ताकि स्वच्छ हवा का आवागमन हो।

बीज की पैंकिग

प्रत्येक फसल के बीजों को निर्धारित मात्रा में अथवा आवश्यकतानुसार भरकर पैक करना चाहिए। पैंकिग से पूर्व प्रयोगशाला में बीज का परीक्षण करवाना चाहिए। सामान्यतः अनाज, दलहन, तिलहन वाली फसलों के बीजों को प्लास्टिक अथवा कपड़े की आवश्यकतानुसार आकार की थैलियों में पैक करना चाहिए। सब्जियों एवं फूलों के बीजों की पैकिंग के लिए एल्यूमीनियम फॉइल पाउच, पॉलीथीन बैग, पेपर बैग अथवा कार्ड बोर्ड बाक्स का प्रयोग

सारणी 2: उन्नत बीज के मानक

फसल का नाम	बीज का प्रकार	पृथक्करण दूरी (मी.)	निरीक्षण की संख्या	अवांछनीय पौधों की संख्या (%)	भौतिक शुद्धता (%)	अंकुरण (%)	अन्य पदार्थ (%)	अन्य फसलों के बीज (अधिकतम) प्रति कि.	सामान्य पैकिंग में नमी (%)	पॉलीथीन में नमी (%)
धान	आधार	3	2	0.50	98	85	2	10	13	8
	प्रमाणित	3	2	0.20	98	80	2	20	13	8
गेहूं	आधार	3	2	0.05	97	85	3	10	8	5
	प्रमाणित	3	2	0.20	97	85	3	20	8	5
मक्का	आधार	400	2	1	98	85	2	–	9	8
	प्रमाणित	200	2	1	98	85	2	5	9	8
बाजरा	आधार	400	3	0.50	97	75	3	10	12	8
	प्रमाणित	200	3	0.10	97	75	2	20	12	8
सरसों	आधार	200	3	0.10	98	70	2	5	6	5
	प्रमाणित	100	3	0.50	98	70	2	10	6	5
सोयाबीन	आधार	3	2	0.10	98	70	2	0	12	7
	प्रमाणित	3	2	0.50	98	70	2	10	12	7
अरहर	आधार	200	2	0.10	98	75	2	5	9	8
	प्रमाणित	100	2	0.20	98	75	2	10	9	8
मूँग	आधार	10	2	0.10	98	75	2	5	9	8
	प्रमाणित	5	2	0.20	98	75	2	10	9	8
चना	आधार	10	2	0.10	98	85	2	10	12	8
	प्रमाणित	5	2	0.20	98	85	2	20	12	8
मसूर	आधार	10	2	0.10	98	75	2	0	9	8
	प्रमाणित	5	2	0.20	98	75	2	0	9	8

सारणी 3: बीज के श्रेणीकरण के लिए प्रमुख फसलों की जालियों के आकार एवं प्रकार

क्रम सं.	फसल का नाम	ऊपर वाली जाली का आकार एवं प्रकार	नीचे वाली जाली का आकार एवं प्रकार
1.	गेहूं	5.5–6.0 गोल	1.8 – 2.3 लम्बा
2.	धान	2.8 गोल, 2.9 लम्बा	1.85 – 2.15 लम्बा
3.	ज्वार	4.75 गोल	2.15 – 3.5 लम्बा
4.	बाजरा	3.25 गोल	1.3 लम्बा, 1.3–1.4 गोल
5.	मक्का	10.5–11.0 गोल	6.4 – 7.0 गोल
6.	चना	8.8–9.0 गोल	5.0 – 5.6 गोल
7.	मूँग	5.5 गोल	2.8 – 3.2 लम्बा
8.	लोबिया	7.0 गोल	3.5 लम्बा, 4.0 गोल
9.	मटर	8.8 गोल	4.2 गोल
10.	अरहर	7.5 गोल	3.5 लम्बा, 4.0–4.75 गोल
11.	मसूर	5.0 गोल, 5.5 लम्बा	1.85 – 3.2 लम्बा, 4.0 गोल
12.	सरसों	2.5–3.25 गोल	1.4 गोल, 2.5 लम्बा

बीज की पैकिंग प्रक्रिया

कर सकते हैं। बैग के ऊपर टेग पर बीज उत्पादक का नाम, फसल का नाम, प्रजाति का नाम, बीज का प्रकार, थोक संख्या, अंकुरण प्रतिशत, आनुवंशिक शुद्धता प्रतिशत, भौतिक शुद्धता प्रतिशत, बीज का शुद्ध भार, बीज परीक्षण तिथि एवं बीज वैधता की तिथि आदि लिखा होना चाहिए। प्रजनक बीज के ऊपर गोल्डन टेग तथा प्रमाणित व सत्य बीज के ऊपर नीले रंग का टेग लगाना चाहिए।

सारणी 1: भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित खाद्यान्न फसलों की प्रमुख उन्नत प्रजातियां।

क्रम सं.	फसल का नाम	प्रजाति का नाम
1.	गेहूं	एच.डी.2733, एच.डी.2967, एच.डी.2894, एच.डी.3086, एच.डी.2851, एच.डी.2643, एच.डी.2932, एच.डी.2987, एच.डी. 2985, डब्ल्यू.आर. 544, एच.डी.3059, एच.डी.3043, एच.डी.2687, एच.डी.2851, एच.डी.2894, एच.डी.4713, एच.डी.2833, एच.डी.2864, एच.डी.2824, एच.डी.2864, एच.डी.2888, डी.एल.788–2 आदि
2.	धान	पूसा बासमती–1609, पूसा बासमती–1637, पूसा बासमती–1728, पूसा बासमती–1, पूसा बासमती–1121, पूसा बासमती–1509, पूसा बासमती–1401, पूसा बासमती–1460, पूसा बासमती–44, पी.आर.एच–10, पूसा सुगन्ध 2,3,5, पूसा–1612, पी.एन.आर.–162, पी.एन.आर.–381, पी.एन.आर.–519, पी.एन.आर.–546, जल्दी धान–13, जल्दी धान–6, पूसा–834, पूसा 1592 तथा पूसा–1718 अनुमोदन के लिए चिन्हित की गई हैं।
3.	अरहर	पूसा 991, पूसा 992, पूसा 2001, पूसा 2002
4.	मूँग	पूसा विशाल, पूसा 9531, पूसा 672
5.	सरसों	पूसा सरसों 21, पूसा सरसों 22, पूसा सरसों 24, पूसा सरसों 25, पूसा सरसों 26, पूसा सरसों 27, पूसा सरसों 28, पूसा सरसों 31, पूसा सरसों 30, पूसा अग्रणी, पूसा तारक, पूसा महक, पूसा विजय, पूसा जगन्नाथ, पूसा बोल्ड, पूसा जय किसान, पूसा आदित्य आदि
6.	चना (देसी)	पूसा 5028, पूसा 391, पूसा 372, पूसा 256, पूसा 547, पूसा 1103, पूसा 72, पूसा 362,
7.	चना (काबुली)	पूसा 1053, पूसा 1003, पूसा 1108, पूसा 1105, पूसा 5023, पूसा 1088, पूसा 2024, पूसा 3022
8.	बाजरा	पूसा संकर 605, पूसा कम्पोजिट 338
9.	मसूर	एल. 4147, एल. 4076, एल. 4117, एल. 4594
10.	सोयाबीन	डी.एस. 9712

आमदनी बढ़ोतरी हेतु नई कृषि तकनीकियां एवं अवसर

अजय कुमार, रणबीर सिंह एवं अनिल कुमार मिश्र

जल प्रौद्योगिकी केन्द्र

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली–110012

वर्तमान कृषि में नए एवं संशोधित बीज, फसल की उन्नत किस्में, विकसित तकनीकी उपकरण, उर्वरक, कीटनाशी तथा सिंचाई के पानी आदि का प्रयोग होता है। इनके उपयोग से खाद्य उपज में काफी वृद्धि होती है। लेकिन आज आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय कृषि को एक प्रौद्योगिकी के रूप में विकसित किया जाए और इसके लिए अभिनव कृषि तकनीकों को अपनाया जाए। यह कृषि की एक आधुनिक नवीन अवधारणा है कि भारतीय कृषि में नव प्रयोगों की शुरुआत की जाए। पिछले कुछ समय में निम्न नई कृषि तकनीकों का मानकीकरण हुआ है।

ऊर्ध्वाधर खेती (वर्टीकल फार्मिंग)

देश की तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या के कारण आने वाले दिनों में किसानों के पास कृषि योग्य जमीन कम होती जा रही है। जिस कारण छोटे एवं सीमांत किसानों की संख्या बढ़ रही है। आज शहरों में भी जमीन की कमी हो गई है, जिससे छोटे–छोटे दो–तीन कमरों में ही पूरा घर सिमट कर रह जाता है। इसमें भी अगर घर ऊपर हो तो बालकनी या कमरे तक ही सिमट कर रह जाता है। ऐसी स्थिति में जमीन के नहीं बढ़ने से देश में वर्टिकल फार्मिंग का चलन बढ़ेगा। वर्टिकल खेती, आर्थिक रूप से व्यावहारिक फसलों, शहरों प्राकृतिक व पारिस्थितिक प्रणालियों का अनुकरण करने में बहुमंजिला भवनों के अंदर अपनाई जाने वाली एक ग्रीनहाउस विधि है। बढ़ते शहरीकरण से छोटे होते घरों में गार्डन का सपना अब वर्टिकल गार्डन अवधारणा द्वारा पूरा किया जा सकता है। यह नई जमाने की गार्डनिंग है। आप किसी भी खाली दीवार, खिड़की के आसपास कुछ समय में ही लता या बेल वाला बड़ा लुक पा सकते हैं। इस तरह के गार्डन में वर्मी कम्पोस्ट, गाय मूत्र, पोल्ट्री अपशिष्ट, वूड ऐश आदि के आर्गेनिक मिश्रण से तैयार खाद ही मिट्टी का कार्य करती है।

इस कारण इसमें मिट्टी के बेस के मुकाबले तीन गुना कम वजन रहता है जिससे दीवार पर भार नहीं आता है। अगर आप घरों की बालकनी में वर्टीकल फार्मिंग करना चाहते हैं तो आप आराम से उसमें बिना ज्यादा जगह लिए सब्जियां, औषधीय, सजावटी एवं फूल वाले पौधे उगा सकते हैं। इसमें आप शेल्फ, हैगिंग बास्केट या ट्रेलिस (जाली) का प्रयोग कर सकते हैं। इसके लिए सबसे पहले अपनी बालकनी में देखें कि कितनी धूप आती है ताकि आप उसके अनुसार पौधे लगा सकें। उदाहरण के लिए अगर आपका घर ऐसी जगह है जिसकी बालकनी में खूब धूप आती है तो आप तुलसी, सदाबहार, ऐलोवेरा, गुलाब, गेंदा, गुलदावदी, टमाटर, मूली एवं मिर्च उगा सकते हैं। आप किसी डिब्बे, टब, लकड़ी की क्रेट या बाल्टी का भी प्रयोग कर सकते हैं ताकि अधिक पानी अपने आप निकल सके। इसी तरह कुछ पौधे हैंगिंग बास्केट पर भी टांग सकते हैं ताकि जो पौधे सहारे के अनुसार बढ़ते हैं वे आराम से बढ़ सकें। हैगिंग बास्केट में पैपर, चेरी टमाटर, मटर आदि पौधे सुंदर लगते हैं। बस उन्हें रोज पानी देने की आवश्यकता होती है क्योंकि वे जल्दी सूख जाते है।

मचान खेती

मचान खेती करने की एक ऐसी विधि है जिसमें कद्दू वर्गीय व लता वर्ग की सब्जियों को बांस के लट्ठे, पतले तार, खूंटे व नारियल की रस्सी के द्वारा मचान बनाकर उगाया जाता है तथा सहफसली खेती के रूप में प्याज व लहसुन आदि की फसलों को भी लगाया जाता है।

मचान विधि में बोई जाने वाली फसलें हैं सेम, लौकी, तुरई, करेला, खीरा, परवल व लोबिया तथा मचान के नीचे उगाई जाने वाली सब्जियां हैं प्याज, पालक, चौलाई, मूली, गाजर, टमाटर, बैंगन, मिर्च, शिमला मिर्च, मटर, शलजम, बंदगोभी आदि।

खेतों में बांसों पर मचान खेती

मचान विधि में 500 वर्ग मीटर में 2 x 2 मीटर पर बांस के खंभे खड़े करते हैं। फिर खंभे के ऊपर तार के जाल बनाते हैं। इसमें जनवरी माह में प्याज की रोपाई करते हैं। इसके बाद जनवरी के अंत में खंभे के किनारे लौकी के पौधों की रोपाई करते हैं।

हाइड्रोपोनिक्स (मिट्टी रहित खेती)

हाइड्रोपोनिक्स लेटिन शब्द हाइड्रो, जिसका अर्थ है पानी और पोनोस जिसका अर्थ है श्रम से मिलकर बना है। मिट्टी के बिना पौधों को एक चनियत माध्यम में जहां प्रकाश, तापमान और पोषक तत्व बारीकी से विनियमित हों, में उगाने के विज्ञान को हाइड्रोपोनिक कहते हैं। हाइड्रोपोनिक्स एक ऐसी तकनीक है, जिसमें फसलों को बिना खेत में लगाए केवल पानी और पोषक तत्वों से उगाया जाता है। मिट्टी में पौधों की वृद्धि के लिए जो प्राकृतिक तत्व आवश्यक होते हैं, उन्हीं पोषक तत्वों का उपयोग 'हाइड्रोपोनिक्स' में भी किया जाता है। इसमें यह लाभ है कि पौधों का विकास खरपतवार या मृदा जनित कीट और रोगों के द्वारा बाधित नहीं होता है।

बिना मभदा के खेती

इसके लिए लोहे के मजबूत एंगल से 'वी' आकार का एक ढ़ांचा तैयार किया जाता है जो डेढ़ फीट जमीन में गढ़ा हुआ और जमीन से छह फुट ऊँचा रहता है। इस 'वी' आकार वाले ढांचे के दोनों ओर 6–6 मीटर लंबाई एवं 10 सें.मी. व्यास वाले 3–3 पीवीसी पाइप आमने–सामने लगाए जाते हैं। इन पाइपों पर 30 सें.मी. के अंतराल पर 7.5 सें.मी. व्यास के छेद किए जाते हैं।

इन पाइपों के बंद सिरे की ओर कम से कम 100 लीटर क्षमता की पानी की टंकी जमीन में रखी जाती है। जिससे पौधों के लिए पाइपों में जलापूर्ति की जाती है। इन मोटे पाइपों के निचले सिरों की कीप को पतले पाइपों से जोड़ा जाता है जो अतिरिक्त जल को पुनः पानी की टंकी में पहुंचा देता है।

एरोपॉनिक्स

इस विधि को केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला ने आलू के बीज उत्पादन करने हेतु विकसित किया है। इस विधि में टिश्यू कल्चर (ऊतक संवर्धन) से प्राप्त पौधे को खेत में मिट्टी रहित सिस्टम में लगाया जाता है। इस सिस्टम में पौधों की जड़ें अंधेरे डिब्बों में हवा में ही लटकती हैं और पौधे डिब्बों के ऊपर सीधी सूर्य की रोशनी में फलते–फूलते हैं। विशेष प्रकार की नोजलों से पौधों की जड़ों के ऊपर एक निश्चित अन्तराल के बाद सभी आवश्यक तत्वों से युक्त घोल की महीन फुहार होती रहती है। यह घोल एक टंकी में से लिया जाता है और जड़ों के ऊपर स्प्रे होकर बाद में विभिन्न नालियों में से होता हुआ वापिस उसी टंकी में चला जाता है। यह प्रक्रिया दिन–रात लगातार चलती रहती है जब तक कि फसल की आखिरी कटाई नहीं हो जाती है।

जीरो बजट खेती

इस प्रकार की खेती को वैकल्पिक खेती, कुदरती खेती एवं प्राकृतिक खेती आदि नामों से पुकारा जाता है। इस प्रकार की खेती में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और बाजार से खरीदे गए अन्य रसायनों का प्रयोग बहुत कम या नहीं किया जाता है। इस खेती का अर्थ केवल इतना नहीं है कि यूरिया की जगह गोबर की खाद का प्रयोग हो। इसके अतिरिक्त भी इस खेती के अनेक घटक हैं, जैसे :

- मिट्टी में रसायनों का प्रयोग रोककर मृदा जीवाणुओं की संख्या बढ़ाना।
- फसल अवशेषों की अधिकांश मात्रा को खेतों में प्रयोग करना।
- खेती में फसल विविधीकरण को अपनाना।
- प्राकृतिक खेती में किसान द्वारा उगाई गई देशी किस्मों के बीज बनाना।
- फसलों में रोग व कीटों की रोकथाम के लिए जैविक उपायों को अपनाना।
- खेती में जैविक खाद का ही प्रयोग करना।
- खेती में नमी की पर्याप्त व्यवस्था करना।

जैविक खेती

इस खेती में रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर गोबर की खाद, कम्पोस्ट, फसलों के अवशेषों, हरी खाद एवं जैविक विधि से तैयार खाद का उपयोग किया जाता है। इससे मृदा में कार्बन की मात्रा बढ़ जाती है तथा उसकी उवर्रा–शक्ति भी संरक्षित रहती है। कीट व रोग नियंत्रण के लिए उपयुक्त फसल चक्र, यांत्रिक एवं जैविक नियंत्रण विधियों का प्रयोग किया जाता है।

हमारे देश में हरित क्रांति के दौरान रसायनों का असंतुलित व अनियंत्रित प्रयोग होने से पर्यावरण प्रदूषित एवं मृदा की उर्वरा शक्ति कम हुई है जो मानव स्वास्थ्य के साथ–साथ सभी जीवों के स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है। इन समस्याओं के समाधान का एक ही तरीका है कि वर्तमान में जैविक खेती की जाए ताकि मृदा स्वास्थ्य, पशु स्वास्थ्य, मानव स्वास्थ्य तथा जैव विविधता को सुरक्षित रखा जा सके।

संरक्षण जुताई

यह जुताई की ऐसी विधि है जिसमें खेतों की कम से कम एवं इस तरह से जुताई की जाती है कि पिछली फसलों के अवशेष कम से कम एक तिहाई मृदा क्षेत्र को ढ़क लें। इस विधि में लगभग 30 प्रतिशत फसल अवशेष को मृदा सतह पर रखकर बाकी अवशेषों को मृदा के अंदर दबा दिया जाता है। संरक्षण जुताई करने से फसल की अधिकतम उपज प्राप्त करने के साथ ही श्रम, समय एवं अधिकतम लागत की बचत कर शुद्ध लाभ अर्जित किया जा सकता है। इस जुताई द्वारा ऊर्जा की बचत होती है, मृदा कटाव कम होता है तथा मृदा का उपजाऊपन बढ़ता है। संरक्षण जुताई की विभिन्न विधियां हैंः शून्य जुताई, पलवार जुताई, स्ट्रिप जुताई एवं न्यूनतम जुताई आदि।

गेहूं उगाने की उत्कटता (सघनीकरण) विधि

यह गेहूं की खेती करने का नया तरीका है जिसमें अगेती एवं स्वस्थ पौधा स्थापना, पौधों के बीच प्रतिस्पर्धा को कम करना, मृदा में बढ़ी हुई जैविक सामग्री, सक्रिय मृदा वायु–मिश्रण तथा जल का सावधानीपूर्वक प्रयोग जैसे सिद्धांत गेहूं फसल की उत्पादकता एवं लाभप्रदता को बढ़ाने में सफल सिद्ध हो रहे हैं।

गेहूं सघनीकरण प्रणाली में डिबलिंग विधि अपनाकर 20 x 20 से.मी. की दूरी पर बुवाई करने के लिए उपचारित एवं अर्ध अंकुरित बीजों का उपयोग किया जाता है। पोषक तत्वों के जैविक स्रोतों का कहीं अधिक उपयोग एवं समुचित वायु मिश्रण तथा खरपतवार नियंत्रण के लिए कोनोवीडर द्वारा गुड़ाई की जाती हैं। सुझाई गई पारंपारिक विधि की तुलना में इस विधि में गेहूं की उपज में 20 से 30 प्रतिशत तक वृद्धि करने की क्षमता है।

पूसा हाइड्रोजैल का उपयोग

मृदा में पादप जल उपलब्धता को बढ़ाने के लिए कृषि वैज्ञानिक विभिन्न प्रकार के जैविक एवं रासायनिक हाइड्रोजैल का प्रयोग करने की सलाह देते हैं। अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि मृदा में हाइड्रोजैल को मिलाने से मृदा जल प्रवेश एवं मृदा संरचना में सुधार होता है एवं मृदा कठोरता में कमी आती

पूसा हाईड्रोजैल

है। इसी दिशा में सुपर अवशोषक पॉलीमर्स पूसा हाइड्रोजैल का विकास किया गया है। यह अपने भार से कम से कम 350 गुना अधिक जल अवशोषित कर 50 डिग्री तापमान तक उसे बनाए रखता है। इसके द्वारा जल धारण आसानी से फसलों की जड़ों तक उपलब्ध होता है तथा सूखा आने पर फसलों के लिए जल उपलब्ध रहता है, जिसके फलस्वरूप फसलोत्पादन में बढ़ोतरी होती है। कुछ फसलों जैसे कि मूंगफली, आलू, सोयाबीन, सरसों, गेहूं, प्याज, टमाटर, फूलगोभी, गाजर, स्ट्राबेरी, अफीम, मक्का, गन्ना, धान, गुलदाउदी और कपास में पूसा हाइड्रोजैल बहुत की उपयोगी सिद्ध हुआ है।

जल संरक्षण के 4—आर अपनाएं

- **कमी करना:** पानी का प्रयोग बहुत सोच समझ कर सावधानी के साथ करना चाहिए। छोटी—छोटी कुछ सावधानियां अपना कर हम पानी के प्रयोग को घटा सकते हैं।
- **पनुः प्रयोग:** ग्रे वाटर को शौचालयों या बगीचों आदि में पुनः प्रयोग करके हम काफी पानी बचा सकते हैं। इसलिए जहां संभव हो सके पानी को पुनः प्रयोग कर लेना चाहिए।
- **पुनर्भरण:** पुनर्भरण जल संरक्षण का एक अत्यंत महत्वपूर्ण तरीका है। इसके लिए वर्षाजल संरक्षण किया जा सकता है। जिससे भूमिगत जल रिचार्ज किया जा सके।
- **सम्मान:** पानी का सम्मान सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। यदि हम पानी का सम्मान करते हैं तो उसे बेकार में बहने भी नहीं देते। इसलिए इससे जल स्रोतों की पवित्रता बनाए रखने में और पानी के संरक्षण में बहुत सहायता मिलती है।

उर्वरीकरण (फर्टीगेशन)

उर्वरीकरण दो शब्दों, फर्टिलाइजर और इरीगेशन से मिलकर बना है अर्थात् जल में मिश्रित उर्वरक अतः क्षेत्रक यंत्र की सहायता से ड्रिपरों द्वारा सीधे पौधों के पास पहुंचाया जाता है। उर्वरीकरण में तरल उर्वरकों का ही प्रयोग किया जाता है। परन्तु दानेदार और शुष्क उर्वरकों को भी उर्वरीकरण के द्वारा दिया जा सकता है। उर्वरकों के घोल को उर्वरीकरण से पहले छान लेना चाहिए। उर्वरीकरण हेतु उर्वरक—जैसे यूरिया, अमोनियम सल्फेट, कैल्सियम नाइट्रेट, पोटैशियम नाइट्रेट, पोटैशियम सल्फेट आदि हैं।

उर्वरीकरण से पौधों को सही समय पर अच्छी गुणवता वाले एवं उपयुक्त स्थान पर पोषक तत्वों को पहुंचाने की आवश्यकता होती है। इन तीनों को फर्टीगेशन के माध्यम से नियंत्रित किया जा सकता है। इन्हीं तीन कारकों के आधार पर उपज तथा गुणवता निर्भर करती है।

फेरोमेन पाश का उपयोग

फेरोमेन ट्रेप एक प्रकार का साधारण उपकरण है। इसमें कीप के आकार के मुख्य भाग पर लगे ढक्कन पर मादा कीट की गंध का ल्युर लगाया जाता है, इससे नर कीट आकर्षित होते हैं। इस प्रकार हर प्रकार के कीटों का ल्युर अलग—अलग आता है। जिस कीट की मादा का ल्युर लगाया जाता है उस कीट का नर कृत्रिम गंध के कारण आकर्षित होकर फेरोमेन ट्रैप की कीप में गिर जाता है जो नीचे लगे हुए थैले से निकल नहीं पाता है। इसका उपयोग मूंगफली, दलहनी व सब्जी फसलों एवं तम्बाकू, अरंडी, फल वृक्षों आदि फसलों में विभिन्न नर कीटों विशेषतः फलमक्खी को पकड़ कर जैविक नियंत्रण किया जाता है।

ट्राईकोडर्मा का उपयोग

ट्राईकोडर्मा प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होने वाले फफूंद से जनित एक जैविक फफूंदनाशी है जोकि सभी प्रकार की कृषि योग्य जमीन में पाया जाता है। यह एक जैव नियंत्रण

है जोकि बड़े स्तर पर विभिन्न भूमि जनित तथा पत्ती जनित रोग कारकों की रोकथाम करता है। जैव नियंत्रक *ट्राईकोडर्मा हर्जियानम* एवं *ट्राईकोडर्मा विरिडी* की उन्नत जाति के द्वारा बनाए गए उत्पाद से मृदा जनित पादप रोगों का जैविक नियंत्रण बेहतर तरीके से किया जा सकता है।

जलकृषि

कृषि के अंतर्गत जलजीव पालन भी एक अहम उद्यम है जिसे सामान्य रूप से जलकृषि कहते हैं। यह हमारे खाद्य उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है। इससे पोषण सुरक्षा, रोजगार सृजन एवं आय के साथ विदेशी मुद्रा सृजन होता है। अतः यह अति आवश्यक है कि वर्तमान में उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम दोहन कर मत्स्य उत्पादन हेतु किया जाए। देश में अंतःस्थलीय मत्स्य उत्पादन का लगभग 70 प्रतिशत भाग कार्प मछलियों से आता है। लोगों की पसंद, क्षेत्रीय बाजार की मांग, आर्थिक महत्व, स्वाद, कृषि दर, रोग प्रतिरोधक क्षमता, उत्पादन क्षमता इत्यादि के आधार पर कार्प मछलियों की अनेक जातियों का पालन किया जाता है। भारतीय कार्प मछली पालन के अंतर्गत मुख्य रूप से 3 बड़ी कार्प मछलियों, भाकुर, रोहू तथा नैन को चुना जाता है। इनके अलावा 3 विदेशी मूल की मछलियों में ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प एवं कॉमन कार्प भी पाली जाती हैं। क्षेत्रफल के आधार पर देखें तो मीठे जल में मछली पालन आजीविका का एक बेहतर स्रोत बन सकता है। मछली पालन के साथ अन्य कृषि आधारित उद्यम जैसे पशु पालन, मुर्गी पालन, बतख पालन, फसल व फल उत्पादन आदि अपनाया जाता है जिसे समेकित मछली पालन कहा जाता है। ऐसी पद्धति अपनाने से भरपूर उपज के साथ अधिक आय प्राप्त की जा सकती है।

फार्म पर्यटन योजना

अभी हाल ही के वर्षों में हरियाणा के पर्यटन विभाग ने अपने क्षेत्र की जमीन से अनाज निकालने के साथ–साथ सैलानियों को लुभा कर विदेशी मुद्रा कमाने का भी तरीका ढूंढ निकाला है और यह तरीका ''फार्म टूरिज्म'' का है। यहां पर कहीं औषधीय पौधों को बढ़ावा दिया गया है, कहीं जैविक खेती को, तो कहीं पशु पालन को, कहीं मधुमक्खी पालन के बारे में बताया गया है, तो कहीं फूलों की खेती पर जोर दिया गया है। फार्म टूरिज्म की परिकल्पना को साकार करने के लिए उन्होंने लोगों को उन का बचपन याद दिलाने की कोशिश की है। फार्म टूरिज्म के लिए पर्यटन विभाग ने दिल्ली के नजदीक फरीदाबाद, गुडगांव, रोहतक, हिसार और करनाल आदि में किसानों ने मिलकर खेत खलिहानों और फार्म हाउसों को पर्यटन के तौर पर विकसित किया है।

फार्म टूरिज्म के उदाहरण

कल्की मिस्टिकः यहां आप गाय का दूध दुहा सकते हैं। ट्रैक्टर और बैलगाड़ी की सवारी का मजा ले सकते हैं। कठपुतली शो और लोक नृत्य में कलाकारों के साथ थिरक सकते हैं। इतना ही नहीं, यहां आप योग और ध्यान की भी शिक्षा ले सकते हैं।

सुरजीवनः यहां पर बागवानी के शौकीनों के लिए हर्बल, मेडिसिन प्लांट से लेकर खूशबू वाले पौधों के बीच हुए हैं। सुरजीवन की सैर के लिए दिल्ली से 20 कि.मी. दूर जयपुर राजमार्ग पर क्लासिक गोल्फ रिसोर्ट के नजदीक जाना होगा।

फूड टूरिज्म

फूड टूरिज्म एक ऐसे व्यवसाय के रूप में उभर रहा है, जहां टूरिस्ट विलासिता को छोड़ उस जगह के स्थानीय जीवन को नजदीक से देखना–जानना चाहते हैं, जिसमें स्थानीय खाने को चखना और वहां के भोज्य संस्कृति को समझना सम्मिलित है।

फूड टूरिज्म का उद्देश्य स्थानीय संस्कृति को बढ़ावा देना है। इसमें आप उस जगह के खाने का मजा तो लेते ही हैं, साथ ही व्यंजन बनाने की प्रक्रिया की जानकारी भी आपको मिलेगी। आप वहां के खान पान और पकाने की तकनीक को भी समझ पाएंगे।

मौसम आधारित कृषि प्रबंधन

जलवायु परिवर्तन के कारण मौसम विविधता में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। ऐसे में मौसम पूर्वानुमान के आधार पर

कृषि परामर्श देना तथा सही समय पर कृषि में उचित प्रबंधन करना कृषि पैदावार को बढ़ाने, संसाधनों की बचत करने, कृषि में होने वाली क्षति को कम करने तथा किसानों की आर्थिक स्थिति को सुधारने में सहायक होता है।

अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए मानसून से पूर्व यदि किसान थोड़ा ध्यान रखें तो उनकी पैदावार में काफी बढ़ोतरी हो सकती है। साथ ही पानी की बचत भी की जा सकती है जिससे कृषि के साथ पीने के पानी की कमी को भी पूरा कर सकते हैं। रबी की कटाई के बाद अप्रैल–मई के दौरान जबकि तापमान 40 डिग्री सेल्सियस या उससे अधिक हो तो खाली खेतों की गहरी जुताई कर जमीन को खुला छोड़ दें ताकि सूर्य की तेज धूप से गरम होने पर इसमें छिपे कीड़ों के अंड़े तथा खरपतवारों के बीज नष्ट हो जाएं। खेत को समतल करवाएं, खेतों की मेंड़ों की मरम्मत करवाएं तथा इन्हें ऊँची बनवाएं जिससे बरसात का अधिक से अधिक पानी खेत में एकत्रित हो सकें। मानसून के दौरान होने वाली बरसात के पानी का यदि हम उचित प्रबंधन करें तो हम कृषि तथा अन्य कार्यों में होने वाले जल की पूर्ति कर सकते हैं। यदि मौसम पूर्वानुमान से किसानों को अवगत करा दिया जाए और यदि बीज की बुवाई के लिए अनुकूल मौसम नहीं है तब बीज, उर्वरक, डीजल एवं बिजली इत्यादि पर होने वाले व्यय को कम कर सकते हैं।

खेत उपकरणों का कस्टम हायरिंग मॉडल

कृषि के आधुनिकीकरण में कृषि यांत्रिकीकरण एक महत्वपूर्ण घटक है। किसानों की मांग एवं आवश्यकता को देखते हुए विभिन्न कृषि योजनाओं में कृषि यांत्रिकीकरण को शामिल किया गया है। कस्टम हायरिंग मॉडल भी कृषि यांत्रिकीकरण की योजना है जिसके अंतर्गत छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए कृषि उपकरणों को कस्टम हायरिंग केन्द्रों के द्वारा किराए पर उपलब्ध कराया जाता है। जो कृषि यंत्र एवं मशीनरी पर मिशन की ओर से एक ऐसी पहल है जिसमें छोटे व सीमांत जोत वाले किसान कृषि यंत्रों की सेवाओं को किराए पर लेकर उपयोग कर सकते हैं तथा समय एवं श्रम की बचत करके फसल उत्पादन के क्षेत्र में बेहतर परिणाम प्राप्त कर सकते हैं। इन केन्द्रों को स्थापित करने के लिए कृषि स्नातकों को सरकार की ओर से सब्सिडी (अनुदान राशि) भी दी जा रही है।

कस्टम हायरिंग केन्द्र का स्थानः इन केन्द्रों की स्थापना के लिए यह आवश्यक है कि ये गांवों और एक आम स्थान के 5 से 7 किलोमीटर दूरी पर स्थित होने चाहिए ताकि स्थानीय किसानों को लाभ मिल सके। इन केन्द्रों से परिवहन लागत और समय की बचत होगी।

कस्टम हायरिंग केन्द्र इकाईः कस्टम हायरिंग केन्द्र मूल रूप कृषि मशीनरी, यंत्र एवं उपकरणों की सम्मिलित इकाई है। इन इकाइयों में विशेष रूप से ट्रैक्टर, पावर टिलर, लेजर लैंड लेवलर, जुताई, बुवाई, हार्वेस्टर एवं स्वचालित मशीनरी का उपयोग किया जाता है।

जब तक इस देश का राज–काज अपनी भाषा में नहीं चलेगा तब तक हम नहीं कह सकते कि देश में स्वराज्य है।

मोरारजी देसाई

अत्यंत विषम परिस्थितियों वाले ए1 जोन के लिए बाजरे की संस्तुत किस्में

एस.पी. सिंह[1], मुकेश शंकर एस.[1], तारा सत्यवती[1] एवं युगल किशोर काला[2]

आनुवंशिकी संभाग

[1]भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली–110012

[2]परियोजना समन्वयक, ए.आई.सी.आर.पी., बाजरा, (भा.कृ.अ.प.) मंडोर, जोधपुर, राजस्थान

देश के वर्षा आधारित क्षेत्रों के गरीब एवं कम जोत वाले किसानों के लिए बाजरा एक मुख्य फसल है जिसका उपयोग मुख्य रूप से भोजन एवं चारे के रूप में किया जाता है। इसका भोजन एवं चारा दोनों ही पोषक तत्वों से भरपूर होता है। यह कम समय में तैयार होने वाली फसल है एवं इसे कम खाद एवं पानी की आवश्यकता होती है। बाजरे की खेती विषम परिस्थितियों में की जाती है जहाँ अन्य फसलें या तो उगाई नहीं जा सकती या उनका उत्पादन आर्थिक रूप से लाभकारी नहीं होता। बाजरे में पोषक तत्व जैसे लोहा, जस्ता, कैल्सियम प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इन सभी गुणों के बावजूद, बाजरे को निम्न श्रेणी की फसल माना जाता है। इसका मुख्य कारण जानकारी का अभाव है। बाजरा, गेहूं एवं धान के बाद तीसरे नंबर की मुख्य फसल है। वर्ष 2015–16 के दौरान, बाजरे की खेती 7.128 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में की गई। इस अवधि के दौरान बाजरे की उत्पादकता 1132 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर रही। क्षेत्रफल के अनुसार देश का 90 प्रतिशत बाजरा पांच राज्यों जैसे राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, उत्तर प्रदेश एवं हरियाणा में उगाया जाता है। बाजरा मुख्यतः खरीफ मौसम की फसल है। यह गुजरात, राजस्थान, उत्तर प्रदेश में खरीफ (फरवरी–मई) एवं महाराष्ट्र एवं गुजरात के कुछ हिस्सों में इसकी खेती रबी–मौसम (नवंबर–फरवरी) में भी की जाती है।

बाजरा उगाने से किसानों को दाना एवं चारा दोनों मिल जाते हैं जो जीवन निर्वाह के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। अग्रिम आकलन के अनुसार 2016–17 में, बाजरे का क्षेत्र 7.48 मिलियन हेक्टेयर होने का अनुमान है। क्षेत्र घटने के बावजूद भी बाजरे का उत्पादन लगातार बढ़ रहा है। पिछले चार वर्षों के आधार पर राजस्थान, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, हरियाणा एवं गुजरात राज्यों में बाजरे का लगभग 95 प्रतिशत क्षेत्र है जिससे लगभग 88 प्रतिशत उत्पादन हुआ है। वर्ष 1991–2016 के दौरान 113 से अधिक संकर किस्में विभिन्न परिस्थितियों के लिए विकसित हुई है। जिसके फलस्वरूप 1991 से 2015 के बीच बाजरे की उत्पादकता में 27 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष के हिसाब से बढ़ोतरी हुई। संकर किस्मों के बीज उत्पादन ने इस बढ़ोतरी में महत्तवपूर्ण भूमिका निभाई है एवं किसानों की बीज की मांग को काफी हद तक पूरा किया। इसके कारण वर्ष 1986 से अब तक बाजरे की उत्पादकता में 124 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो किसी भी खाद्य फसल में सर्वाधिक है।

बाजरा उगाने वाले क्षेत्र

जलवायु एवं वर्षा के आधार पर देश के बाजरा उगाने वाले क्षेत्रों को निम्नलिखित तीन भागों में विभक्त किया गया है:

क्षेत्र ए$_1$– इसके अंतर्गत राजस्थान, हरियाणा एवं गुजरात के वे हिस्से आते हैं जहाँ वर्षा 400 मिलीमीटर से कम होती हैं।

क्षेत्र ए– इसके अंतर्गत उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, गुजरात के वे क्षेत्र आते हैं जहाँ वर्षा 400 मिमी. से अधिक होती है। इस क्षेत्र में बलुई एवं बलुई–दोमट मिट्टी होती है। इस क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले राज्यों के कुछ हिस्सों में सिंचाई की भी सुविधा है।

क्षेत्र बी– इसके अंतर्गत महाराष्ट्र एवं दक्षिणी भारतीय राज्य जैसे आंध्र प्रदेश, कर्नाटक व तमिलनाडु आदि राज्य आते हैं। इस क्षेत्र में भी वर्षा 400 मिमी. से अधिक होती है।

ए$_1$ जोन की अत्यंत विषम परिस्थितियों के कारण किसानों द्वारा बाजरे की खेती करना एक विवशता है क्योंकि इस क्षेत्र में अन्य फसल का होना मुश्किल है। बाजरे की उन्नत किस्में

जितनी तेजी से सुगम परिस्थिति वाले क्षेत्रों में फैली हैं उतनी तेजी से विषम परिस्थिति वाले क्षेत्रों, जैसे $ए_1$ जोन में नहीं फैल पाई हैं। लगभग 4.1 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र, इस जोन के अंतर्गत आता हैं जिसमें से 3.2 मिलियन हेक्टेयर राजस्थान में, 0.45 मिलियन हेक्टेयर हरियाणा एवं 0.45 मिलियन हेक्टेयर गुजरात के अंतर्गत आता है। इस जोन पर अनुसंधान कार्य को और अधिक प्राथमिकता देने की आवश्यकता है। राजस्थान के जैसलमेर, बीकानेर, श्रीगंगानगर, हनुमानगढ़, बाड़मेर, जोधपुर, नागौर, चूरू, झुंझुनू, जालोर एवं पाली जनपद इस जोन के अंतर्गत आते हैं। यह जोन अधिक तापमान एवं सूखे के लिए चिन्हित है। इस जोन की उत्पादकता सबसे कम है और कुछ भागों में तो यह 100 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर से भी कम है।

किस्मों का चुनाव

बाजरे में किस्मों का विकास जोन के अनुसार हुआ है। निश्चित रूप से किसानों को $ए_1$ जोन के लिए विकसित किस्मों का ही चुनाव करना चाहिए। संकर एवं संकुल दोनों तरह की किस्में इस जोन के लिए विकसित की गई हैं। संकर किस्मों की उपज संकुल किस्मों से अधिक होने के कारण किसानों का प्रथम विकल्प संकर किस्म ही होनी चाहिए।

$ए_1$ जोन के लिए बाजरे की संस्तुत किस्में

नवीनतम आंकड़ों के अनुसार, अप्रैल 2017 तक बाजरे में 165 संकर किस्में विकसित हुई हैं। जिनमें से केवल 16 संकर किस्में ही जोन $ए_1$ के लिए विकसित हुई हैं। इन 16 संकर किस्मों में भी 14 किस्में पब्लिक सेक्टर द्वारा विकसित की गई हैं और प्राइवेट सेक्टर द्वारा केवल 2 संकर किस्में ही विकसित की गई हैं। ए.आई.सी.पी.एम.आई.पी., सी.सी.एस.एच. ए.यू. हिसार ने सात संकर किस्में (एच.एच.बी. 272, एच.एच.बी. 234, एच.एच.बी. 226, एच.एच.बी. 216, एच.एच.बी 67 इम्प्रूवड, एच.एच.बी. 68 एवं एच.एच.बी. 67), ए.आई.सी.पी.एम.आई.पी. एम.आर.एस. जामनगर ने तीन संकर किस्में (जी.एच.बी. 757, जी.एच.बी. 719 एवं जी.एच.बी. 538), ए.आई.सी.पी.एम.आई.पी., एस.के.आर.ए.यू., जयपुर ने भी तीन संकर किस्मों (आर.एच. बी. 223, आर.एच.बी. 177, आर.एच.बी. 154), ए.आई.सी.पी.एम. आई.पी., जोधपुर ने एक संकर किस्म (एम.पी.एम.एच. 21) का विकास किया है। (तालिका–1)

पूसा कम्पोजिट 443

इस जोन के लिए प्राइवेट सेक्टर द्वारा केवल दो संकर किस्मों का विकास किया है। एक संकर किस्म बायो–70, बायो सीड्स रिसर्च इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, हैदराबाद एवं द्वितीय संकर किस्म जे.के.बी.एच. 1008 है जो जे.के. एग्री– जेनेटिक्स लिमिटेड, हैदराबाद द्वारा विकसित की गई।

ए1 जोन के लिए संस्तुत किस्मों का रेखाचित्र द्वारा चित्रण

इस प्रकार पब्लिक सेक्टर द्वारा 14 संकर किस्में एवं प्राइवेट सेक्टर द्वारा दो संकर किस्मों का विकास किया गया। इस क्षेत्र के लिए संकर किस्मों के विकास के लिए प्राइवेट सेक्टर को भी अधिक प्रयास करने होंगे। पब्लिक सेक्टर द्वारा तीन संकुल किस्में भी इस जोन के लिए विकसित की गई हैं। मंडोर बाजरा कम्पोजिट 2 जो एस.के.आर.ए.यू., ए.आर.एस. मंडोर, पूसा संकुल 443 जो भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली एवं सी.जैड.पी. 9802 जो सी.ए.जैड.आर.आई., जोधपुर द्वारा विकसित की गई है। (तालिका–1)

तालिका 1: $ए_1$ जोन के लिए विकसित बाजरे की संकर एवं संकुल किस्मों का विवरण

किस्म	पितृत्व	अधिसूचना	अनुकूलन के क्षेत्र	विशिष्ट गुण
आर. एच. बी. 223 (एम. एच. 1998)	आई.सी.एम.ए. 96666 x आर.आई.बी. 3135–18	चिन्हित की गई, 2017	राजस्थान, हरियाणा एवं गुजरात के शुष्क क्षेत्र	जल्दी तैयार होने वाली
जे.के.बी.एच. 1008 (एम.एच. 1828)	जे.के.एम.एस. 1954ए x जे.के.आर. 16010	एस.ओ. 2238 (ई), 2016–6–29	राजस्थान, हरियाणा एवं गुजरात ($ए_1$ जोन)	जल्दी तैयार होने वाली, भूरे एवं ग्लोब्यूलर आकृति के दाने, डाउनी मिल्ड्यू एवं ब्लास्ट की अवरोधी।
एम.पी.एम.एच. 21 (एम.एच.1777)	आई.सी.एम.ए. 93333 x एम.आई.आर. 524	2016	राजस्थान, हरियाणा एवं गुजरात ($ए_1$ जोन)	जल्दी तैयार होने वाली, भूरे रंग वाले एवं हेक्सागोनल आकृति के दाने, डाउनी मिल्ड्यू, स्मट एवं ब्लास्ट की अवरोधी।
एच.एच.बी. 272 (एम.एच. 1837)	एच.एम.एस. 47ए x ए.सी. 04/13	2016	राजस्थान, हरियाणा एवं गुजरात ($ए_1$ जोन)	जल्दी तैयार होने वाली, भूरे एवं ग्लोब्यूलर आकृति के दाने, ब्लास्ट की अवरोधी।
एच.एच.बी. 234 (एम.एच. 1561)	एच.एम.एस. 7ए x एच. 77/833–2–202	एस.ओ. 952 (ई), 2013–4–10	पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात व हरियाणा के शुष्क क्षेत्र	जल्दी तैयार होने वाली, कैंडल की आकृति की बाली जिसमें छोटे तुड़ हैं, दानों का आकार मध्यम, डाउनी मिल्ड्यू की अवरोधी।
बायो 70 (एम.एच. 1632)	11ए x आर. 207	एस.ओ. 2125 (ई), 2012–9–10	पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात व हरियाणा के शुष्क क्षेत्र	जल्दी तैयार होने वाली, कोनिकल कॉम्पैक्ट बाली, पीले रंग के परागकोश, भूरे रंग एवं ग्लोब्यूलर आकृति के दाने, डाउनी मिल्ड्यू रोग की अवरोधी।
एच.एच.बी. 226 (एम.एच. 1479)	आई.सी.एम.ए. 843–22 x एच.बी.एल. 11	एस.ओ. 632 (ई), 2011–3–25	पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात व हरियाणा के शुष्क क्षेत्र	मध्यम अवधि में तैयार होने वाली, मध्यम ऊंचाई, गहरे हरे रंग की पत्ती, कैंडल की आकृति की एवं तुड़ वाली बाली, डाउनी मिल्ड्यू रोग की अवरोधी।
आर.एच.बी. 177 (एम.एच. 1486)	आई.सी.एम.ए. 843–22 x आर.आई.बी. 494	एस.ओ. 632 (ई), 2011–3–25	पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात व हरियाणा के शुष्क क्षेत्र	जल्दी तैयार होने वाली, मध्यम ऊंचाई, बेलनाकार एवं तुड़ वाली बाली, हल्के पीले परागकोश, डाउनी मिल्ड्यू रोग की अवरोधी।
एच.एच.बी. 216 (एम.एच. 1421)	एच.एम.एस. 37ए x एच.टी.पी. 313/	एस.ओ. 211 (ई), 2010–1–29	पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात व हरियाणा के शुष्क क्षेत्र	मध्यम अवधि में तैयार होने वाली, डाउनी मिल्ड्यू रोग की अवरोधी, कैंडल की आकृति की, मध्यम लम्बाई एवं भूरे तुड़ वाली बाली।
आर.एच.बी. 154	आई.सी.एम.ए. 95444 x आर.आई.बी. 57 एस. /05	एस.ओ. 2187 (ई), 2009–8–27	पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात व हरियाणा के शुष्क क्षेत्र	जल्दी तैयार होने वाली, मध्यम ऊंचाई, डाउनी मिल्ड्यू रोग की अवरोधी, गिरने के प्रति अवरोधी, बेलनाकार बाली एवं हल्के पीले रंग के परागकोष।
जी.एच.बी. 757	आई.सी.एम.ए. 92777 x जे. 2467	एस.ओ. 632 (ई), 2008–1–10	पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात व हरियाणा के शुष्क क्षेत्र	जल्दी तैयार होने वाली, मध्यम ऊंचाई, बेलनाकार बाली, बैंगनी रंग के परागकोष, भूरे रंग एवं ग्लोब्यूलर आकृति के दाने।
जी.एच.बी. 719	आई.सी.एम.ए. 95222 x जे. 2454	एस.ओ. 122 (ई), 2007–2–6	पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात व हरियाणा के शुष्क क्षेत्र	70–75 दिनों में तैयार होने वाली, कोनिकल आकृति की बेलनाकार एवं तुर वाली ठोस बाली, भूरे रंग के ग्लोब्यूलर आकृति एवं मध्यम आकार के दाने, सूखा अवरोधी।
जी.एच.बी. 538	आई.सी.एम.ए. 95444 x जे. 2340	एस.ओ. 1177 (ई), 2005–8–25	पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात व हरियाणा के शुष्क क्षेत्र	जल्दी तैयार होने वाली, सूखे के लिए अत्यंत अवरोधी, डाउनी मिल्ड्यू रोग की अवरोधी, गिरने के प्रति अवरोधी।
एच.एच.बी. 67 (इम्प्रूव्ड)	आई.सी.एम.ए. 843–22 x एच. 77/833–2–202	एस.ओ. 1156 (ई), 11–05–2005	पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात व हरियाणा के शुष्क क्षेत्र	अति शीघ्र तैयार होने वाली, सूखे एवं डाउनी मिल्ड्यू के लिए अत्यंत अवरोधी, भारत में आण्विक चिन्हक की सहायता से विकसित प्रथम किस्म।
एच.एच.बी. 68	842ए x एच. 77/833–2	एस.ओ. 615 (ई), 1993–8–17	हरियाणा	तैयार होने की अवधि 60–62 दिन, ठोस बेलनाकार बाली, पीले परागकोष, ग्लोब्यूलर भूरे रंग के दाने, सूखा अवरोधी, बहु–फसली योजना के लिए उपयुक्त।
एच.एच.बी. 67	843ए x एच. 77/833–2	एस.ओ. 386 (ई), 1990–5–15	सम्पूर्ण भारत	तैयार होने की अवधि 60&62 दिन, मध्यम ऊंचाई, पतला तना, मध्यम चौड़ी पत्तियां, अर्ध–ठोस एवं स्पिंडल आकृति की बाली, पीले परागकोष, भूरे ग्लोब्यूलर आकृति के दाने, लवण एवं सूखे के लिए सहनशील, बहु–फसली योजना के लिए उपयुक्त।

किस्म	पितृत्व	अधिसूचना	अनुकूलता के क्षेत्र	विशिष्ट गुण
मंडोर बाजरा कम्पोजिट 2 (एम.बी.सी. 2) (एम.पी. 489)	–	एस.ओ. 2326 (ई), 2011–10–10	राजस्थान, हरियाणा एवं गुजरात	जल्दी तैयार होने वाली, मध्यम ऊंचाई, मध्यम लम्बाई वाली अर्ध–ठोस बेलनाकार बाली, भूरे रंग एवं ओबोवेट आकृति के दाने।
पूसा संकुल 443 (एम.पी. 443)	–	एस.ओ. 449 (ई), 11–02–2009	राजस्थान, हरियाणा एवं गुजरात	जल्दी तैयार होने वाली, मध्यम ऊंचाई, रोड की आकृति की बाली, मोटे दाने।
सी.जेड.पी. 9802	–	एस.ओ. 632 (ई), 2003–3–12	राजस्थान, हरियाणा एवं गुजरात के शुष्क क्षेत्र	तैयार होने की अवधि 70–72 दिन, मध्यम ऊंचाई, कल्लों का फुटाव अच्छा, पतला तना, संकरी पत्ती, पतली कैंडल के आकार की बाली, हल्के पीले एवं मध्यम आकार के दाने, सूखा अवरोधी एवं सूखे चारे की अच्छी गुणवता।

$ए_1$ जोन में उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारक

इस जोन का वातावरण फसल उगाने के लिए बहुत कठिन एवं विपरित है एवं बाजरे की फसल अधिकतर क्षेत्रों में पूर्णतः वर्षा पर आधारित है। अधिक तापक्रम एवं अप्रत्याशित सूखा इस क्षेत्र की विशेषता है। इस क्षेत्र की कम उत्पादकता के मुख्य कारण हैः किसानों द्वारा स्थानीय किस्मों को उगाना जिनकी उपज कम है और वे विभिन्न जैविक प्रतिबलों के प्रति संवेदनशील हैं। अजैविक प्रतिबल जैसे सूखा जिसकी अवधि एवं तीव्रता अलग–अलग होती है, कम वर्षा वह भी अनियमित, अधिक तापमान, भूमि की कम उर्वरता, जमीन की सतह पर कड़ी परत बनना एवं विभिन्न रोग जैसे डाउनी मिल्ड्यू, स्मट, अरगट, एवं झुलसा आदि इस क्षेत्र में बाजरे के उत्पादन को प्रभावित करते हैं।

भविष्य की प्राथमिकताएं एवं चुनौतियां

जोन $ए_1$ की उत्पादकता जोन 'ए' एवं जोन 'बी' की अपेक्षा बहुत कम है। कम उत्पादकता के मुख्य कारण विषम जलवायु, विभिन्न जैविक एवं अजैविक तनाव एवं भूमि की उर्वरा शक्ति का कम होना है। बाजरा प्रजनन पर कार्य करने वाले विभिन्न केंद्रों द्वारा बाजरे की संकर एवं संकुल किस्में इस जोन के लिए विकसित की गई हैं। स्थानीय किस्मों को, अधिक उपज वाली किस्मों से प्रतिस्थापित करना चुनौतीपूर्ण है। संकर किस्मों एवं संकुल किस्मों का जब इस क्षेत्र में परीक्षण किया गया तो पता चला कि संकर किस्मों की चारे एवं दाने की उपज संकुल किस्मों से बेहतर है। लेकिन किसानों को कम मूल्य पर संकर किस्मों का बीज उपलब्ध कराना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस जोन के लिए विकसित अधिकतर संकर किस्में पब्लिक सेक्टर द्वारा विकसित की गई हैं एवं इन संकर किस्मों का बीज उत्पादन एक कठिन समस्या है। $ए_1$ जोन के अप्रत्याशित वातावरण के कारण, प्राइवेट सेक्टर इस क्षेत्र पर अधिक ध्यान नहीं दे रहा है। कभी–कभी किसानों को इस क्षेत्र में दो से तीन बार बुवाई करनी पड़ जाती है। इस कारण भी किसान स्थानीय किस्मों एवं संकुल किस्मों को लगाना पसंद करते है क्योंकि इन किस्मों का बीज सस्ता मिल जाता है एवं संकर किस्मों की तरह किसान को हर वर्ष बीज खरीदना नहीं पड़ता। इस क्षेत्र में संकर किस्मों को बढ़ावा देने के लिए इन किस्मों के बीज को किसानों को कम दाम पर उपलब्ध करना होगा। यह तभी संभव है जब संकर किस्मों का मूल्य संकुल किस्मों के बराबर हो जाए। इसके लिए राजस्थान, हरियाणा एवं गुजरात राज्यों के बीज निगमों को मिलकर काम करना होगा और संकर किस्मों का अधिक से अधिक बीज उत्पादन करना होगा। इस जोन के लिए प्राइवेट सेक्टर को भी अधिक मानवीय सोच का परिचय देते हुए, अधिक संकर किस्में विकसित करनी चाहिए और किसानों को उनका बीज कम मूल्य पर उपलब्ध कराना चाहिए।

बदलते मौसम में कृषि उत्पादन में बढ़ोतरी के लिए वेब पेज तथा एस.एम.एस. द्वारा दी गई मौसम आधारित कृषि सलाह का महत्व

अनन्ता वशिष्ठ एवं पी. कृष्णन

कृषि भौतिकी संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

कृषि उत्पादन में मौसम की मुख्य भूमिका होती है। हमारे देश में कृषि उत्पादन की सफलता सामान्य मानसून एवं अनुकूल मौसम पर निर्भर करती है। हाल ही के वर्षों में जलवायु परिवर्तन के कारण मौसम विविधता में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। कृषि वैज्ञानिकों द्वारा अनगिनत तकनीकियों का विकास किया जा रहा है, लेकिन इनकी सफलता असामान्य मौसम में बढ़ोतरी की वजह से कम हो रही है। ऐसी स्थिति में मौसम पूर्वानुमान तथा मौसम आधारित कृषि सलाह की जानकारी सही समय पर किसानों के लिए बहुत लाभकारी होती हैं। इससे कृषि में मौसम द्वारा होने वाली क्षति को कम किया जा सकता है। यदि किसानों को मौसम में होने वाले बदलाव की जानकारी तथा इसके आधार पर कृषि क्रियाओं की जानकारी सही समय पर एस.एम.एस तथा वेब पेज द्वारा दी जाए तो वे समय पर कृषि में उचित प्रबंधन कर सकते हैं, जिससे कृषि में होने वाली लागत में कमी आएगी।

मौसम की जानकारी का फसल उत्पादन में उपयोगिता

मौसम की जानकारी कृषि पैदावार की गुणवता एवं उपज दोनों को बढ़ाने तथा पैदावार मूल्य घटाने में सहायक होती है। यदि हमारे पास मौसम संबंधी आंकड़े उपलब्ध हैं तो हम इन आंकड़ों से अनुपयुक्त मौसम की गणना कर सकते हैं, जिससे कृषि में उचित प्रबन्धन करके क्षति को कम से कम कर सकते हैं। जब मौसम अनुकूल होता है तब विभिन्न प्रकार के कृषि कार्य करने से पैदावार में बढ़ोतरी होती है। उदाहरण के लिए यदि गेहूं की फसल ऐसे समय पर काट दी जाए जब मौसम में नमी ज्यादा हो तो यह जल्दी खराब हो जाएगी। फसल की पैदावार में मौसम की मुख्य भूमिका होती है। यह फसल पर सीधे प्रभाव डालती है। अप्रत्यक्ष रूप से रोगों व कीटों, मिट्टी की नमी तथा प्रबंधन पर प्रभाव डालती है।

मौसम की विविधता का पैदावार पर असर

मौसम की विविधता का कृषि कार्यों से काफी गहरा संबंध होता है। फसलों की पैदावार तथा गुणवता पर जलवायु परिवर्तन के कारण कमी आती है। भारत में उगाई जाने वाली फसलों के उत्पादन पर जलवायु परिवर्तन का काफी असर पड़ता है क्योंकि फसल को अंकुरण से लेकर पकने तक एक उपयुक्त मौसम की जरूरत पड़ती है, जो कम से कम एक निश्चित अवधि तक होना चाहिए। लेकिन यदि अंकुरण के समय उपयुक्त तापमान नहीं मिला तो अंकुरण ठीक से नहीं होगा। फसल में दाना बनने के दौरान तापमान में अचानक वृद्धि होने से अनाज जल्दी पकने लगता है। अतः दाना बनने की अवधि में कमी आ जाती है, जिससे उत्पादन में कमी आती है, साथ ही उत्पादन की गुणवता भी प्रभावित होती है।

मौसम आधारित कृषि सलाह का महत्व

मौसम समय तथा क्षेत्र के साथ–साथ बदलता रहता है। कृषि उत्पादन की सफलता अनुकूल मौसम पर निर्भर करती है। मौसम की अनिश्चिता फसलों की पैदावार पर असर डालती है। मौसम पूर्वानुमान के आधार पर कृषि कार्यों में उचित प्रबंधन करने से कृषि में नुकसान की पूरी तरह से भरपाई करना संभव नहीं है लेकिन इसे कुछ हद तक कम किया जा सकता है। उदाहरणार्थ यदि किसान को बीज की बुवाई करनी है और किसान को मौसम की जानकारी उपलब्ध नहीं है, (जैसे कि उचित तापमान, वर्षा, आर्द्रता, मृदा में नमी, हवा की गति, प्रकाशीय घंटे, वाष्पन की दर इत्यादि) तो बीजों का अंकुरण अच्छा नहीं होगा, जिससे उसकी उपज में कमी आएगी। इसके अलावा यदि किसान को वर्षा होने की सूचना प्राप्त हो तो वह सिंचाई तथा कीटनाशकों/खरपतवारनाशी

इत्यादि का छिड़काव रोक सकते हैं, जिससे सिंचाई में होने वाली लागत में कमी आएगी साथ ही नुकसान होने से बच जाऐंगे क्योंकि यदि किसानों ने कीटनाशकों इत्यादि का छिड़काव कर दिया तो वर्षा के पानी के साथ बह जायें और फसल पर इसका असर नहीं होगा। मौसम पूर्वानुमान किसानों को फसलों की किस्में निर्धारित करने में सहायक होता है। यह किसानों को जुताई, बुवाई, सिंचाई, उर्वरक, तथा कटाई का समय निर्धारित करने तथा कीटों तथा रोगों के प्रबंधन में सहायक होता है। इसके साथ ही कटाई के बाद उत्पादन को कैसे और कहां रखना है, खाद्यान्न का परिवहन एक स्थान से दूसरे स्थान कब और कैसे करना है, में सहायक होता है।

मौसम आधारित कृषि परामर्श

कृषि भौतिकी संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली राज्य के नजदीकी गांवों के किसानों को सप्ताह में हर मंगलवार एवं शुक्रवार को मौसम आधारित कृषि कार्य करने की सलाह देता है। प्रगतिशील किसान इसमें काफी रूचि लेते हैं तथा लाभांवित होते हैं। विभिन्न फसलों पर मौसम आधारित सलाह देना ही इसका मुख्य उद्देश्य है। भारत मौसम विज्ञान विभाग, नई दिल्ली सप्ताह के हर मंगलवार व शुक्रवार को अगले पाँच दिनों के मौसम की जानकारी जैसे अधिकतम व न्यूनतम तापमान, हवा की गति व दिशा, अधिकतम व न्यूनतम आर्द्रता, वर्षा तथा बादलों की जानकारी कृषि भौतिकी संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान को ई–मेल के माध्यम से देता है। मौसम पूर्वानुमान को ध्यान में रखते हुए संस्थान के विभिन्न संभागों के विशेषज्ञों की सलाह लेकर मौसम आधारित बुलेटिन बनाई जाती हैं। इसमें निम्नलिखित जानकारी दी जाती है :

- पिछले हफ्ते के मौसम की जानकारी तथा इसका सामान्य से अंतर।
- अगले पाँच दिनों का मौसम।
- उगाई हुई फसलों के नाम तथा चरण।
- रोगों तथा कीड़ों का आक्रमण एवं इसकी रोकथाम के उपाय।
- फसलों में मौसम आधारित प्रबंधन।

भारत मौसम विज्ञान विभाग के वेब पेज पर मौसम आधारित कृषि परामर्श

- फसलों में विभिन्न प्रकार के कृषि कार्य जैसे बीज की किस्म, मात्रा, बुवाई, सिंचाई, विरलीकरण, निराई–गुड़ाई, उर्वरक का उपयोग इत्यादि।
- उत्पादन का भंडारण में रखरखाव।

मौसम आधारित कृषि सलाह बुलेटिन को भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के वेब पेज (www.iari.res.in), किसान पोर्टल (farmer.gov.in) तथा भारत मौसम विभाग के वेबपेज (www.agrimet.gov.in) पर दर्शाया जाता है एवं इसका प्रचार हिंदी अखबारों के द्वारा भी किया जाता है। मौसम आधारित कृषि बुलेटिन को कृषि विज्ञान केन्द्र, शिकोहपुर, कृषि विज्ञान केन्द्र, उजवा, इफको किसान संचार लिमिटेड, कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र, गैर सरकारी संगठन, आत्मा, ई–चौपाल, कृषि दर्शन, डी.डी. किसान, आल इंडिया रेडियो, राज्य कृषि विभाग आदि को ई–मेल के माध्यम से दिया जाता है। इनके द्वारा ये बुलेटिन आगे किसानों को विभिन्न माध्यमों से भेजी जाती है, जिससे ज्यादा से ज्यादा किसान लाभान्वित होते हैं। मौसम आधारित कृषि प्रबंधन की जानकारी डी.डी. किसान चैनल के माध्यम से भी प्रदान की जाती है, जिसे मौसम खबर तथा किसान समाचार में प्रसारित किया जाता है। इससे किसानों के साथ–साथ अन्य लोग जो कृषि कार्यों में रूचि रखते है, लाभान्वित होते हैं। पिछले एक दशक में लगभग 1040 मौसम आधारित कृषि परामर्श बुलेटिन हिंदी तथा अंग्रेजी में हमारे संभाग द्वारा बनाई जा चुकी हैं। किसानों

को मौसम आधारित कृषि सलाह एस.एम.एस. के माध्यम से भी दी जाती है। सितम्बर 2013 से अभी तक किसानों को मौसम आधारित कृषि प्रबंधन के लिए लगभग 9,50,882 एस.एम.एस. एम–किसान पोर्टल से भेजे जा चूके हैं। प्रगतिशील किसान इससे काफी लाभ ले रहे हैं।

मौसम आधारित कृषि सलाह के बारे में किसानों की प्रतिक्रिया

किसान गोष्ठी तथा किसानों द्वारा दी गई प्रतिक्रिया से यह अवगत हुआ है कि किसानों को एस.एम.एस. तथा वेब पेज द्वारा दी जाने वाली मौसम आधारित सलाह कृषि में लाभ देती है, क्योंकि इससे उन्हें मौसम की अनुकूलता को देखते हुए कृषि में होने वाले कार्य तथा प्रबंधन की जानकारियां प्राप्त होती हैं। मौसम पूर्वानुमान के आधार पर किसान सब्जियों तथा फसलों की अधिक उपज देने वाली किस्मों का चयन कर सकते हैं। साथ ही कृषि कार्य जैसे बुवाई का समय, बीज की मात्रा, निराई, गुड़ाई, सिंचाई का समय तथा मात्रा, उर्वरकों का प्रयोग, कीटनाशकों के छिड़काव का समय तथा मात्रा, फसलों की कटाई आदि को सही समय पर कर सकते हैं। इससे किसानों को मानसून के बारे में, इसके आने के समय, इसकी स्थिति तथा प्रतिदिन के मौसम की जानकारी वेब पेज तथा एस.एम.एस. द्वारा प्राप्त होती है जिससे कृषि कार्यों को सही समय पर करने में मदद मिलती है। इससे किसानों की लागत में कमी तथा संसाधनों की बचत होती है।

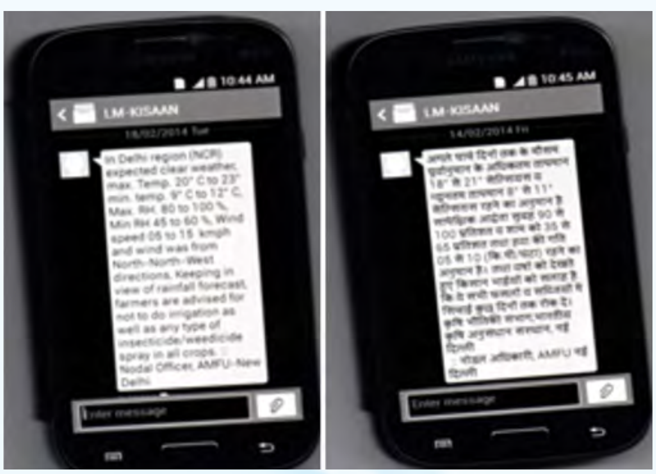

एस.एम.एस. द्वारा किसानों को जानकारी

मौसम आधारित कृषि सलाह से होने वाले लाभ

मौसम आधारित कृषि सलाह से होने वाले लाभों का विवरण निम्नलिखित में दिया गया है। जिन किसानों को मौसम पूर्वानुमान के आधार पर कृषि कार्य किया, उन किसानों को लाभ हुआ जैसे वर्षा का पूर्वानुमान होने पर सिंचाई न करना, कीटनाशक तथा खरपतवारनाशी का प्रयोग न करना, बुवाई का उचित समय तथा मात्रा का प्रयोग करना इत्यादि।

तालिका: मौसम आधारित सलाह से किसानों को लाभ

मौसम व अन्य कार्यों की जानकारी	मौसम के आधार पर कृषि कार्य	लाभ/बचत
21 जनवरी, 2014 को सलाह देकर किसान को सिंचाई रोकने की सलाह	गाजर की फसल में सिंचाई रोकना	600 रु./एकड़ की कुल बचत
उचित बीज दर	गाजर की बुवाई में बीज की दर कम	1900 रु./एकड़ की कुल बचत
21 जनवरी, 2014 के मौसम के अनुमान से किसान को सिंचाई रोकने तथा खरपतवारनाशक का छिड़काव ना करने की सलाह	देरी से बोई गई गेहूं की फसल में खरपतवारनाशक का छिड़काव एवं सिंचाई रोकना	1350 रु./एकड़ की कुल बचत
14 फरवरी, 2014 के मौसम पूर्वानुमान के अनुमान से किसान को सिंचाई ना करने की सलाह	गेहूं की फसल में सिंचाई को रोकना	800 रु./एकड़ की कुल बचत
21 जनवरी, 2014 के मौसम के पूर्वानुमान से किसान को सिंचाई रोकने तथा कीटनाशक का छिड़काव ना करने की सलाह	गेहूं तथा सरसों की फसल में सिंचाई रोकने तथा सरसों में कीटनाशक का छिड़काव ना करना	1450 रु./एकड़ की कुल बचत

एक अध्ययन जो कि किसानों द्वारा दिए गए आकड़ों से प्राप्त हुआ, से पता चला कि जो किसान सलाह के अनुसार कार्य करते हैं, उनकी लागत में जो किसान सलाह के अनुसार कार्य नहीं करते, की तुलना में लागत में कमी तथा अधिक लाभ प्राप्त हुआ। मौसम आधारित सलाह के अनुसार कृषि कार्य करने से गेहूं की लागत में रु. 237/एकड़, गाजर में रु. 1232/एकड़ तथा धान में रु. 1071/एकड़ की कमी आई। साथ ही गेहूं में रु. 776/एकड़, गाजर में रु. 3192/एकड़ तथा धान में रु. 2213/एकड़ का शुद्ध लाभ प्राप्त हुआ।

किसान पोर्टल पर कृषि–मौसम संबंधी जानकारियां

बारिश में दवा का छिड़काव न करें किसानः वैज्ञानिक

खेत में ही संचित करें बारिश का पानी

मानसून से पहले करें जलनिकासी की तैयारी

हिंदी अखबारों के माध्यम से किसानों को कृषि–मौसम संबंधी परामर्श

किसानों को यह लाभ उपयुक्त समय पर वेब पेज तथा एस.एम.एस. द्वारा मौसम आधारित सलाह प्राप्त होना तथा इसके अनुसार कृषि कार्य करने जैसे समय पर खेत तैयार करना, बीज की दर व बुवाई का सही समय, उर्वरकों की उचित मात्रा व सही समय पर उपयोग, निराई–गुड़ाई का उचित प्रबंधन सिंचाई की मात्रा तथा समय, कटाई का उचित समय पर प्रबंधन करने से प्राप्त हुआ।

किसानों के साथ गोष्ठी करते हुए भा.कृ.अ.सं., नई दिल्ली के वैज्ञानिक

केंचुआ खाद (वर्मी-कंपोस्ट)

बलजीत कौर[1], तेजपाल सिंह यादव[2] एवं ओम प्रकाश जोशी[3]
[1]पादप रोग विज्ञान संभाग, [2]पादप कार्यिकी संभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012
[3]हिंदी अनुभाग, भा.कृ.अ.प. मुख्यालय, कृषि भवन, नई दिल्ली–110012

हम सभी जानते हैं कि मृदा में कंपोस्ट मिलाने से मृदा की संरचना में सुधार होता है और उसकी केटायन विनिमय क्षमता में बढ़ोतरी होती है। केंचुए, प्राचीन काल से किसानों के मित्र समझे जाते हैं। केंचुआ खाद या वर्मीकंपोस्ट वस्तुतः केंचुए के मलत्याग का परिणाम ही है, जिसे "वर्म कास्टिंग" कहा जाता है। वर्मीकंपोस्ट में प्रचुर मात्रा में ह्यूमस, पोषक तत्व, लाभकारी मृदा–सूक्ष्मजीव, नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु, फॉस्फेट को घुलनशील बनाने वाले जीवाणु, एक्टिनोमायसीट्स तथा पादप वृद्धि हार्मोन्स जैसे कि ऑक्जिन, जिबरेलिन एवं सायटोकायनिन आदि होते हैं। वर्मीकंपोस्ट तथा केंचुए के शरीर से उत्पन्न चिप–चिपा द्रव (वर्मी–वाश), पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करने वाले और उनकी सुरक्षा करने वाले सिद्ध हो चुके हैं। वर्मीकंपोस्ट में पौधों के लिए आवश्यक नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटैशियम तत्व भी पर्याप्त मात्रा में होते हैं। पौधों के लिए आवश्यक अधिकांश सूक्ष्म –तत्व, जो प्रायः रासायनिक उर्वरकों से प्राप्त नहीं होते, वर्मीकंपोस्ट में उपलब्ध होते हैं। वर्मीकंपोस्ट, मृदा–स्वास्थ्य तथा मृदा में विद्यमान पोषक तत्व के स्तर का सुधार करने में सक्षम है।

वर्मीकल्चर वह प्रक्रिया है जिसमें सभी प्रकार के जैव–अपघटन योग्य अपशिष्ट जैसे कि खेत, रसोई घर, बाजार अथवा कृषि आधारित उद्योगों के अपशिष्ट या पशुजन्य अपशिष्ट केंचुए की आंत्र से गुजर कर पोषक–तत्वों से समृद्ध वर्मीकंपोस्ट में परिवर्तित हो जाते हैं। इन व्यर्थ पदार्थों का उपभोग करने और तत्पश्चात् मल त्याग करने की इस वर्मीकंपोस्ट की प्रक्रिया में केंचुए, जैवकारकों के रूप में कार्य करते हैं। केंचुए, विभिन्न प्रकार के कार्बनिक अपशिष्ट का उपभोग कर उसका आयतन 40 से 60 प्रतिशत तक कम कर देते हैं। प्रत्येक केंचुआ, जिसका वजन लगभग 0.5 से 0.6 ग्राम होता है, लगभग अपने वजन के बराबर अपशिष्ट का उपभोग एक दिन में कर लेता है और अपने द्वारा एक दिन में खाए गए अपशिष्ट के लगभग 50 प्रतिशत के बराबर उत्सर्जन करता है। इस कास्ट में नमी–अंश 32–66 प्रतिशत के बीच होता है और पीएच मान लगभग 7 होता है।

वर्मीकंपोस्ट में कई प्रकार के एंजायम जैसे कि एमाईलेज, लाइपेज, सेल्यूलेज एवं काइटिनेज विद्यमान होते हैं जो मृदा में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों के विघटन में सक्षम होते हैं एवं पोषक तत्वों को छोड़ते हैं जो पौधे की जड़ों द्वारा अवशोषित किए जाते हैं।

वर्मीकंपोस्ट तैयार करने के लिए आवश्यक मूलभूत सामग्री

वर्मीकंपोस्ट हेतु फसल अवशेष, वृक्षों की पत्तियां एवं पशुओं का गोबर आदि आवश्यक मूलभूत सामग्री हैं। कृषि अपशिष्ट, जैसे कि गन्ने की सूखी पत्तियां, घास–फूस, लकड़ी का बुरादा, नारियल अपशिष्ट, धान का छिलका, पशुओं का गोबर, बॉयोगैस संयंत्र से निकलने वाली स्लरी, भेड़, घोड़ा, सूअर, पोल्ट्री आदि का मल (कम मात्रा में) तथा सब्जियों के अपशिष्ट, वर्मीकंपोस्ट के लिए आदर्श खाद्य पदार्थ है।

वर्मीकम्पोस्ट तैयार करने की विधि

1. **शेड निर्माण** : एक उपयुक्त स्थान पर शेड बनाया जाता और उसकी छत पर छप्पर डालना अच्छा रहता है। यह शेड, यूनिट के परिणाम के अनुसार छोटा या बड़ा हो सकता है किंतु इसका न्यूनतम परिणाम 300 वर्ग फुट (20x15) रखा जाता है।

2. **आधार तल निर्माण** : ईंटों से बने कक्ष, लकड़ी के बक्सों, प्लास्टिक से बनी द्रोणियों अथवा मिट्टी के गमलों में वर्मीकंपोस्ट तैयार की जा सकती है। यदि खेतों के अपशिष्टों से कंपोस्टिंग करनी है तो एक टन क्षमता हेतु 10 फीट लम्बाई, 3 फीट चौड़ाई और 3 फीट ऊंचाई का बैड बना सकते हैं। इस बैड के आधार पर ईंट या पत्थर के टुकड़े रखे जा सकते हैं।

3. **जैव–अपशिष्ट** : इसमें सभी प्रकार के अपघटन योग्य अपशिष्टों का प्रयोग किया जा सकता है। ये अपशिष्ट, रसोई घर, फार्म, बाजार अथवा कृषि आधारित उद्योगों के अपशिष्ट और पशुओं के अपशिष्ट आदि हो सकते हैं। जैव–अपशिष्टों को इकट्ठा कर धूप में 7–10 घंटे रख दिया जाता है। यदि आवश्यक हो तो बड़े टुकड़ों को काट कर छोटा कर दें। ताकि उनका निम्नीकरण आसानी से हो सके। वर्मीकंपोस्ट तैयार करते समय पादप–आधारित अपशिष्टों का ही उपयोग करना चाहिए अर्थात जंतु मूल की सामग्री यथा, अंडों का खोल, मांस, हड्डी आदि का उपयोग नहीं करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, तंबाकू की पंत्तियां, प्याज, लहसुन, मिर्च आदि अपशिष्ट भी केंचुआ पालन के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

4. **बैड भरना** : टैंक के निचले हिस्से में एक या दो इंच तक गाय का सड़ा हुआ गोबर भरते हैं और उसके ऊपर 30 से.मी. की मोटाई तक जैव अपशिष्ट फैला दिए जाते है। अपशिष्ट की इस परत को गाय के गोबर की स्लरी और पानी से नम बनाया जाता है और फिर जैव अपशिष्ट की दूसरी परत फैला दी जाती है। जमीन से 45–60 से.मी. ऊंचाई तक इसी ढंग से जैव अपशिष्ट को भरा जाता है। इस सामग्री के ऊपर पानी के छिड़काव द्वारा नमी–स्तर बनाए रखा जाता है। इस प्रकार से जैव अपशिष्ट और गाय के गोबर का अनुपात 60:40 रखा जाता है।

5. **केंचुआ छोडना** : वर्मीकंपोस्टिंग में प्रायः केंचुए की दो जातियां, *यूट्रिलस यूजीनी* और *आइसेनिया फोइटिडा* का उपयोग किया जाता है। ये दोनों अफ्रीकन जातियां हैं और वर्मीकंपोस्टिंग के लिए बहुत उपयोगी हैं जबकि अधिकांश भारतीय जातियां इसके लिए उतनी उपयुक्त नहीं हैं। टैंक को जैव अपशिष्ट से भरने के बाद केंचुओं को 2–3 किग्रा/टन अपशिष्ट की दर से उसमें छोड़ा जाता है। यह 100 केंचुए प्रति वर्ग मीटर भी हो सकता है।

6. **ढकना** : पक्षियों और चूहों से सुरक्षा हेतु अपशिष्ट के ढ़ेर को मिट्टी की एक पतली परत या जाली से ढ़क दिया जाता है। चींटियों से सुरक्षा के लिए भी समुचित उपाय किए जाने चाहिए। सूर्य एवं वर्षा से सुरक्षित रखने के लिए एक छत वाला शेड बनाया जाता है जिसमें दीवारें न बनाकर, खुले रखे जाते हैं। इसी प्रकार से तीन महीने तक ढ़क कर रखते हैं।

7. **हार्वेस्टिंग** : जब कंपोस्ट की संरचना दानेदार हो जाती है तो यह हार्वेस्टिंग के लिए तैयार समझी जाती है। निम्नीकृत सामग्री को टैंक से बाहर निकालकर शेड में ढेर बनाकर रखा जाता है और इसे पानी से नम रखते हैं। केंचुए नीचे की परत में चले जाते हैं और नीचे की परतों को छानकर उन्हें आसानी से अलग किया जा सकता है।

कंपोस्ट तैयार करने हेतु सावधानियां

- बैड में नमी का स्तर 40–50 प्रतिशत से अधिक नहीं रहना चाहिए। जलभराव से ढेर के भीतर हवा का आदान–प्रदान

ठीक से नहीं होता और उसका पीएच मान भी परिवर्तित हो जाता है, जिससे केंचुए के सामान्यन कार्य–कलाप बाधित होते हैं, उनका भार कम हो जाता है और उनकी आबादी एवं जैवमात्रा में कमी होती है।

- बैड का तापमान 20–30 डिग्री सेल्सियस की सीमा में रखना चाहिए।
- केचुओं को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुंचनी चाहिए।
- बैड को परभक्षियों जैसे कि, लाल चींटियों, सफेद चींटियों, सेंटीपीड, टोड, मेंढक, चूहों, बिल्ली, पोल्ट्री, पक्षियों और कुत्ते आदि से सुरक्षित रखना चाहिए।
- संवर्धन बैड की समय–समय पर देखभाल आवश्यक है क्योंकि अधिक कास्ट संचयन, केचुओं की वृद्धि को बाधित करता है।
- केंचुए की वृद्धि के लिए पर्याप्त स्थान होना आवश्यक है। उदाहरणार्थ, यदि संवर्धन बैड की मोटाई 30–45 सेंमी है तो 3000 केंचुओं के लिए न्यूनतम 2 वर्ग मी. स्थान की आवश्यकता होती है।

कुछ महत्वपूर्ण बातें

- गोपशु, भेड़ एवं घोड़े की लीद के साथ सब्जी अपशिष्ट केंचुआ–पालन के लिए आदर्श मिश्रण है।
- थोडी मात्रा में नीम की खली भी मिला दी जाए तो उससे केंचुओं की संख्या में बढ़ोतरी होती है।
- वायवीय रूप से तैयार 15 दिन पुरानी बायोगैस स्लचरी, वर्मीकंपोस्टिंग की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करती है।

वर्मीकंपोस्ट से लाभ

- वर्मीकंपोस्ट, पौधों के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्वों से समृद्ध होती है।
- संपूर्ण पौधे की वृद्धि पर वर्मीकंपोस्ट का बहुत अच्छा प्रभाव होता है। नए प्ररोहों/पत्तियों की वृद्धि अच्छी होती है और उत्पादन की गुणवता तथा भंडारण–आयु में भी सुधार होता है।
- वर्मीकंपोस्ट का रख–रखाव, भंडारण, अनुप्रयोग और पौधों की जड़ों द्वारा अवशोषण सुगमता से होता है और इसमें किसी प्रकार की दुर्गंध भी नहीं होती।
- इससे मृदा की बनावट में सुधार होता है। मृदा में हवा के अदान प्रदान एवं पानी को रोके रखने की क्षमता में बढ़ोतरी होती है और यह मृदा–अपरदन को रोकती है।
- मृदा पर्यावरण में सुधार करने के साथ–साथ वर्मीकंपोस्ट –लाभकारी माइक्रोफ्लोरा यथा, नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करने वाले, फॉस्फोरस को घुलनशील बनाने वाले, सेल्यूलोज का निम्नीकरण करने वाले माइक्रोफ्लोरा आदि से समृद्धि होती है।
- वर्मीकंपोस्ट में केंचुए के, जो कोकून विद्यमान होते हैं उनसे खेत में केचुओं की आबादी में बढ़ोतरी होती है।
- इससे पोषक तत्वों के क्षरण में कमी आती है और रासायनिक उर्वरकों की उपयोग क्षमता में भी बढ़ोतरी होती है।
- वर्मीकंपोस्ट रोगजनकों, विशाक्त तत्वों, खरपतवार के बीजों आदि से मुक्त होती है।
- इसका अनुप्रयोग करने से नाशीजीवों एवं रोगों के आपतन में कमी होती है।
- इसमें पौधों के लिए महत्वपूर्ण विटाामिन, एंजाइम तथा हार्मोन जैसे कि ऑक्सीजन, जिबरेलिन आदि विद्यमान होते हैं।

फसलों के उत्पादन मे बोरॉन का महत्व

मुकुन्द कुमार, टी.आर. दास एवं सी.बी. सिंह
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र पूसा (बिहार)

एक नए अनुमान के मुताबिक भारत में वर्ष 2025 तक प्रति वर्ष 325 मिलियन टन खाद्यान की आवश्यकता पड़ेगी, इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए भूमि की उर्वराशक्ति को संतुलित बनाए रखना बहुत आवश्यक है। फसल की उपज बढ़ाने में संतुलित उर्वरकों का प्रयोग अति महत्वपूर्ण है। संतुलित उर्वरक के प्रयोग का तात्पर्य पौधों एवं मिट्टी को इस प्रकार उर्वरक देना है कि पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, जिंक, पोटाश एवं बोरॉन के साथ–साथ अन्य महत्वपूर्ण तत्वों की उपलब्धता संतोषजनक बनी रहे। अधिकतर किसान भाई नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश एवं जिंक का प्रयोग तो अपने खेतों में करते हैं परंतु अन्य सूक्ष्म तत्वों को खेत में नहीं डालते हैं। इसका मुख्य कारण सूक्ष्म तत्वों की जानकारी का अभाव है। सूक्ष्म तत्वों में से बोरॉन एक महत्वपूर्ण सूक्ष्म पोषक तत्व हैं जो पौधों की वृद्धि एवं विकास के लिए अति महत्वपूर्ण है। बोरॉन पौधों पर निम्नलिखित प्रभाव डालता है :

- बोरॉन पौधों की परागण प्रक्रिया में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, क्योंकि बोरॉन प्रजनन अंगो से संबंधित तत्व है।
- बोरॉन पौधों की उपापचय क्रिया को प्रभावित करता है अर्थात् यह फॉस्फोरिलेशन और डिफोस्फोरिलेशन की ऊर्जा प्रक्रिया को प्रभावित करता है।
- बोरॉन कोशिका–विभाजन अर्थात् पूर्व कोशिका से विभाजित होकर नई कोशिकाएं बनने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- न्यूक्लिक एसिड के उपापचय के लिए पर्याप्त बोरॉन की आवश्यकता पड़ती है। साथ ही यह फॉस्फोरस के आर एन ए और डी एन ए में समावेश को भी प्रभावित करता है।
- इसके उपयोग से फसल तथा वृक्षों के कोहरे से बचने की प्रतिरोधकता बढ़ती है।

अन्य सभी सूक्ष्म पोषक तत्त्वों की तुलना में बोरॉन के अभाव व विशालुता के बीच सबसे कम या छोटी श्रेणी होती है। यानि एक प्रकार की मिट्टी के लिए प्रभावशाली उर्वरक दर किसी अन्य मिट्टी या जमीन के लिए विशाक्त साबित हो सकती है।

बोरॉन की कमी का कारण बनने वाली स्थितियां

- पानी की अधिक निकासी युक्त अम्लीय मिट्टी का होना।
- केल्केरियस या बहुत अधिक पुरानी मिट्टी का होना।
- हल्की रेतीली मिट्टी।
- पोटैशियम और नाईट्रोजन का अधिक उपयोग।
- सूखे की परिस्थिति।
- जैविक पदार्थो का मिट्टी में निम्न होना (खाद बोरॉन का भंडार होता है)।
- उच्च पीएच युक्त मिट्टी।

बोरॉन की कमी को ऐसे पहचाने

बड़ी पत्तियों से छोटी पत्तियों में बोरॉन का वितरण नहीं होता है, जो बोरॉन की गतिहीनता का संकेत है, जिससे पौधों द्वारा उत्सर्जित प्रवाह में स्थानांतरण तथा वितरण नहीं हो पाता है। बोरॉन की कमी को हमेशा नन्हीं पत्तियों तथा पौधों की बढ़ती शाखाओं और जड़ों में देखा जा सकता है। बोरॉन की कमी के प्रमुख लक्षण इस प्रकार हैं :

- छोटी–छोटी पत्तियों का आकार बिगड़ने लगता है तथा ये मोटी, कमजोर और छोटी हो जाती हैं। इनमें क्लोरोसिस हो जाता है।
- तनें छोटे रह जाते हैं तथा गंभीर रूप से प्रभावित पौधे सिकुड़ जाते हैं।

- विकासशील बिन्दु कमजोर होते हैं और अक्सर मर जाते हैं। विकसित होने वाले बाहरी पर्णवृन्त में भी ऐसे ही लक्षण दिखाई देते हैं। पौधे झाड़ी के आकार के हो जाते हैं।
- भंडारित कोशों में परिगलन तथा पानी जैसे धब्बे दिखाई देते हैं।
- पत्तियों तथा फलों को जोड़ने वाले तनों में दरार पड़ जाती है और ये फटने लगती हैं।
- फलों का आकार बेडौल हो जाता है।
- जड़ों का विकास विकृत हो जाता है।

कुछ विशिष्ट फसलों में बोरॉन की कमी के प्रमुख लक्षण

मक्का : पुरानी पत्तियों में आंतरिक क्लोरोसिस, छोटी पत्तियों का खुलना बंद हो जाता है और भुट्टों की जमावट कम हो जाती है।

जौ और गेहूं : शाखाओं का अंकुरण कम हो जाता है और बालियों या कल्लों की जमावट कम हो जाती है।

मटर : जड़ों का विकास धीमा हो जाता है।

कपास : तनों और जड़ों पर गले हुए धब्बे बनने लगते हैं। पत्तों के तने उखड़ने लगते हैं।

गन्ना : विकास धीमा पड़ जाता है, पत्ते क्लोरोटिक हो जाते हैं।

तम्बाकू : पत्तों का विकास कम हो जाता है तथा फूल कम निकलते हैं।

अंगूर : नन्हीं पत्तियों में क्लोरोसिस हो जाता है, तीसरी या चौथी पट्टी गोल कप जैसी होने लगती है। पोर छोटे होने लगते हैं तथा नन्हीं पत्तियों का आकार बिगड़ने लगता है।

नीबू : पौधे नीचे झुकने लगते हैं तथा पत्तियां मुड़ने व बीच से फटने लगती हैं और विकास बिन्दुओं का क्षय होने लगता है।

आलू : पत्तियां मोटी हो जाती हैं और विकासशील बिन्दु मरने लगते हैं। पत्तियों के किनारे ऊपर की तरफ मुड़ने लगते हैं। प्रभावित गांठे सामान्य से छोटे आकार की निकलती हैं।

टमाटर : पौधे झाड़ीनुमा दिखाई देते हैं और इनके विकास बिन्दु काले पड़ने लगते हैं। अंकुरित शाखायें बैंगनी होने लगती हैं। तनों का विकास रुक जाता है। सिरों की शाखायें पीली पड़ कर मर जाती हैं।

प्याज : पौधों का विकास रुक जाता है। पत्तियों का रंग हरे धूसर से गहरे नीले रंग का होने लगता है और पत्तियां सख्त और भुरभुरी हो जाती हैं।

विभिन्न फसलों में बोरॉन के प्रभाव से होने वाली उपज वृद्धि में भिन्नता होती है, जैसा कि सारणी में दर्शाया गया है। बहुत सी दाल वाली फसलों, अनेक फल–वृक्षों और सब्जी वाली फसलों में बोरॉन का प्रयोग अधिक प्रभावी है। दालों की अपेक्षा सब्जियों में अपेक्षाकृत कुछ कम प्रभाव दिखाई पड़ता है। अनाज वाली फसलों में समान्यतया सबसे कम प्रभाव पड़ता है।

फसलों की उपज वृद्धि में बोरॉन का प्रभाव

सर्वाधिक प्रभाव	मध्यम प्रभाव	सबसे कम प्रभाव
अल्फा अल्फा	ब्रोकली	सेम
फूलगोभी	बंदगोभी	सोयाबीन
सेलरी	गाजर	कद्दूवर्गीय फसलें
चुकंदर	चुकंदर	मक्का
शलजम	पालक	प्याज
मूंगफली	मीठा मक्का	आलू
कपास	टमाटर	छोटा अनार
सेब	कनोला (लाही)	ज्वार
क्लोवर	मूली	सुडान घास

फसलों की बोरॉन आवश्यकता और सहनशीलता में बहुत भिन्नता होती है। यद्यपि अन्य आवश्यक पोषक तत्वों की तुलना में बोरॉन की कम और विषालु मात्रा के बीच बहुत कम अंतर होता है। विशेष रूप से वह फसल चक्र, जिसमें बोरॉन के प्रति विभिन्न संवेदनशीलता की फसलें हो, बोरॉन का उपयोग बहुत सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

बोरॉन की कमी और विषालुता के बीच बहुत कम अंतर होने का कारण बोरॉन उर्वरकों का प्रयोग सावधानी से किया जाना आवश्यक है। बोरॉन उर्वरकों के प्रयोग की दर विभिन्न

कारकों पर निर्भर करती है, जिसमें मृदा परीक्षण, पादप विश्लेषण, पादप प्रजाति, फसल चक्र, मौसम की दशाएं, कर्षण क्रियाएं और मृदा कार्बनिक पदार्थ सम्मलित हैं।

निम्नलिखित सारणी में समान्य बोरॉन उर्वरक स्रोतों व उनमें बोरॉन की मात्रा और जल विलेयता को दर्शाया गया है।

बोरॉन उर्वरक के स्रोत, बोरॉन की मात्रा और जल विलेयता

स्रोत	प्रतिशत बोरॉन	जल विलेयता
बोरेक्स	11.3	हाँ
सोडियम पेंटाबोरेट	18.0	हाँ
सोडियम टेट्राबोरेट		
फर्टिलाइजर बोरेट 46	14.0	हाँ
फर्टिलाइजर बोरेट 65	20.0	हाँ
बोरिक एसिड	17.0	हाँ
कोलेमनाइट	10.0	न्यून
सोल्युबर	20.0	हाँ
बोरॉन युक्त सिंगलसुपर फॉस्फेट	0.18	हाँ

मृदा में बोरॉन देने की मात्रा

मृदा में बोरॉन का प्रयोग छींटा विधि से, पट्टी निवेसन अथवा घोल या पाउडर का पर्णीय छिड़काव द्वारा किया जा सकता है। बोरॉन से लाभान्वित होने वाली फसलों के लिए मृदा में बोरॉन का अधिकतम 3 कि.ग्रा./हेक्टेयर तक की दर से तथा कम और मध्यम प्रभाव वाली फसलों हेतु 0.5 से 1.0 कि.ग्रा. बोरॉन/हेक्टेयर की दर से प्रयोग किया जा सकता है।

मैं मानता हूं कि भारत की आधुनिक भाषाओं में हिन्दी ही सच्चे अर्थ में सदैव भारतीय भाषा रही है, क्योंकि वह निरन्तर भारत की एक समग्र चेतना को वाणी देने का चेतन प्रयास करती रही है और सभी भाषाओं में प्रदेश बोला है – कई बार बड़े प्रभावशाली ढंग से बोला है, हिन्दी में आरंभ से ही देश बोलता रहा है – भले ही कभी–कभी कमजोर स्वर में भी बोला है।

सच्चिदानंद वात्स्यायन

कृषक के अदृश्य शत्रु पादप परजीवी सूत्रकृमि एवं उनका प्रबंधन

राशिद परवेज एवं उमा राव

सूत्रकृमि संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

सूत्रकृमि धागे के आकार के रंगहीन कीट होते हैं जिन्हें अंग्रेजी में "नीमाटोड" कहते हैं। यह छोटे, पतले, खंडरहित धागे की तरह के द्विलिगीं जन्तु होते हैं। ये मिट्टी में बहुतायत में पाए जाते हैं। संसार में सूत्रकृमि की लगभग 1,00,000 जातियाँ हैं जिनमें से अभी तक लगभग 25,000 जातियों से ही हम लोग परिचित हैं। इन जातियों में से बहुत सी पोषण के लिए जीवाणु, फफूंदी तथा अन्य सूक्ष्म जीवों पर निर्भर रहती हैं परन्तु कई जातियां पौधों व कीटों, मछलियों, पक्षियों एवं जन्तुओं में परजीवी के रूप में पाई जाती हैं।

पौधों को हानि पहुंचाने वाले सूत्रकृमि आकार में बहुत छोटे होते हैं। इन्हें नग्न नेत्रों से नहीं देखा जा सकता है। अतः इन्हें देखने के लिए सूक्ष्मदर्शी यंत्र का उपयोग करते हैं। ये जीव मुख्यतः मिट्टी के भीतर 10 से 30 से.मी. के बीच अथवा पौधों की जड़ों के आस पास पाए जाते हैं। यह जड़ों के बाहर तथा भीतर प्रवेश करके दोनों प्रकार से हानि पहुंचाते हैं। अगर इनकी उपस्थिति एक निश्चित संख्या से अधिक होती है तो पौधों को पानी तथा अन्य पोषक तत्वों को प्राप्त करने में बाधा उत्पन्न हो जाती है। फसलों में कई प्रकार के सूत्रकृमि पाए जाते हैं जिनमें से निम्नलिखित सूत्रकृमि पौधों को अत्यधिक हानि पहुंचाते हैं।

प्रमुख सूत्रकृमि

1. अंतः परजीवी

सूत्रकृमियों की अधिकतर जातियां जड़ों एवं पौधों के भूमिगत भागों से पोषण लेती हैं, कुछ जड़ों में अधूरा प्रवेश कर पोषण लेती हैं इन्हे "अर्ध अंतजीवी" कहते हैं तथा कुछ पूर्ण प्रवेश करके पोषण लेती हैं जिन्हें "पूर्ण अंतजीवी" कहते हैं। पूर्ण अंतजीवी सूत्रकृमि भी दो प्रकार के होते हैं। प्रथम, जड़ों में प्रवेश कर एक ही स्थान से पोषण लेते हुए जीवन व्यतीत करते हैं, दूसरे वे जो जड़ों में प्रवेश करके एक स्थान से दूसरे स्थान पर चलते हुए पोषण लेते हैं। इनमें से निम्नलिखित सूत्रकृमि प्रमुख हैं:

(क) जड़ गांठ सूत्रकृमि – *मेलोडोगाईनी* जातिः ये सूत्रकृमि कई प्रकार की फसलों की क्षति के लिए उत्तरदायी हैं। इन सूत्रकृमियों की कई उपजातियां हैं, परन्तु उनमें से *मलोडोगाइनी इनकॉगनिटा* तथा *एम. जावानिका* ही मुख्यतः फसलों में रोग उत्पन्न करती हैं। इन रोगों के प्रमुख लक्षणों में पीलापन, मुरझाना, पौधों की वृद्धि का रूकना आदि अनेक लक्षण हैं जो संक्रमित पौधों के वायुवीय भागों में देखे जा सकते हैं। पौधों की जडों में जहां सूत्रकृमि रहते हैं उस स्थान पर गांठें, दाने या गदा के आकार की हो जाती हैं। जड़ का संक्रमित भाग मुड़ जाता है और इसके उन्नत भाग पर या गांठ पर बहुत सारी छोटी–छोटी पतली जड़ें निकल आती हैं। सूत्रकृमि द्वारा संक्रमित जड़ों से गांठे अलग नहीं की जा सकती हैं। मिट्टी में रहकर यह नई जड़ों को भेद कर उनके अन्दर घुस जाते हैं तथा पानी और खाना ले जाने वाली कोशिकाओं को अपना भोजन बना लेते हैं। ये अपना जीवन चक्र 25 डिग्री तापमान पर लगभग 25–30 दिनों में पूरा कर लेते हैं। तत्पश्चात् यही सूत्रकृमि गोलाकार हो कर जड़ में गांठें पैदा कर देते हैं। इन गांठों के कारण पौधे मृदा में पोषक

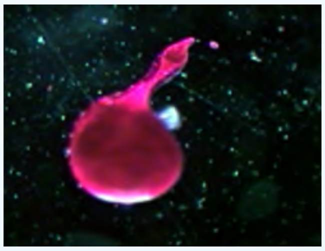

जड़ गांठ सूत्रकृमि

जड़ गांठ सूत्रकृमि संक्रमित जड़

तत्व एवं पानी की उपलब्धता होते हुए भी पर्याप्त मात्रा में उसे ग्रहण नहीं कर पाते हैं।

(ख) पुटी सूत्रकृमि–हेटेरोडेरा जाति : हेटरोडेरिड परिवार में हेटेरोडेरा सूत्रकृमि एक प्रजाति है। यह बाध्यकारी परजीवी होते हैं और इसकी विभिन्न प्रजातियां विभिन्न फसलों को हानि पहुंचाती हैं, जिसके कारण अक्सर बड़ी आर्थिक क्षति होती है। हेटेरोडेरा सूत्रकृमि अद्वितीय है क्योंकि इसकी मादा कठोर, भूरे, पुटी में परिवर्तन करने की क्षमता की वजह से अंडे की रक्षा होती है जो उसके शरीर में गठित होती हैं। हेटेरोडेरा मादा और पुटीय की विभिन्न "खाल" को दर्शाता है।

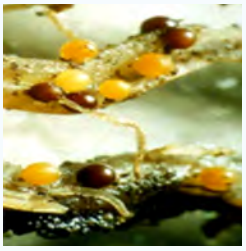

पुटी सूत्रकृमि–हेटेरोडेरा स्पी. सूत्रकृमि

पुटी सूत्रकृमि संक्रमित खेत

(ग) बरोयिंग सूत्रकृमि–*रेडोफोलस सिमिलस* : यह सूत्रकृमि एक चालित अन्त परजीवी है। यह पौधों की जड़ों में एक स्थान से प्रवेश करके दूसरे स्थानों तक रेंग कर पोषण लेते हैं। यह विशेषकर काली मिर्च की पोषण जड़ों को हानि पहुंचाते हैं जिस कारण पौधे में मन्द पतन रोग हो जाता है। इस रोग के प्रमुख लक्षण में पौधों की जड़ों में काले एवं भूरे रंग की चित्तियां पड़ जाती हैं तथा पत्तियां पीली पड़ जाती है तथा पौधा धीरे–धीरे सूखने लगता है और अंत में मर जाता है।

रेडोफोलस सिमिलिस सूत्रकृमि

रेडोफोलस सिमिलिस संक्रमित जड़

रेडोफोलस सिमिलिस संक्रमित पौधा

(घ) जड़ विक्षत सूत्रकृमि–*प्रेटीलेंकस* जाति : इस सूत्रकृमि की बहुत सी उपजातियां भारत में पाई जाती हैं। रोगी पौधे के वायुवीय भागों के लक्षण अस्पष्ट होते हैं। पौधे के उपरी भागों की वृद्धि रूकना, पीलापन आना तथा सबसे प्रमुख लक्षण जड़ों के धब्बे हैं जिनकी परिसीमा सूत्रकृमि जनसंख्या घनत्व व मेज़बान जातियों की संख्या के साथ–साथ बदलती रहती हैं। धब्बे दिखने में छोटे, लम्बे एवं पनीले होते है। अत्यधिक संक्रमित जड़ों में ये धब्बे शीघ्र ही भूरे या लगभग काले हो जाते हैं।

जड़ विछित सूत्रकृमि

जड़ विछित सूत्रकृमि संक्रमित प्रकन्द

(ड) गुर्दाकार सूत्रकृमि–*रोटाइलेन्क्यूलस रेनिफोरमिस* : इन्हें रेनीफार्म सूत्रकृमि भी कहते हैं क्योंकि इनकी मादाएं गुर्दो के आकार की होती हैं। यह सूत्रकृमि अर्धअतंजीवी होते हैं। इस सूत्रकृमि की प्रौढ़ मादा अवस्थाएं संक्रमण करती हैं। फसल बोने के पूर्व इस सूत्रकृमि का घनत्व यदि एक लार्वा प्रति घन से.मी. मिट्टी या इसके ऊपर हो तो फसल को काफी हानि पहुंचती है। ये अपना सिर पौधे की जड़ के अन्दर घुसा कर भोजन प्राप्त करते हैं तथा इनका शेष भाग जड़ के बाहर रहता है। ग्रसित पौधे पीले पड़ जाते हैं।

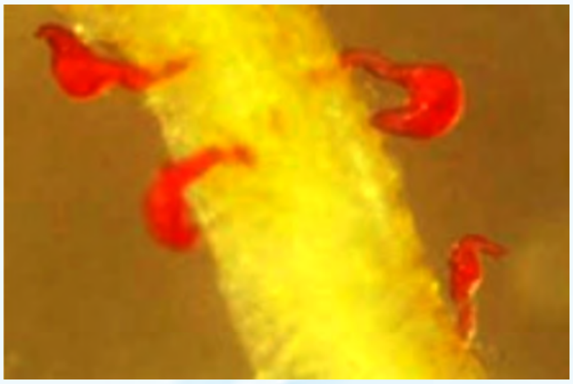

गुर्दाकार सूत्रकृमि

2. **बहिर्जीवी सूत्रकृमि** – लगभग सभी प्रकार की कृषि भूमियों में बहिर्जीवी सूत्रकृमियों की कई उपजातियां पाई जाती हैं। यह जड़ों पर बाहर से ही खाते हैं तथा इनके कारण पौधों का पीलापन व वृद्धि रूकने के अलावा कोई खास लक्षण प्रकट नहीं होता है। फसलों में मुख्य रूप से पाए जाने जाने वाले बहिर्जीवी सूत्रकृमि निम्नलिखित हैं :

1.	स्टन्ट सूत्रकृमि	*टाइलेंकोरिंकस* जाति
2.	स्पाइरल सूत्रकृमि	*हेलिकोटाइलेंकस* जाति
3.	लांस सूत्रकृमि	*हैप्लोलेमस* जाति
4.	हेंगर सूत्रकृमि	*जिफिनिमा* जाति
5.	पाइपर सूत्रकृमि	*ट्रोफोटाइलेनुकुलस पाइपरेसी*
6.	रिंग सूत्रकृमि	*क्रिकोनिमोइडिस* जाति
7.	यम सूत्रकृमि	*इस्क्यूटिलोनिया* जाति
8.	निडल सूत्रकृमि	*लोंगाडोरस* जाति

प्रबंधन

सूत्रकृमियों की समस्या को निम्नलिखित नियंत्रण विधियों द्वारा प्रबंधन किया जा सकता है। इन नियंत्रण विधियों को रोगों की प्रारम्भिक अवस्था में अपनाने से पौधों को सूत्रकृमियों द्वारा अत्यधिक हानि से बचाया जा सकता है।

जैव नियंत्रण विधि

- पौधशाला में सूत्रकृमियों का प्रकोप अधिक होता है। इसकी रोकथाम के लिए गमले के मिश्रण को सौरीकृत करके उसमें *पोकोनिया क्लामाइडोस्पोरिया* या *ट्राइकोडरमा हरज़ियानम* 1.2 ग्राम/पौधा/10^6 सी.एफ.यू./ग्राम, की दर से डालते हैं।
- खेत में *पोकोनिया क्लामाइडोस्पोरिया* या *ट्राइकोडरमा* जैसे जैव नियंत्रण कारकों को 50 ग्राम/बेल; 10^8 सी. एफ.यू./ग्राम, की दर से वर्ष में दो बार, अप्रैल–मई तथा सितम्बर–अक्तूबर, उपचारित करने से सूत्रकृमियों की हानि से बचा जा सकता है।
- अन्तः पादपी जीवाणु जैसे *बैसीलस मैमटेरियम* तथा *करटोबैक्टीरियम ल्यूटियम* का उपयोग कर के *आर. सिमिलस* तथा *पैसलोमाइसिस लिलासिनस* या *पौसचोरिया पैनीट्रान्स* द्वारा *आर. सिमिलस* तथा *एम. इनकोगनिटा* आदि सूत्रकृमियों को नियंत्रण कर सकते हैं।

प्रतिरोधक किस्में

सूत्रकृमि प्रतिरोधक को उगाने से रोग के आपतन में कमी आती है तथा पौधे को सूत्रकृमियों की हानि से बचाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त काली मिर्च के कई प्रभेदों को भी चिन्हित किया गया है जो सूत्रकृमि प्रतिरोधक हैं।

परम्परागत कृषि क्रियाएं

- वनस्पतिकों जैसे नीम केक 200 ग्राम/बेल, हरी पत्तियां 3.5 कि. ग्राम/बेल या गोबर खाद 1 कि. ग्राम/बेल का उपयोग करके पौधों को सूत्रकृमियों की हानि से बचाया जा सकता है।
- पौधे के आधार में ग्लाइरीसीडिया की पत्तियों की झपनी तथा जी. सीपियम की पत्तियों को काटकर 10 ग्राम/कि. ग्राम की दर से हरी खाद के रूप में उपयोग करने से सूत्रकृमियों की रोकथाम की जा सकती है।
- अत्यधिक संक्रमित पौधा जिसके पुनर्जीवित होने की संभावना न हो उसे उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए। सूत्रकृमियों रहित रोपण सामग्री, धूमित तथा सौरीकृत गमला मिश्रण आदि का उपयोग रोपण के लिए करना चाहिए।

वर्षा जल संग्रहण की सस्ती, सुगम एवं टिकाऊ विधिः खेत तालाब (फार्म पौंड)

ए.के. मिश्रा, रविन्द्र कौर, रणबीर सिंह एवं विश्वनाथ प्रसाद

जल प्रौद्योगिकी केन्द्र

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली–110012

खेत तालाब जल संग्रह करने हेतु बनाये जाते हैं और बाद में संग्रहीत जल का उपयोग जीवन रक्षक सिंचन हेतु विभिन्न कार्यों के लिए किया जा सकता है जिसमें फसलों में भी संग्रहीत जल का उपयोग किया जाता है। खेत तालाब तटबंध प्रकार का या खोदा हुआ हो सकता है। तटबंध प्रकार का तालाब उन स्थानों, जहां जल निकासी चैनलों पर कुछ गड्ढ़े हों, के लिए बेहतर होता है। इस प्रकार के तालाब में गड्ढ़ों से मिट्टी के अवसाद को हटा दिया जाता है और उसमें बरसात के पानी का संचय करने के लिए एक तटबंध बना दिया जाता है। खुदे हुए तालाब का निर्माण खेत में उस जगह किया जाता है जहाँ तालाब क्षेत्र को प्राकृतिक बहाव से अधिकतम अपवाह प्राप्त हो सके। इस प्रकार के तालाब में प्रवेश द्वार एवं निर्गम द्वार संरचनाओं के साथ चारों तरफ तटबंध का निर्माण किया जाता है। प्राचीन काल में जल संग्रह करने हेतु ताल, तलैया, पोखर, जोहड़, सागर, पोखकर, महासागर या महसंमद और ऐसे ही अनेकों नामों से विभिन्न प्रकार की जल संग्रहण संरचनाएं हमारे देश के लगभग सभी प्रांतों में उपलब्ध थीं, जिनमें कुछ प्राकृतिक और कुछ मानव निर्मित थीं। जब भू–जल का पम्पों व सबमर्सिबल द्वारा अधिकाधिक दोहन नहीं किया जाता था, तब तक लगभग वर्षभर इन्हीं जल संग्रहण संरचनाओं अथवा कुंओं के द्वारा हमारे देश की जनता और उनके मवेशियों को पीने और अन्य सभी प्रकार के उपयोगों के लिए स्वयं जल उपलब्ध रहता था। कालांतर में भू–जल के अधिकाधिक दोहन के परिणामस्वरूप इन जल संग्रहण संरचनाओं के जल स्तरों में तीव्रता से गिरावट आनी प्रारम्भ हुई और तब इनमें सिंचाई शुरू होते ही जल का स्तर घटने लगा और फिर जैसे–जैसे भू–जल स्तर घटता गया, सतही संरचनाओं में जल की उपलब्धता की अवधि घटती गई। परन्तु वर्तमान में जल संबंधी आवश्यकता के कारण इस समस्या के वृहद अवलोकन और शोध के परिणाम–स्वरूप संग्रहण संरचनाओं के महत्व तथा पुनः जल संग्रहण संरचनाओं की तरफ हम सभी का ध्यान गया है। अब न केवल इनका अधिकाधिक संख्या में निर्माण प्रारम्भ किया जा रहा है, वरन् पुराने तालाबों का जीर्णोद्धार भी प्रारम्भ किया जा रहा है। यह एक बड़ी ही स्वागत योग्य और उत्तम बात है कि सिंचाई के क्षेत्र में किये जा रहे नवीन प्रयोगों और सिंचाई की उन्नत विधियों के अंतर्गत भू–जल के अंधाधुंध दोहन में कुछ कमी दृष्टिगत हो रही है जिसे भविष्य में और अधिक सुधारने की संभावना है। ऐसी अवस्था में सतही जल संग्रहण संरचनाओं में जल उपलब्धता की अवधि में भी वृद्धि के साफ संकेत हैं।

सतही जल संग्रहण संरचनाओं का जल न केवल फसलों तथा पशु–पक्षियों के काम आ सकता है बल्कि इसके बहुआयामी उपयोग भी संभव हैं। जिन स्थानों में सतही जल संरचनाओं में साल के लगभग 8 माह तक जल उपलब्ध रहता है, ऐसी संरचनाओं को एकीकृत मत्स्य पालन हेतु प्रयुक्त किया जा सकता है, जिससे न केवल उपलब्ध जल से जल उत्पादकता में द्विगुणित/त्रिगुणित वृद्धि होगी, वरन् जल जनित व्याधियों में भी कमी की जा सकती है। प्रस्तुत आलेख में ऐसे ही एक परीक्षण द्वारा प्राप्त परिणामों पर विस्तार से चर्चा की गई है।

तालाब एवं उसका प्रयोग

वर्षा के समय पानी को एकत्रित करने के लिए गड्ढ़ा खोदकर अथवा बांध बना कर पानी को एक स्थान पर एकत्रित करने वाली रचना तालाब कहलाती है। तालाब की मिट्टी और फसलों से चारों ओर छोटे बांध की तरह की संरचना का निर्माण हो जाता है। बरसात के जल को बहाव क्षेत्र में बांध

बनाकर रोका जाता है और छोटे तालाब के रूप में एकत्र कर लिया जाता है। ये तालाब प्राचीन समय में सामान्यतः सिंचाई के लिये बनाए जाते थे, परन्तु इनके कारण भू–जल स्तर का संरक्षण होता था और पेयजल की उपलब्धता भी सरल होती थी। साथ ही पीने के अलावा स्नान, कपड़े धोने, फार्म पर आग बुझाने के लिए, पशुओं के लिए जल की पूर्ति हेतु, पशुओं को नहलाने, मछली पालन एवं फार्म की सिंचाई जैसे कार्यो के लिए तालाब के पानी का ही प्रयोग होता था, जिससे पेयजल के अन्य स्रोतों पर दबाव कम पड़ता था तथा पेयजल का संरक्षण होता था। परन्तु दुर्भाग्यवश आज तालाब की प्राचीन व्यवस्था समाप्त हो रही है जिसके कारण पेयजल के स्रोतों पर दबाव बढ़ रहा है और उसकी किल्लत होने लगी है। तालाब का उपयोग प्राचीन काल से होता आया है लेकिन मध्यकाल आते–आते लोगों ने तालाब को भुला दिया था, लेकिन मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित श्री राजेन्द्र सिंह ने 1985 में अलवर (राजस्थान) से तालाबों के पुनः निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया था। भारत में तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा तथा उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में वर्षा के पानी को बांध बनाकर तालाबों में एकत्रित किया जाता है और फिर इस पानी का प्रयोग सिंचाई के लिए करते हैं। जब स्थल के ऊपरी भाग में स्थित तालाब भर जाता था तो जलमार्ग द्वारा तालाबों में जल को स्थानांतरित किया जाता था। विभिन्न प्रांतों में विभिन्न प्रकार से जल संग्रहण, जल संचयन/परिवहन और जल उपयोग की विभिन्न रीतियां प्रचलित हैं। भारत में सिंचित क्षेत्र की लगभग 15 प्रतिशत सिंचाई तालाबों द्वारा ही की जाती है।

तालाबों के प्रकार

प्रक्षेत्र पर निम्न प्रकार के भंडारण तालाब पाए जाते हैं–

1. सतही तालाब

सतही जल, जो कटाव के कारण बहता है, को रोककर इस तरह के जलाशय बनाये जाते हैं। इनकी जलधारण क्षमता, प्रक्षेत्र पर सिंचाई आदि की आवश्यकता को ध्यान में रखकर निश्चित की जाती है। इन जलाशयों में दो जल निकास मार्ग रखे जाते हैं, एक जल निकास मार्ग तो आपत्तिकाल में जलाशय की बाढ़ के पानी से रक्षा के लिए तथा दूसरा जल निकास मार्ग जलाशय के किनारे की वनस्पतियों की सुरक्षा के लिए बनाया जाता है।

2. उत्खनिज तालाब (डग–आउट पोंड)

जिन क्षेत्रों में मृदा ढ़ाल 4 प्रतिशत से कम होता है वहां पर इस प्रकार के तालाब बनाये जाते हैं। इन तालाबों की जल–धारण क्षमता भूमि में जल स्तर की गहराई, ढ़ाल और तालाब के किनारों के स्थायित्व आदि पर निर्भर करती है तथा इन तालाबों की गहराई 0.75–1.25 मीटर तक होती है।

3. उप–निकास या सरिता तालाब

इस प्रकार के तालाब किसी जल स्रोत या सरिता बहाव के निकट बनाए जाते हैं। जल स्रोत या सरिता से खुली अथवा बंद नालियों में जल इन तालाबों तक पहुंचता है। अवसादन को नियंत्रित करते हुए तालाब में जल की पूर्ति की जाती है।

4. स्रोत या निवेशिका संभरित तालाब

इस प्रकार के तालाबों का निर्माण दो प्रकार से किया जाता है। प्रथम तालाब, जो किसी जल स्रोत के नीचे मृदा काटकर स्कूप बेसिन के रूप में बनाये जाते हैं। दूसरे प्रकार के तालाब किसी घाटी को आड़ी दिशा में रोक बांध/(चेक डेम) बनाकर तैयार किए जाते हैं। इन तालाबों का जलस्तर जलस्रोत के निकास मार्ग से सदैव नीचा रखा जाता है।

प्रक्षेत्र तालाब/जलाशय का निर्माण और जीर्णोद्धार

फार्म तालाब का निर्माण पर्वतीय क्षेत्रों में जल प्रवाह मार्ग रोककर, बांध बनाकर अथवा जल प्रवाह में खाई खोदकर किया जाता है। परन्तु मैदानी भागों में समतल स्थलाकृति वाली भूमियों में तालाब बनाने का मुख्य उद्देश्य उक्त स्थान पर होने वाली वर्षा की मात्रा का जल संचित करने और इस जल का उपयोग फसलों में सूखे के समय किया जाना है। परन्तु इन तालाबों से भी 20 प्रतिशत जल विभिन्न क्रियाओं द्वारा नष्ट हो जाता है। जल की इस हानि को रोकने के लिए तालाब के चारों ओर एवं तलहटी पर अंतः श्रवण अवरोधी

बिना प्लास्टिक आच्छादन के एक खेत तालाब संरचना में जल संग्रहण

प्लास्टिक द्वारा आच्छादित जल संग्रहण संरचना

पदार्थों का प्रयोग करना चाहिए। इसी प्रकार वाष्पीकरण को रोकने के लिए वाष्पीकरण अवरोधी पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। इस विधि द्वारा संचित वर्षा के अतिरिक्त जल को पुनः खेतों तक पहुंचाने की क्रिया को वर्षा जल का पुनःचक्रण कहते हैं।

मछली पालन के लिए तालाब निर्माण

तालाब निर्माण के लिए स्थान का चयन करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक हैः

- स्थान प्राकृतिक रूप से गहरा होना चाहिए।
- चयनित स्थान की जल धारण क्षमता अधिक होनी चाहिए।
- चयनित स्थान में दी जाने वाली खाद एवं उर्वरक का शोषण नहीं होना चाहिए।
- मिट्टी न तो अधिक अम्लीय हो और न ही अधिक क्षारीय (पी.एच.मान 6 से 8 के बीच हो)।
- जहां हर मौसम में पहुंचने का मार्ग उपलब्ध हो।
- जिसके पास कोई सदाबहार जल स्रोत हो।
- जिसकी मिट्टी बांध बनाने के लिए उपयुक्त हो।

जल संरक्षण के लिए तालाब

जल के संरक्षण का प्रमुख प्रयास था, तालाबों का निर्माण। बड़े–बड़े राजा–महाराजा और जमींदार तालाब खुदवाया करते थे और इसके लिए प्रसिद्ध भी हो जाते थे। तालाब और बांध में एक यह अन्तर है कि तालाब प्राकृतिक जल स्रोत है और बांध कृत्रिम। भूमि का वह निचला भाग जहां वर्षा जल एकत्र हो जाता है, तालाब बन जाता है, जबकि बांध में वर्षा के बहते जल को मिट्टी की दीवारें बनाकर बहने से रोका जाता है। उदाहरण के लिए बुंदेलखंड क्षेत्र के टीकमगढ़ में ऐसे तालाबों की बहुतायत है जबकि उदयपुर में बांध के रूप में कृत्रिम झीलें विख्यात हैं।

तालाब का संरक्षण

जलग्रहण क्षेत्र में अतिक्रमण न होने दें एवं यदि अतिक्रमण हो तो सफाई कर दें। जब भी संभव हो तालाब को गहरा करते रहें ताकि पानी की अधिक मात्रा संग्रहित कर सकें। जिन तालाबों का पानी पीने के काम आता हो उनकी पशुओं एवं अन्य संक्रमणों से रक्षा करें। तालाब के निकट शौच न करें। बरसात के मौसम के बाद में जल को जीवाणु रहित करवाएं।

पुराने तालाबों का उचित रख–रखाव

पुराने तालाबों में गाद जमा होने से उनकी क्षमता कम हो जाती है, साथ ही जिस क्षेत्र से जल बहकर तालाब में आता है, वह छिन्न भिन्न हो जाता है, इसलिए जल तालाब तक नहीं पहुंच पाता है। तालाबों के पुनरुत्थान के लिए निम्नलिखित दो बातें अति आवश्यक हैंः

- मिट्टी खनन कर क्षमता बढ़ाना।
- तालाब के जलग्रहण क्षेत्र में पानी को तालाब की ओर केन्द्रित करना, ताकि वर्षा काल के दौरान तालाब की क्षमतानुसार जल भंडारण हो सके।

तालाब के प्रति सोच में बदलाव

समाज में तालाब बनाने का कार्य सैकड़ों वर्षों से आम प्रचलन में रहा है। लेकिन तालाबों को सामान्य तौर पर सामुदायिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के विकल्प के रूप में ही बनाया जाता रहा है। उसे ट्यूबवेल की तरह किसानों की सिंचाई की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले स्रोत के रूप में नहीं देखा गया है। सिंचाई के लिए तालाब बनाना लाभ का निवेश नहीं हो सकता है, यह धारणा बदलने के लिए सरकार ने अनुदान आधारित तालाब योजना शुरू की है।

खेत तालाब योजना

इस योजना के अंतर्गत भू—जलस्तर सुधारने, सिंचाई एवं जल की उपलब्धता बढ़ाने एवं किसानों को लाभ पहुंचाने के साथ ही जल संसाधन की दिशा में भी वर्तमान सरकार द्वारा कार्य किया जा रहा है। किसान स्वेच्छा से तालाब के तीन मॉडलों में से एक का चयन कर सकते हैं। सभी वर्गों के किसानों को लागत का 50 प्रतिशत अनुदान दिया जाता है, जिसकी अधिकतम सीमा 16 हजार 350 रुपये है। खेत, तालाब, वर्षा का पानी रोककर सिंचाई में उपयोग बहुत कारगर सिद्ध हुआ है।

तालाब बनाने से लाभ

तालाब, वर्षा जल को रोककर भू—जल की पुनःपूर्ति करने की महत्वपूर्ण संरचनाएं हैं। तालाबों को बंद कर देने से भू—जल पुनर्भरण की प्रक्रिया बाधित हो चली है तथा ट्यूबवैलों द्वारा अधिकतम भू—जल दोहन से भू—जलस्तर निम्नतम हो चला है, जो अधिकतम चिंता का विषय है।

तालाबों को बनाने से निम्नलिखित लाभ होते हैं

1. पूरे गांव के जल स्तर में सुधार होगा।
2. तालाब के चारों ओर लगे पेड़ों पर चिड़ियों का बसेरा होगा, जो हानिकारक कीटों को खाकर नष्ट करेंगी।
3. गांव का पर्यावरण सुधरेगा।
4. तालाब से सिंचाई करने में खर्च कम आता है।
5. जब बहुत से तालाब बन जायेंगे तो भू—जल के स्तर में आशातीत सुधार होगा।
6. तालाब में समेकित कृषि प्रणाली के तहत मछली पालन और बतख पालन कर सकते हैं। साथ ही इसमें मखाना और सिंघाड़ा भी उगाया जा सकता है।

खेतों में तालाब बनवाने हेतु सहायता

सरकार ने भू—जलस्तर सुधारने और सिंचाई जल की उपलब्धता बढ़ाने हेतु किसानों के लिए एक योजना शुरू की है। इसके तहत किसानों को अपने खेतों में तालाब बनवाने पर सहायता उपलब्ध कराई जाती है। इससे कई लाभ हैं, जैसे बारिश का पानी खेतों से इस तालाब में एकत्र हो जाता है और बाद में आवश्यकता पड़ने पर किसान सिंचाई में इसका प्रयोग कर सकते हैं। अर्थात् बारिश का पानी बर्बाद नहीं होता, बल्कि इसका सदुपयोग हो जाता है और इससे भू—जलस्तर में भी सुधार होता है। किसान इस तालाब में समेकित कृषि प्रणाली के तहत मछली पालन और बतख पालन कर सकते हैं। यह योजना किसानों के लिए शुरू की गई है तथा इसके तहत छोटे किसानों (जिनके पास 2.5 एकड़ से कम भूमि है), सीमांत किसानों (जिनके पास 5 एकड़ से कम भूमि है) एवं अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के किसानों (भूमि की सीमा नहीं) को पात्र माना गया है। योजना के तहत दो प्रकार

खेत तालाब से हरा—जंगल

के तालाब खुदवाए जा सकते हैं। बड़े तालाब पर सरकार की ओर से 1.5 लाख रुपये और छोटे तालाब के लिए 45 हजार रुपये की सहायता प्रदान की जाती हैं। इसमें काम करने वाले श्रमिकों को मनरेगा के अनुसार तय पारिश्रमिक दिया जाता है। इस योजना का लाभ लेने के लिए किसान सहायक निदेशक कृषि या संबंधित खंड विकास अधिकारी के पास अपना नाम पंजीकृत करवा सकते हैं।

निष्कर्ष: जल प्रकृति द्वारा दिया गया अनुपम उपहार है। वर्तमान परिदृश्य में देश की तीव्रगति से बढ़ती जनसंख्या हेतु जल की मांग के कारण आने वाले वर्षों में जल एक दुर्लभ प्राकृतिक संसाधन हो जाएगा तथा उन्नत जल के लिए संरक्षण तरीकों पर निर्भरता आवश्यक होगी। ऐसे में टिकाऊ फसलोत्पादन के लिए खेतों में जल संरक्षण, उपयोग, निर्माण तथा जल का पुनः चक्रण करने के लिए खेत तालाब की अहम भूमिका होगी। इस दृष्टिकोण से यह विवरण खेत तालाब को ग्रामीण एवं शहरी खेती में बड़े पैमाने पर अपनाने की आवश्यकता पर विचार करने की दिशा में अच्छी भूमिका निभायेगा।

भविष्य की खेती: रूफटॉप फार्मिंग/छत पर खेती

रणबीर सिहं, अनिल कुमार मिश्र एवं विश्वनाथ प्रसाद
जल प्रौद्योगिकी केन्द्र
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली–110012

देश की तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण तथा औद्योगिकीकरण के कारण दिन प्रतिदिन शहरी क्षेत्रों में भूमि की उपलब्धता कम होती जा रही है जिसके फलस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों तथा परंपरागत विधियों द्वारा मानव की खाद्यान्न एवं पोषण सुरक्षा आवश्यकताओं को पूरा करना असंभव हो रहा है। भारत की द्रुतगामी जनसंख्या वृद्धि तथा सीमित भूमि में अन्य संसाधनों के द्वारा औद्यानिक फसलों की उत्पादन एवं उत्पादकता को कई गुना बढ़ाना आवश्यक हो गया है। ऐसी परिस्थितियों में अपने मकानों की छतों या छज्जों पर बॉक्स या गमलों में फूल, फल, सब्जियों एवं औषधीय व सुगंध पौधों को उगाना भविष्य की खेती का एक वैकल्पिक स्रोत है। रूफटॉप कृषि की अवधारणा नई नहीं है, किंतु यह बेबिलॉन के हैंगिंग गार्डेनों के समय से ही चली आ रही है। मौजूदा समय में अनेक प्रायोगिक रूफटॉप फॉर्म भी हैं, जिनमें से एक भीड़–भाड़ वाले न्यूयार्क शहर के बीचों–बीच स्थित ब्रुकलिन ग्रैन्ज फार्म है। भारत भी इस दिशा में बहुत पीछे नहीं है। जयपुर से लेकर बंगलौर तक अनेक भारतीय घरों की छतों पर जैविक फार्म के साथ ये प्रायोगिक तौर पर सफल

मकान की छत पर खेती

रहे हैं। कमी केवल एक सुकेंद्रित कार्यक्रम की है जो फार्म से लेकर आहार तक जैविक कृषि प्रौद्योगिकियों, जानकारियों एवं प्रशिक्षण के लिए बस्तियों के नजदीक आउटलेट उपलब्ध कराएं। प्रयोगों से यह ज्ञात हुआ है कि गहन रूफटॉप बहुत कम लागत में अच्छे परिणाम दे सकता है। प्रत्येक व्यक्ति को इस दिशा में कार्य करने के लिए, स्वास्थ्यवर्द्धक आहार लेने तथा स्वस्थ रहने के लिए लामबंद किया जा सकता है और जैविक रूफटॉप कृषि इस दिशा में सहायक सिद्ध हो सकती है। रूफटॉप गार्डन की सब्जियों में रसायनों का प्रयोग नहीं के बराबर होता है जिससे इसका अवशोषण भी नहीं होता है।

तेजी से बढ़ती जनसंख्या के कारण गांवों एवं शहरों में हमारी खेती योग्य औसत भूमि की उपलब्धता घटती जा रही है। खेती योग्य भूमि कम होने के कारण एवं घटते जल स्तर के कारण आम आदमी बाजार में सब्जियों एवं फूलों की आसमान छूती कीमतों को लेकर बेहद परेशान है। समय और मौसम की परिस्थितियों के परिणामस्वरूप कृषि में भी बदलाव लाना आज की आवश्यकता है। वर्तमान में भूमिहीन किसानों/श्रमिकों की संख्या बढ़ती जा रही है जिसके कारण लोगों का रुझान खेती में कम हो रहा है। ग्रामीण लोग गांवों से शहरों की तरफ पलायन कर रहे हैं, लेकिन हम शहर या गांव में रहते हुए अपने आस–पास पड़ी खाली भूमि पर या अपने मकान की छत, छज्जों, बालकनी में, पॉलीथीन डालकर, गमलों व पॉलीथीन बैग में, बेकार पड़े डिब्बों में, अपनी गृह वाटिका का शौक पूरा कर सकते हैं। पौधों को उगाने के लिए सबसे आवश्यक है कि अच्छी मिट्टी, खुली धूप और पानी की सुविधा। छतों पर एक डेढ़ फुट मिट्टी डालकर उथली जड़ों वाले पौधे लगाए जा सकते हैं। इसके अलावा बड़े गमलों, ड्रम या डिब्बों में भी पोषक तत्व, उपजाऊ मिट्टी व बालू मिलाकर भी पौधे लगा सकते हैं। लेकिन पहले छत पर पानी निकालने

और मकान में नमी फैलने से रोकने के उपाय करने चाहिए। छत पर खेती से तात्पर्य है कि घर की छत पर उपलब्ध स्थान पर घर के साधनों जैसे छत पर रसोई व नहाने के पानी का समुचित उपयोग करते हुए स्वयं व परिवार के सदस्यों की देखरेख व प्रबंधन में स्वास्थ्यवर्धक व गुणवतायुक्त मनपसंद सब्जियों व फलों का उत्पादन कर दैनिक आवश्यकता की पूर्ति की जा सके।

छत पर खेती में सब्जी उत्पादन करना कई दृष्टिकोण से लाभदायक है यह परिवार के सदस्यों के स्वास्थ्य व ज्ञान की वृद्धि में सहायक होती है। छत पर खेती के लिए जगह का चुनाव, पात्र का चुनाव, प्रजातियों का चुनाव यथास्थिति के आधार पर ही सुनिश्चित करते हैं। यह पद्धति पर्यावरण हितैशी (इको फ्रेंडली) है, इससे शहर का पर्यावरण सुधरेगा, वहीं लोगों को भी आर्गेनिक सब्जियां खाने को मिलेंगी। इससे मानसिक संतुष्टि के साथ–साथ पौष्टिक आहार भी मिलेगा।

छत पर खेती के उद्देश्य

1. छत पर उपलब्ध स्थान का समुचित उपयोग करना।
2. मनपसंद सब्जियों एवं फलों को प्राप्त करना।
3. घर के अनुपयुक्त पानी का समुचित उपयोग।
4. परिवार के सदस्यों हेतु मनोरंजन व समय बिताने का साधन।
5. वर्षभर गुणवतायुक्त सब्जी, फल व फूल प्राप्त करना।
6. भूमि उपलब्ध न होने पर गमलों एवं पेटियों में उत्पादन।
7. व्यायाम की पूर्ति का सरल साधन, जिसके माध्यम से अनेक रोगों से मुक्ति।

छत पर खेती के लिए स्थान का विन्यास एवं कार्य

1. सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में रहे, इसका विशेष ध्यान देना चाहिए।
2. पैदल चलने एवं कार्य करने के लिए पर्याप्त स्थान हों।
3. फल वाले पौधों को पश्चिम की तरफ लगायें, जिससे अधिक धूप मिल सके।
4. सब्जियों को समूह के रूप में एक जगह लगाना चाहिए।
5. पौध किसी कोने में रखें।
6. मनोरंजन की दृष्टि से हरियाली लगाना आवश्यक है।
7. छत पर स्थान की कमी होने पर गमलों में फूलों एवं सब्जियों को लगा सकते हैं।
8. छत पर खेती में समय–समय पर सिंचाई करते रहना चाहिए।
9. घर की छत को साफ रखने व अच्छी बढ़वार हेतु निराई–गुड़ाई करते रहना चाहिए।
10. सब्जी एवं फल जैसे ही खाने लायक हों, उन्हें तोड़कर उपयोग में लाना चाहिए।

रूफटॉप फार्मिंग की प्रमुख प्रक्रियाएं

1. छत पर पौधे उगाने के लिए फसलों का चयन

मकानों की छतों पर फूल–फल, सब्जियां एवं औषधीय पौधों को आसानी से उगा सकते हैं।

(अ) छत पर खेती में सब्जियों का चयन

मौसम के अनुसार सब्जियों को सालभर लगाया जाता है। अधिकतर सब्जियां उथली जड़ वाली होती हैं और उन्हें 40 से 90 दिनों में तैयार किया जा सकता है। छत पर लौकी, तोरी, टिंडा, करेला, भिंडी, बैंगन, टमाटर, मटर, ग्वारफली, पालक, मेथी, गोभी, मूली, गाजर आदि सब्जियां उगाई जा सकती हैं।

प्लास्टिक बैगों में सब्जी उत्पादन

शुरू में आप पुदीना, धनिया, हरी मिर्च या अलग–अलग तरह के साग आदि सब्जिया उगा सकते हैं, इन्हें फलने–फूलने के लिए ज्यादा धूप की आवश्यकता नहीं होती है तथा इन्हें खिड़कियों के पास भी रखा जा सकता है। सर्दियों के मौसम की सब्जियों में धनिया, पोदीना, प्याज, लहसुन, सलाद पत्ता, मूली, पालक व मेथी आसानी से कनस्तरों में उगाई जा सकती हैं। गर्मियों की सब्जियों में करेला, ग्वार, तोरी व लौकी की फसलें उगाई जा सकती हैं। लेकिन गर्मियों की सब्जियों के लिए बड़े आकार के कनस्तरों की आवश्यकता होती है। खुली धूप व उपजाऊ क्यारियों में मटर, बींस, भिंडी, बैंगन, टमाटर, गाजर, मूली, प्याज, मिर्च, पालक आदि मौसम के अनुसार लगाए जा सकते हैं।

(ब) छत पर प्रमुख सब्जियां एवं उगाने का समय

1. पालक (सितम्बर से जनवरी) 2. पत्तागोभी (अक्टूबर से फरवरी) 3. लेटिस (अक्टूबर से फरवरी) 4. चौलाई (जून से अक्टूबर) 5. धनियां (सालभर) 6. टमाटर (अप्रैल से जुलाई) 7. मेथी (नवंबर से फरवरी) 8. फूलगोभी (जुलाई से फरवरी) 9. मटर (अक्टूबर से दिसम्बर) 10. खीरा (जुलाई से अक्टूबर) 11. लौकी (मई से अगस्त) 12. लोबिया (मार्च से जून)।

टिप्पणीः बेल वाली सब्जियों की अगेती फसल के लिए इनकी पहले पौध तैयार करके ही लगाना चाहिए।

(स) छत पर औषधीय पौधेः तुलसी, एलोवेरा, स्ट्राबेरी, ब्राह्मी, पुदीना, करी पत्ता आदि।

(द) छत पर फलदार पौधेः नींबू, पपीता, अनार, मीठा नीम, अंगूर, आम्रपाली आम की किस्म एवं केला आदि।

(य) फूल वाले पौधेः

1. गर्मी के पौधे जैसे सूरजमुखी, जीनिया, कॉसमॉस, गेलार्डिया व टिथोनिया आदि के बीज फरवरी के अन्तिम सप्ताह में लगाएं ताकि लगभग अप्रैल के महीने तक फूल निकल आएं।
2. सर्दी के पौधे जैसे गुलाब, कारनेशन, डहेलिया, गेंदा, गुलदावदी, हॉलीहॉक एवं सदाबहार के बीज अक्टूबर में बोने से दिसम्बर–जनवरी में फूल आ जाते हैं।
3. बारहमासी पौधे जैसे रात की रानी, चमेली, मोतिया, मोंगरा, मोरपंख व गेंदा आदि।

(फ) मच्छर भगाने वाले पौधेः गेंदा, सिट्रोनेला, तुलसी, लैवेंडर, रोजमेरी व हॉर्समिंट आदि ऐसे पौधे होते हैं जो मच्छर भगाने में सहायक व हवा को भी साफ करते हैं।

2. छत पर पौधे उगाने में ध्यान रखने योग्य बातें

छत पर सीधी धूप पड़ती है, इसलिए ऐसे पौधों का चयन करें जो कड़ी धूप सहन कर सकें। हमेशा प्राकृतिक प्रजनन वाले बीजों का प्रयोग करें, न कि हाइब्रिड का। गमले का आकार पौधों के आकार के अनुसार होना चाहिए। आमतौर पर 18 इंच वाले गमले सब्जियों के लिए उपयुक्त पाए गए हैं। पपीता, आम, नींबू व केला जैसे बड़े पौधों के लिए कम से कम एक मीटर गहरे ड्रम या गमलों का प्रयोग करें। छतों पर रखे जाने वाले गमलों की मिट्टी जितनी हल्की हो, उतना अच्छा होता है। एक भाग दोमट मिट्टी, एक भाग गोबर की सड़ी हुई खाद, एक भाग रेत और आधा भाग नीम की खली का मिश्रण उत्तम है। आजकल बाजार में वर्मीकुलाइट और कोको–पीट भी उपलब्ध हैं। मिट्टी व रेत की आधी मात्रा करके उनके बदले कोकोपीट व वर्मीकुलाइट का प्रयोग किया जा सकता है। इससे मृदा मिश्रण और हल्का हो जाएगा। छत पर खेती हेतु खुर्पी, बाल्टी, पौधों को सीधा करने के लिए पतली लकड़ियां व सुतली तथा पौधों की कटाई–छंटाई के लिए कैंची आदि उपकरणों का होना आवश्यक है।

3. छत पर उचित गमलों का चुनाव

छत पर मिट्टी के गमले सबसे अच्छे होते हैं। आप इन्हें प्लास्टिक की ट्रे पर रख सकते हैं ताकि गंदगी न फैले। मजबूती के लिए सीमेंट के गमलों का भी प्रयोग कर सकते हैं। प्लास्टिक के गमले उतने सही नहीं होते, क्योंकि इनमें पौधों का विकास रुक जाता है। मिट्टी के गमलों पर पेंट की जगह गेरू का प्रयोग करें। गमलों का चुनाव पौधे के ऊपर निर्भर करता है। मौसमी फूलों के लिए मिट्टी के छोटे गमले, बहुवर्षीय पौध गुलाब, पाम, क्रोटन आदि के लिए सीमेंट के गमले काम में लें। गमले अधिक बड़े भी प्रयोग न करें। जिससे इन्हें उठाने–रखने में परेशानी हो। सब्जियों व फलों के लिए लकड़ी के प्रयोग में लाये जा सकते हैं। पौधे लगाने के लिए पुरानी बाल्टी, टब और यहां तक कि बोतलों तक का भी प्रयोग कर सकते हैं।

4. छत पर पौधों को उगाने के लिए गमलों एवं नालियों की व्यवस्था

छत पर या आंगन में सब्जी उगाने के लिए मिट्टी, सीमेंट व प्लास्टिक के गमले प्रयोग कर सकते हैं। गमलों में मिट्टी 10 कि.ग्रा. से लेकर 250 कि.ग्रा. तक होनी चाहिए। गमलों की गहराई फसल के अनुसार 1 से 2.5 फुट तक होनी चाहिए। सब्जी के लिए सीमेंट की नालियों का प्रयोग भी किया जा सकता है, नालियों के नीचे थोड़ी–थोड़ी दूरी पर पानी निकासी के छेद होने चाहिए। भारी गमलों को दीवार के ऊपर रखना चाहिए और बेल वाली सब्जियों के गमले दीवार के पास नीचे रखने चाहिए। छत के पानी निकासी वाले स्थान के पास ज्यादा पानी चाहने वाली सब्जियों के गमले रखने चाहिए। मध्यम व छोटे आकार के गमले छत के बीच या छज्जों पर रखे जा सकते हैं। अधिक धूप चाहने वाली सब्जियों को छत की दक्षिण दिशा और छाया वाले पौधों को उत्तर दिशा में लगाना चाहिए। सब्जी की नालियां भी दीवार के सहारे, घर के दरवाजे व पिछवाड़े की तरफ बनाई जा सकती हैं।

5. पौधों के लिए गमलों को भरना

जब पौधों को गमलों में उगाया जाता है तो गमलों की मिट्टी उपजाऊ व ज्यादा पानी रोकने वाली होनी चाहिए। गमलों में गोबर की सड़ी हुई खाद, उपजाऊ मिट्टी, बालू, वर्मी कंपोस्ट, तालाब की मिट्टी, कंपोस्ट खाद, कोकोपीट, वर्मीकुलाइट मिला कर मिश्रण तैयार करना चाहिए। सबसे पहले गमले व नालियों को फिनाइल या क्लोरिन से धोएं, इसके बाद गमलों की तली में छेद के ऊपर पुराने गमले के खपरे इस तरह रखें कि इससे अनावश्यक पानी निकलता रहे। इसके ऊपर 5 से.मी. मोटी बजरी की परत या नारियल के रेशे या सूखी पत्तियों की पतली परत बिछाएं, फिर तैयार किए गए मिश्रण को गमलों में भर देना चाहिए। गमले का ऊपरी भाग 2 से 3 सें.मी. खाली रखना चाहिए। एक बार गमलों को भरने के बाद 2 से 3 बार पौधों की बुवाई व रोपाई की जा सकती है। पौध तैयार करने के लिए चौड़े मुंह के टब का प्रयोग कर सकते हैं। गमलों को ऐसी जगह रखा जाए जहां धूप, छांव व हवा आसानी से आ सके। गमले में जब पौधा 20 दिन का हो जाए तो एक चाय का चम्मच के बराबर यूरिया डाल दें। एक साल के बाद गमले को खाली करें और नया मिश्रण गमलों में भरें।

6. छत पर गमले में पौध लगाना

गमले के बीचों–बीच पौधे को सीधा लगाना चाहिए। यदि दूसरे स्थान में उखाड़कर लगा रहे हों तो नये गमले में उतनी ही गहराई पर लगायें जितना पहले था। पौधा लगाने के बाद हाथ से चारों ओर मिट्टी को दबा दें व खाली जगह मिश्रण भरें।

7. छत पर गमलों में सिंचाई की व्यवस्था

पहली बार हल्की सिंचाई करने के बाद कुछ दिनों के लिए गमलों को ऐसे ही रहने देना चाहिए। फिर सब्जियों की पौध की रोपाई के बाद सिंचाई करनी चाहिए। पौध रोपाई के बाद आवश्यकता पड़ने पर ही सिंचाई करनी चाहिए। सर्दियों में हर तीसरे–चौथे दिन और गर्मियों में रोजाना (हो सके तो दिन में 2 बार भी) पानी देना चाहिए। पानी सुबह या शाम के समय ही देना चाहिए। भूलकर भी तेज धूप में पौधों में पानी न दें। इससे पौधों के झुलसने का खतरा रहता है। सिंचाई के रूप में साबुन का पानी कभी भी प्रयोग नहीं करना चाहिए तथा बरसात का पानी प्रयोग किया जा सकता है। ध्यान रहे कभी भी आवश्यकता से अधिक पानी देने से पौधे की जड़ें सड़ जाती हैं। पानी को वाष्प के रूप में उड़ने से बचाने के

शहरों में छतों पर खेती

लिए गमलों की खुली सतह पर पॉलीथीन व घास डालनी चाहिए। जब सब्जियों में फूल आने लगे तो पानी थोड़ा कम देना चाहिए।

8. छत पर पॉलीहाउस की व्यवस्था

सब्जियों या अन्य पौधों को खराब मौसम से बचाने के लिए, पौध तैयार करने के लिए व पूरे साल पौधों को उगाने के लिए छत के एक भाग में छोटा पॉलीहाउस भी बनाया जा सकता है। पौधों को तेज धूप व ज्यादा सर्दी से बचाने के लिए एग्रोशेड नेट का प्रयोग भी किया जा सकता है। गर्मियों में छत के किनारे कद्दूवर्गीय सब्जियों को लगाकर तारों के जाल पर चढ़ा कर छत पर छाया की जा सकती है और छायादार स्थानों पर टमाटर, मिर्च एवं भिंडी उगाई जा सकती हैं।

9. बुवाई

पॉलीहाउस में हरा धनियां, शिमला मिर्च, टमाटर व खीरा पूरे साल उगाते रहना चाहिए। बाहर रखे गमलों में सब्जियों की बुवाई मौसम के अनुसार ही करनी चाहिए।

10. पौधों की कटाई–छंटाई

छत पर लगे हुए पौधे सुन्दर लगें और अनावश्यक रूप से नहीं बढ़ें, इसलिए कटाई–छंटाई हल्के रूप से होते रहना चाहिए। गमले में लगे पौधे का आकार संतुलित और सीमित हो तथा उसमें एक ही मुख्य तना रहना चाहिए।

छत पर पॉलीहाउस

11. पौधों को खाद एवं सुरक्षा

अच्छी पैदावार के लिए गोबर की खाद, पत्ती की खाद, वर्मी कम्पोस्ट, खली, आदि ज्यादा प्रयोग में लाएं। यूरिया, डीएपी, कीटनाशी दवाएं बहुत आवश्यक होने पर ही प्रयोग करें। कीड़ों व बीमारियों को रोकने के लिए तम्बाकू या नीम की खली का अर्क बनाकर छिड़काव करें। 10 से 15 दिन के अंतर पर सब्जियों के पौधों व बेलों पर नीम की पत्तियों का रस व गाय के पेशाब का छिड़काव करना चाहिए। पक्षियों व गिलहरियों से पौधों को बचाने के लिए नायलोन के जाल द्वारा कवर कर देना चाहिए।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि देश का हर व्यक्ति इस बात से परिचित है कि उसका भोजन दूषित है। यदि मौका दिया जाए तो हर व्यक्ति कम से कम अपने आहार के कुछ हिस्से को अपनी आंखों के सामने पैदा किए गए जैविक उत्पाद के रूप में उत्पादित करने का प्रयास कर सकता है। यदि कोई व्यक्ति एक गमले से पूरी छत पर कृषि कार्य का इरादा रखता है तो स्टार्ट–अप किट के बारे में सूचना होनी चाहिए। इसके लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली, भारतीय बागवानी अनु. संस्थान बैंगलोर एवं भारतीय सब्जी विज्ञान संस्थान, बनारस में ऋतु के अनुसार विभिन्न सब्जियों के बीजों के किट उपलब्ध हैं, जिन्हें खरीद कर लाभ उठाया जा सकता है।

रूफटॉप कृषि में अपार संभावनाएं हैं जो हमारे रहन–सहन से लेकर खान–पान तक को बदल सकती हैं। रूफटॉप खेती मकानों की छत पर एक प्रकार का बगीचा है। यह सजावटी लाभ के अलावा, छत पर रोपण, भोजन, तापमान नियंत्रण, जल विज्ञान संबंधी लाभ, वस्तु वृद्धि, निवास या वन्य जीवन मनोरंजन के लिए रास्ता प्रदान करता है और बड़े पैमाने पर पारिस्थितिकी लाभ हो सकता है। बड़े शहरों के उपभोक्ताओं की मांग को ध्यान में रखते हुए अब समय आ गया है कि शहरी क्षेत्रों में उच्च गुणवतायुक्त सब्जियों एवं फूलों का उत्पादन किया जाए जिसके लिए छतों पर खेती एक कारगर व आकर्षक विकल्प है।

सब्जियों के उत्पादन में जैव उर्वरकों का संभावित योगदान

सीमा सांगवान[1], एम.एस. राठी[1], के. अन्नापूर्णा[1], संगीता पॉल[1], जोगेन्द्र सिंह[2] एवं यवोने एंजल लिंगदोह[2]

[1]सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग, [2]शाकीय विज्ञान संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

सारांशः सब्जियों के उच्च उत्पादन, मृदा उर्वरता एवं उत्पाद की गुणवता बनाये रखने में जैव उर्वरकों की मुख्य भूमिका हैं। जैव उर्वरक सतत् एवं पर्यावरण मित्र कृषि का एक मुख्य घटक हैं। दीर्घकाल तक रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता, उनकी लागत एवं पर्यावरण पर होने वाले दुष्प्रभावों के लिए कोई व्यावहारिक रणनीति नहीं थी। जैव उर्वरकों का विभिन्न हरित एवं कार्बनिक खादों के साथ प्रयोग करने से न सिर्फ रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता व पर्यावरण पर होने वाले प्रतिकूल प्रभावों को कम किया जा सकता है अपितु फल एवं सब्जियों के उत्पादन में भी सुधार होता है। ये प्रबल सूक्ष्मजीव औद्यानिक फसलों में संरक्षित कृषि के अंतर्गत नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस पोषण में सक्रिय भूमिका निभाते हैं, जो कि प्रजनन क्षमता सूचकांक में सीधे–सीधे प्रतिबिंबित होती है। इस संदर्भ में जैव उर्वरक कृषक के लिए एक जैवीय विकल्प के रूप में सहायक हो सकते हैं जिससे सब्जियों के प्रति इकाई क्षेत्रफल उत्पादकता एवं मृदा उर्वरता में वृद्धि हो तथा मृदा के प्राकृतिक परिस्थितिकी तंत्र में भी निरंतरता बनी रहे।

प्रस्तावनाः वर्तमान में कृषि में उच्च निवेश प्रौद्योगिकी जैसे रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों एवं तृणनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग से उत्पादन तेजी से बढ़ा है। लेकिन अब कृषक समुदाय एवं अन्य लोगों में इन रसायनों के प्रयोग का मृदा उर्वरता, आसपास के वातावरण एवं संपूर्ण पर्यावरण पर हानिकारक प्रभाव के प्रति जागरूकता बढ़ी है। इस प्रकार जैव उर्वरकों का प्रयोग सतत् पर्यावरण हितैशी एवं हरित कृषि विकास के लिए एक प्रबल एवं विवेकपूर्ण व ग्रहण करने योग्य रणनीति है। जैव उर्वरक जीवित जैवीय निरूपण हैं जिनको रासायनिक उर्वरकों के विकल्प के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। ये जब मृदा, बीज अथवा पौधों की जड़ों में प्रयोग किये जाते हैं तो ये जड़ क्षेत्र में समूहन की योग्यता रखते हैं और पोषक तत्वों का आसपास की मृदा में संग्रहण करके पादप वृद्धि को शीघ्रता से बढ़ाते हैं। एक अनुमान के अनुसार, जैव उर्वरकों का प्रयोग करने से समान उर्वरता एवं उत्पादकता के साथ, अकार्बनिक उर्वरकों के प्रयोग में 28–30 प्रतिशत तक की कमी की जा सकती हैं। आजकल कृषक समुदाय के मध्य सब्जियों की उपज बढ़ाने के लिए बहुत अधिक पोषक तत्वों का प्रयोग किया जा रहा है। गुणात्मक सब्जियों की बढ़ती मांग की आपूर्ति के लिए रासायनिक उर्वरकों का बार–बार प्रयोग किया जाता है। साधारणतया, नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस उर्वरकों का अधिक मात्रा में प्रयोग किया जाता है। लेकिन इससे मृदा में अमोनिया, नाईट्रेट, नाईट्रस ऑक्साइड एवं फॉस्फेट आयन का संचयन होता है, फलस्वरूप सब्जियों के ऊतकों में भी इन आयनों की मात्रा बढ़ जाती है। इस संचयन से मृदा स्वास्थ्य, मानव स्वास्थ्य एवं सम्पूर्ण पर्यावरण का ह्रास होता है। इस प्रकार स्वच्छ गुणवतायुक्त सब्जी उत्पादन जिसमें मृदा में अकार्बनिक आयनों का संचयन न हो, इसके लिए जैव उर्वरक एक मुख्य भूमिका निभाते हैं।

जैव उर्वरकों को मुख्यतः तीन भागों में बांटा गया है जैसे नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले, फॉस्फेट विलेयीकारक एवं वैसीकुलर ऑरबस्कुलर माइकोराईजा। बहुत से सूक्ष्मजीव, जैसे जीवाणु, फफूँद एवं एक्टिनोमाइसीज, जिनमें जैवीय उपलब्ध नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने की योग्यता होती है, मृदा में उपलब्ध फॉस्फोरस का खनिजीकरण एवं विलेयीकरण कर सकते हैं, जिससे पौधों की जड़ों द्वारा उनका उद्ग्रहण बढ़ सके। इन सूक्ष्मजीवों को प्रयोगशालाओं में कृत्रिम माध्यम में उगाया जाता है और बीजों पर परत के रूप में अथवा सीधे मृदा अथवा जड़ों में प्रयोग किया जाता है। नाइट्रोजन जैव उर्वरकों को जब मृदा में प्रयोग किया जाता है तो मृदा में नाइट्रोजन स्थिरीकरण के साथ–साथ, मुक्तजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण

करने वाले जीवाणु जैसे एजोटोबैक्टर, एजोस्पिरिलम एवं क्लैबसिला प्रजाति की संख्या भी बढ़ जाती हैं। अन्य सहजीवी जीवाणु जैसे राईजोबियम भी एक प्रबल जीवाणु के रूप में दलहनी फसलों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करता है। जैव उर्वरक मुख्यतः पोषक तत्व जो मृदा में अनुपलब्ध अवस्था में होते हैं, उनको अपनी जैव क्रियाशीलता के द्वारा चालन करके उपलब्ध अवस्था में प्रदान करते हैं। जैव उर्वरकों के संबंध में अनेक अनुसंधान जैसे नाइट्रोजन स्थिरीकरण का टीका लगाना, फॉस्फोरस विलेयक जीवाणु, वॉम एकल अथवा उनके विभिन्न संयोजनों का सब्जियों की वृद्धि, उपज एवं गुणवता पर प्रभाव का अध्ययन हो चुका है।

नाइट्रोजन स्थिरीकरण जीवाणुओं का सब्जियों की उपज एवं गुणवता पर प्रभाव

एज़ोटोबैक्टर एवं एज़ोस्पिरिलम मुक्तजीवी जीवाणुओं के दो समूह हैं, जिनका सब्जियों के पौषण में मुख्य भूमिका है। मुक्तजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण एजोटोबैक्टर एक प्रबल जीव समूह के रूप में मृदा में उपस्थित होता है। इसके अतिरिक्त ये विभिन्न विटामिन, कार्बनिक अम्ल, पादप हार्मोन (इण्डोल एसिटिक अम्ल, जिबरेलिन एवं साईटोकाइनिन) सीड्रोफोर एवं कुछ फफूंद नाशक यौगिकों का भी निर्माण करते हैं। इस प्रकार ये पादप वृद्धि को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से बढ़ाते हैं। एजोटोबैक्टर वातावरणीय नाइट्रोजन को अमोनिया में बदलता है जोकि पादप द्वारा नाइट्रोजन पोषण के रूप में प्रयोग कर ली जाती है। जीवाणु टीके की विभिन्न सब्जियों में प्रयोग की क्षमता अच्छी प्रकार से विदित है। विभिन्न फसलें, जैसे बैंगन, टमाटर आदि उन मृदाओं में अच्छी वृद्धि करती हैं जिनमें कुछ कृत्रिम पादप पोषण दिया गया हो एवं एजोटोबैक्टर के साथ बुवाई की गई हो। इससे यह विदित होता है कि मृदा की उर्वरता का एजोटोबैक्टर की संख्या पर धनात्मक प्रभाव पड़ता है। एजोटोबैक्टर के गुणन एवं प्रसार के लिए उत्तम उत्पादक वातावरण पत्ता गोभी के खेत में पाया गया है। मृदा में कम उर्वरता होने पर भी बैंगन की फसल में अच्छा प्रभाव देखा गया है। टमाटर एवं सलाद की जड़ों को एजोटोबैक्टर पॉस्पली द्वारा उपचारित करने से फसल की वृद्धि एवं विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव देखा गया है। इसका कारण सम्भवतः जैवीय नाइट्रोजन स्थिरीकरण एवं पादप वृद्धि नियामक हैं। टमाटर की फसल को एजोटोबैक्टर विनेलेंडी द्वारा उपचारित करने से प्ररोह शुष्क भार, पत्ती क्षेत्रफल, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस की मात्रा एवं उपज में अनुपचारित नियंत्रित के सापेक्ष महत्वपूर्ण वृद्धि दर्ज की गई। पत्तियों वाली सब्जियों में अकेले एजोटोबैक्टर अथवा दूसरे जैव उर्वरकों के साथ संयोजन द्वारा प्रत्यक्ष प्रभाव देखा गया। पत्तियों वाली सब्जियों में भी इसका अच्छा प्रभाव देखा गया क्योंकि सब्जियों की पैदावार अनुपचारित नियंत्रित एवं मेथी के सापेक्ष क्रमशः 15.25 एवं 14.95 प्रतिशत अधिक पायी गई। टमाटर की फसल में एजोटोबैक्टर को 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हैक्टर के साथ प्रयोग करने से विपणन योग्य उपज 42.09 टन/हैक्टर प्राप्त हुई जबकि 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हैक्टर अकेले प्रयोग करने से 41.52 टन/हैक्टर प्राप्त हुई। 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन को एजोटोबैक्टर के साथ उपचारिक करने से पौधों के फैलाव, पत्तियों की संख्या एवं क्षेत्रफल में औजपूर्ण वृद्धि प्राप्त हुई। एजोस्पिरिलम अथवा एजोटोबैक्टर, एकल के सापेक्ष, दोनों को संयुक्त रूप से प्रयोग करने से लहसुन में प्ररोह की लम्बाई, जवाओं की संख्या एवं अधिक उपज दर्ज की गई। मुक्तजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण एजोस्पिरिलम से जब मिर्च को उपचारित किया गया तो पादप की ऊँचाई, शाखाओं की संख्या, मुख्य जड़ की लम्बाई, जड़ों का फैलाव, जल्दी पुष्पन, 50 प्रतिशत पुष्पन, पुष्पों की संख्या में वृद्धि, प्रति पौधा फलों की संख्या, प्रति पौधा ताजा एवं शुष्क फलों का भार, फल की लम्बाई एवं परिधि, प्रति फल बीजों की संख्या एवं बीजों के भार में महत्वपूर्ण वृद्धि पायी गई। इससे उपचारित करने से पादप में नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की मात्रा भी बढ़ती है। वैज्ञानिकों ने भिण्डी की प्रजाति "पूसा सावनी" की वृद्धि एवं उपज के प्रभाव का अध्ययन किया एवं पाया कि एजोस्पिरिलम द्वारा बीज एवं मृदा उपचार अनुपचारित नियंत्रित के सापेक्ष बेहतर रहा एवं अंकुरण की दर में वृद्धि, पादप वृद्धि गुण जैसे जड़ की लम्बाई, प्रथम पुष्पन का दिन, प्रथम फल गांठ, शुष्क पदार्थ उत्पादन, उच्चतम उपज/प्लॉट एवं प्रति हैक्टर उपज में वृद्धि दर्ज की गई। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि एजोस्पिरिलम द्वारा उपचारित प्रक्षेत्र में समान मात्रा की उपज प्राप्त करने के लिए अकार्बनिक नाइट्रोजन उर्वरक (30 कि.

ग्रा. नाइट्रोजन/हैक्टर), अनुपचारित (50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हैक्टर) के सापेक्ष कम मात्रा की आवश्यकता होती है। बेल्लारी प्याज में एजोस्पिरिलम उपचार के साथ अनुमोदित नाइट्रोजन का 73 प्रतिशत देने से प्याज की उपज, सल्फर की मात्रा एवं गुणवता में सुधार देखा गया है। यह पूर्व में ही अध्ययन हो चुका है कि एजोस्पिरिलम द्वारा उपचार करने से विशेषतः नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस पादप पोषक तत्वों का चालन पादप वृद्धि की बाद की अवस्था में अच्छा होता है, जिससे प्रत्यक्ष रूप से बैंगन की वृद्धि एवं पैदावार में वृद्धि होती है। पत्ता गोभी में एजोस्पिरिलम द्वारा उपचार करने से गैर आवरण पत्तियों की संख्या एवं भार, गांठों की लम्बाई एवं चौडाई, गांठ का कुल एवं शुद्ध भार/पौधा एवं उपज/हैक्टर में सार्थक वृद्धि होती है। एक अध्ययन में यह देखा गया है कि फूल गोभी में कुक्कुट खाद के साथ एजोस्पिरिलम का प्रयोग करने से 25 प्रतिशत नाइट्रोजन की बचत हुई एवं लागत मूल्य अनुपात 1:4.30 रहा। कम मात्रा में अकार्बनिक नाइट्रोजन का एजोस्पिरिलम के साथ प्रयोग करने से अधिकतम शुष्क पदार्थ प्राप्त हुआ एवं फसल की वृद्धि भी अधिक हुई।

फॉस्फोरस विलेयक (पी.एस.बी.) टीके द्वारा सब्जियों को उपचारित करने का पादप वृद्धि, उपज एवं गुणवता पर प्रभाव

पी.एस.बी. अर्थात् फॉस्फोरस विलेयक जीवाणु मृदा में अघुलनशील और अनुपलब्ध जटिल फॉस्फोरस को घुलनशील एवं उपलब्ध अवस्था में बदलकर सब्जियों की उपज एवं गुणवता पर भारी प्रभाव डालते हैं। यह तथ्य अनेक अनुसंधानों से सिद्ध हो चुका है। यद्यपि जैव उर्वरकों का लगातार कई वर्षों तक प्रयोग करने से कम से कम 50 प्रतिशत उर्वरकों के प्रयोग में कमी की जा सकती है। बगीचा मटर में राईजोबियम टीका एवं फॉस्फोरस विलेयक सूक्ष्मजीवों को 50 प्रतिशत नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस के साथ संयुक्त रूप से प्रयोग करने से पौधों की ऊंचाई, शाखाओं की संख्या, प्रति पौधा पत्तियों की संख्या एवं कटाई सूचकांक में महत्वपूर्ण वृद्धि दर्ज की गई है। मुख्यतः उत्तरी, पूर्वी पहाड़ियों में आलू पर जैव उर्वरकों के अध्ययन के द्वारा ज्ञात हुआ कि विभिन्न प्रकार के फॉस्फोरस विलेयक टीके को प्रयोग करने से आलू की उपज में क्रमशः 29, 19, 10 एवं 11 प्रतिशत तक की महत्वपूर्ण वृद्धि दर्ज की गई। आलू की फसल में फॉस्फोरस विलेयक जीवाणु एवं 150 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हैक्टर को संयुक्त रूप में प्रयोग करने से, अनुपचारित के सापेक्ष आलुओं के उत्पादन में 22:62:16 के अनुपात में बड़े, मध्यम एवं छोटे आलुओं में महत्वपूर्ण वृद्धि दर्ज की गई। बैंगन में पी.एस.बी. के साथ कार्बनिक खादों के प्रयोग करने से प्राप्त उपज, नाइट्रोजन एवं कार्बनिक खाद के संयुक्त प्रयोग से प्राप्त उपज के समान थी। अकार्बनिक उर्वरकों के एकल प्रयोग से प्राप्त बैंगन की फसल की विभिन्न अवस्था जैसे वनस्पतिक, पुष्पन एवं कटाई के समय में नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस तत्वों की मात्रा न्यूनतम थी।

इसका कारण अकार्बनिक नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस भाग का मृदा में अस्थिर होना, तेजी से निक्षालन होना एवं वाष्पित होना हो सकता है। उच्चतम नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की मात्रा उन उपचारों में पायी गई जिनमें कार्बनिक खादों एवं जैव उर्वरकों को संयुक्त रूप से प्रयोग किया गया था। पत्ता गोभी में भी प्रैसमड एवं पी.एस.बी. तथा स्लज एवं पी.एस.बी. को संयुक्त रूप से प्रयोग करने से गांठों की अधिक उपज प्राप्त हुई, जो अनुपचारित के सापेक्ष 10.5 एवं 16.0 प्रतिशत अधिक थी। चाइनीज पत्ता गोभी में कार्बनिक खाद एवं फॉस्फोरस विलेयक सूक्ष्म जीवों के प्रयोग से गुणवता मानकों जैसे कार्बोहाईड्रेट, कच्चे रेशे, विटामिन सी एवं कैरोटिनॉईड आदि की मात्रा में वृद्धि दर्ज की गई।

वॉम (वैसीकुलर ऑरबस्कुलर माइकोराईजा) टीके का सब्जियों की वृद्धि, उपज एवं गुणवता पर प्रभाव

बहुत से अनुसंधानकर्ताओं द्वारा वॉम (वैसीकुलर ऑरबस्कुलर माइकोराईजा) का बहुत सी सब्जियों पर प्रभाव का अध्ययन किया गया है। प्रक्षेत्र दशाओं में, टमाटर में वॉम फफूंद (ग्लोमस फॉसीकुलेटम) के एकल अथवा अन्य दूसरे जैव उर्वरकों के साथ प्रयोग करने से अनुपचारित एवं नियंत्रित के सापेक्ष पत्ती क्षेत्रफल, प्ररोह शुष्क भार, नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की मात्रा एवं उपज में वृद्धि दर्ज की गई। बेल्लारी प्याज में अनुमोदित नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की 75 प्रतिशत

मात्रा को वॉम फफूंद के साथ प्रयोग करने पर, प्याज में सल्फर की मात्रा बढ़ी हुई पायी गई। मिर्च में 100 प्रतिशत अनुमोदित नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस के सापेक्ष, वॉम फफूंद को 75 प्रतिशत नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस के साथ प्रयोग करने से अधिक उपज प्राप्त हुई। बिना वॉम फफूंद के सापेक्ष आलू प्रजाति कुफरी बादशाह में वॉम को प्रयोग करने से कुछ अनुसंधानकर्ताओं द्वारा प्ररोह, आलू के ताजा एवं शुष्क भार, पत्तियों की संख्या तथा उपज में सुधार देखा गया। एक अनुसंधान में प्याज में वॉम टीके के प्रयोग का खनिज लवणों के संगठन एवं प्याज के शुष्क भार पर प्रभाव का अध्ययन किया गया। इस अध्ययन में प्ररोह शुष्क भार एवं प्याज में विभिन्न पोषक तत्वों की मात्रा में महत्वपूर्ण सुधार देखा गया। अनुसंधान द्वारा यह प्रमाणित हुआ है कि सब्जियों में पोषक तत्वों के प्रबंधन के समय वॉम टीके के प्रयोग से सब्जियों में पोषक अवयव से संबंधी दृढ़ता एवं गुणवता भाव तथा भंडारण अवधि में सकारात्मक प्रभाव होता है। नर्सरी में वॉम का प्रयोग करने से उच्च गुणवतायुक्त पौध प्राप्त हुई तथा मृदा स्वास्थ्य में सुधार एवं अधिक उत्पादन हुआ। मुख्य प्रक्षेत्र में 22.93 कुन्तल/हैक्टर अधिक उपज प्राप्त हुई, जिससे अनुमोदित एनपीके उर्वरक की मात्रा में 25 प्रतिशत की बचत हुई। ब्रोकली में गोबर की खाद एवं वॉम का मिश्रित प्रयोग करने से पत्तियों का ताजा भार, तने की परिधि, गांठों का शुष्क भार तथा गांठों की परिधि एवं पैदावार में महत्वपूर्ण वृद्धि पायी गई। पत्ता गोभी, करेला, चाइनीज पत्ता गोभी एवं टमाटर में ग्लोमस वॉम फफूंद की तीन विभिन्न प्रजातियों का मिश्रण प्रयोग करने से अनुपचारित के सापेक्ष गुणात्मक एवं मात्रात्मक महत्वपूर्ण उच्च उपज प्राप्त हुई। वॉम में मृदा से फॉस्फोरस, जिंक, गंधक, लौह एवं पानी के उद्ग्रहण को बढ़ाने की योग्यता है। वॉम का प्रयोग करने से विभिन्न फसलों में 25–50 प्रतिशत उर्वरक की बचत होती है। धूमीकृत नर्सरी में वॉम का प्रयोग करने से सूखा, जड़ों के रोग, सूत्रकृमि एवं पौधों के बौने रोग में कमी देखी गई। निम्न तालिका में विभिन्न सब्जियों में जैव उर्वरकों के प्रयोग द्वारा होने वाली उपज में वृद्धि को दिखाया गया है।

टमाटर की फसल पर एजोटोबैक्टर का प्रभाव

अनुपचारित

उपचारित

तालिका : विभिन्न सब्जियों में जैव उर्वरकों के प्रयोग द्वारा होने वाली वृद्धि

सूक्ष्मजीव जैव उर्वरक के रूप में	फसलें	पैदावार में वृद्धि (प्रतिशत)
एजोस्पिरिलम	पत्ता गोभी	11.87
	प्याज	21.68
	मूली	9.00
	शकरकन्द	8.50
एजोटोबैक्टर	पत्ता गोभी	24.30
	लहसुन	14.23
	गांठ गोभी	9.60
	भिण्डी	8.97
	बैंगन	15.80
	मिर्च	10.30
	फूल गोभी	6.20

सूक्ष्मजीव जैव उर्वरक के रूप में	फसलें	पैदावार में वृद्धि (प्रतिशत)
पी.एस.बी.	लहसुन	14.23
	कद्दू	51.00
	बैंगन	10.00
	फूल गोभी	7.35
वॉम	प्याज	4.70
	ब्रोकली	6.95

सब्जियों में जैव उर्वरकों का प्रयोग कैसे करें ?

सब्जियों के विभिन्न चरणों में जैव उर्वरकों के प्रयोग के बहुत से तरीके हैं :

अ) बीजोपचार: सब्जियों में साधारणतया 10–14 कि.ग्रा. बीज को उपचारित करने के लिए 200 ग्राम जैव उर्वरक की आवश्यकता होती है। 200 ग्राम जैव उर्वरक का एक पैकेट, लगभग 400 मि.ली. पानी में पूर्णतया मिलाया जाता है। बीजों के ऊपर एक समान परत चढ़ाने के लिए इस मिश्रण को हाथ से बीजों में मिलाया जाता है। इन बीजों को छाया में कम से कम 10–15 मिनट सूखने के लिए रखा जाता है। इसके बाद इनकी तुरन्त बुवाई कर दी जाती है।

ब) कटे हुए टुकड़े/सैट उपचार: इस विधि का प्रयोग शकरकंद, आलू आदि की फसल में किया जाता है। 50–60 लीटर पानी में 1 कि.ग्रा. जैव उर्वरक का निलम्बन बनाया जाता है। तब रोपित किये जाने वाले पदार्थ के 1 एकड़ में बोयी जाने वाली सामग्री को इसमें 10–15 मिनट के लिए डुबोया जाता है। इसके बाद इनको छाया में सुखाकर प्रक्षेत्र में बुवाई कर दी जाती है।

स) पौधोपचार: इस विधि का प्रयोग मुख्यतः टमाटर, मिर्च, प्याज एवं बैंगन आदि में किया जाता हैं। इस विधि में भी 1 कि.ग्रा. जैव उर्वरक का 10–15 लीटर पानी में निलम्बन बनाया जाता है जिससे उर्वरक एवं पानी का अनुपात लगभग 1:10 रहे। एक एकड़ में रोपित की जाने वाली पौध के सर्वप्रथम बंडल बनाये जाते हैं। फिर इन बंडल की जड़ों को 15–20 मिनट के लिए इस निलम्बन में डुबोया जाता है। इसके बाद इस पौध को तुरन्त खेत में रोपित कर दिया जाता है।

द) मृदोपचार: जैव उर्वरक का सीधे मृदा में उपचार करने के लिए, लगभग 2–3 कि.ग्रा. जैव उर्वरक को लगभग 40–60 कि.ग्रा. मृदा अथवा कम्पोस्ट में मिलाया जाता है। इसके बाद इस मिश्रण को 1 एकड़ खेत में बुवाई के समय अथवा बुवाई से 24 घंटे पहले छिड़क दिया जाता है। पी.एस.बी. जैव उर्वरक के प्रयोग में भी साधारणतया यही विधि अपनायी जाती है।

अपनी मातृभाषा बंगला में लिखकर मैं बंगबन्धु तो हो गया किंतु भारतबंधु मैं तभी हो सकूंगा जब भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी में लिखूंगा।

बंकिम चन्द्र चटर्जी

उद्यमिता हेतु फलों और सब्जियों का न्यूनतम प्रसंस्करण

श्रुति सेठी, राम रोशन शर्मा, सुनीता सिंह एवं बिंदवी अरोड़ा

खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

जनसाधन अनुसंधान संस्थान द्वारा किए गए एक सर्वे के अनुसार भारत के लगभग 65 प्रतिशत इकाइयों में 20 से कम सदस्य हैं एवं इन्हें असंगठित तथा छोटे उद्यमों की श्रेणी में रखा जा सकता है। ऐसा माना गया है कि सन् 2020 तक बागवानी प्रसंस्करण उद्योग में लगभग 1.48 लाख जनसाधन की आवश्यकता होगी एवं इसमें लगभग 23000 ऐसे होंगे जिनके पास बागवानी संबंधित कोई–न–कोई शैक्षणिक योग्यता भी होगी।

भारत के प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेंद्र मोदी जी द्वारा शुरू की गई योजनाओं जैसे **राष्ट्रीय कौशल विकास मिशन, कौशल विकास एवं उद्यमिता राष्ट्रीय नीति, प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना एवं कौशल ऋण** आदि का मुख्य उद्देश्य है **'कौशल भारत, कुशल भारत'**। यदि हम किसानों को आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान करना चाहते हैं तो हमें अभी भी लम्बा रास्ता तय करना है जिसमें हमें बागवानी फसलों को प्रसंस्करण हेतु उद्यमिता को प्राथमिकता देनी होगी। ऐसा ही एक उद्यम फलों और सब्जियों का न्यूनतम प्रसंस्करण भी है। इस लेख में हमनें न्यूनतम प्रसंस्करण संबंधित प्रमुख क्रियाओं, समस्याओं एवं अच्छी विनिर्माण कार्यविधियों के बारे में जानकारी देने की कोशिश की है। कामकाजी महिलाओं के लिए भोजन तैयार करने में लगने वाले समय को कम करने हेतु, तथा सुविधाजनक भोजन की मांग के कारण न्यूनतम प्रसंस्कृत फलों और सब्जियों की मांग में वृद्धि हुई है। न्यूनतम अथवा कम प्रसंस्कृत संक्रियाओं में धोना, छांटना, काटना, छीलना, तराशना तथा चॉपिंग आदि जैसी कार्यविधियां आती हैं जिनसे ताजे फलों और सब्जियों की गुणवता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता। इस तरह की कार्यविधि का परिणाम ताज़ा उत्पादों के लिए सुविधाजनक होता है और इन्हें कम समय में तैयार तथा उपयोग किया जा सकता है। न्यूनतम प्रसंस्करण के दो लाभ हैं, पहला यह उत्पाद को ताज़ा तथा सुविधाजनक बनाए रखता है एवं दूसरा इन उत्पादों में पर्याप्त जीवन क्षमता होती है, जिससे कि इन्हें खपत वाले क्षेत्रों में आसानी से वितरित किया जा सकता है।

न्यूनतम प्रसंस्करण के लिए फलों और सब्जियों का चुनाव एवं प्रसंस्करण विधि

फलों और सब्जियों का चुनाव

सभी प्रकार के फल एवं सब्जियां न्यूनतम प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त नहीं हैं। चुने गए फल एवं सब्ज़ी की जीवन क्षमता अच्छी और सूक्ष्म जैविक क्षति कम होनी चाहिए। इसमें अधिक कार्बन डाईऑक्साइड तथा कम तापमान, कम श्वसन क्रिया आदि जीवन क्षमता को सीमित करते हैं। कुछ उत्पाद जैसे प्याज, लहसुन, गाजर, फूलगोभी और अनार के दानों का न्यूनतम प्रसंस्करण बहुत अच्छी तरह से किया जा सकता है परन्तु केला, टमाटर, भिण्डी आदि उपयुक्त नहीं हैं।

छीलना, छंटाई तथा काटना

सभी उत्पादों को छीलना आवश्यक नहीं होता परन्तु आलू, गाजर, तरबूज आदि को छीला जाता है। छीलने के लिए

कई विधियां प्रयोग में लाई जाती हैं जैसे हाथ से, भाप से, लाई से व मशीनों से। सलाद के लिए छंटाई की जाती है, ताकि अनवांछित पत्तियों को हटाया जाए। कटाई के लिए स्टेनलैस स्टील के तेज चाकू का प्रयोग सबसे अच्छा होता है। ये सभी क्रियाएं पानी में रख कर करने से उत्पाद में ऑक्सीकरण तथा भूरापन रोका जा सकता है।

धुलाई

धुलाई परीक्षण से पहले और परीक्षण के बाद की जाती है। छीलने व काटने से पहले प्रति किलो उत्पाद को 5–10 ली. पानी में धोना चाहिए। छीलने व काटने के बाद दूसरी धुलाई ठंडे पानी (5° सेल्सियस) में करनी चाहिए जिससे ऑक्सीकरक एंजाइम और सूक्ष्म जैविक क्रियाएं कम की जा सकें।

न्यूनतम प्रसंस्कृत उत्पादों की कवकनाशी रसायनों द्वारा धुलाई की जा सकती है। इस धुलाई से उत्पाद को कीटाणुरहित किया जाता है। धुलाई के पानी में सामान्यतः क्लोरिन का प्रयोग किया जाता है क्योंकि यह कीटाणुनाशक है और ताजे फलों व सब्जियों की सतह पर पाए जाने वाले जीवाणुओं को कम करता है। अधिकतर पानी में 50–200 पी.पी.एम. क्लोरिन का प्रयोग 6.0–7.5 पी.एच. पर 5 मिनट के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त कई देशों में ओज़ोन के प्रयोग को भी मान्यता है। यह कीटाणुनाशक के रुप में प्रयोग की जाती है। यू.एस. फूड एण्ड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन (2001) ने खाद्य पदार्थों के उपचार, भंडारण तथा परिरक्षण के लिए ओज़ोन के प्रयोग को मान्यता दी है। ताज़ा उत्पाद एवं न्यूनतम प्रसंस्कृत पदार्थों के लिए ओज़ोन को गैस या घोल के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। ओज़ोन का प्रयोग ताज़े उत्पादों में जैसे ब्रोकली, सेब, अंगूर, संतरा, नाशपाती, रसबरी तथा स्ट्राबेरी में किया गया है।

इसके अतिरिक्त कैल्सियम से भी उपचार करके फलों और सब्जियों को टिकाऊ बनाया जा सकता है। उत्पाद की धुलाई के लिए कैल्सियम सॉल्ट का 0.5 से 3 प्रतिशत घोल का प्रयोग, एक से पांच मिनट तक किया जाता है। अम्लों (रासायनिक अम्ल) के उपचार द्वारा भी ताज़ा कटे हुए फलों और सब्जियों को सुरक्षित रख सकते हैं। इसके लिए कई अम्लों का प्रयोग कीटाणुनाशक के रुप में किया जाता है। साईट्रिक अम्ल और एस्कार्बिक अम्ल का प्रयोग सलाद वाली सब्जियों में जीवाणुओं की संख्या को कम करने के लिए किया गया है। पर–ऑक्सी एसिटिक अम्ल, एक तेज ऑक्सीडाईजर है जो उत्पाद को कीटाणुरहित बनाने के लिए 100 पी.पी.एम. तक प्रयोग में लाया जा सकता है।

धुलाई के बाद पानी का निकास (ड्रेनिंग)

सामग्री में बहुत अधिक पानी रहने के कारण जीवाणु होने की संभावना हो सकती है। इसके लिए मशीन (बास्केट सेंट्रीफ्यूज) द्वारा पानी को निकाल दिया जाता है।

अन्य उपचार

न्यूनतम प्रसंस्करण में ब्लांचिंग (धवलीकरण) का उपचार जीवाणुओं को रोकने के लिए किया जाता है। ब्लांचिंग विधि में उत्पादों का 85–100° सेल्सियस तापमान वाले जल में उपचार किया जाता है। भंडारण के दौरान कम समय के लिए उपचार किए गए खाद्य पदार्थों में गुणवता कम नष्ट होती है। विकिरण परिरक्षण का अन्य उपाय है, जिसमें आयोनाइजिंग ऊर्जा द्वारा उत्पादों को परिरक्षित किया जा सकता है। इसमें कम ऊर्जा व्यय होती है तथा यह एक साफ तकनीक है। रासायनिक उपचार की तुलना में इस विधि में कोई भी रसायन खाद्य

सामग्री में शेष नहीं रहता एवं कम तापमान पर उपचार के कारण तापमान से प्रभावित गुणों की क्षति भी कम होती है और पदार्थों की गुणवता भी अच्छी रहती है। लेकिन अभी भी भारत देश में न्यूनतम प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों को इस विधि से परिरक्षित करने की मान्यता प्राप्त नहीं हुई है।

मिश्रित तकनीक (हर्डल तकनीक) द्वारा भी फलों और सब्जियों को सुरक्षित रखा जा सकता है। इस विधि में कई विधियों को मिलाकर हर्डल प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाता है। इस तकनीक में तापमान, पानी, उचित वातावरण, अम्ल की मात्रा, खाद्य रसायन तथा सूक्ष्मजीवों (लैक्टिक अम्ल जीवाणु) जैसे उपायों का मिश्रित प्रयोग किया जाता है। इस विधि में मिश्रण से परिरक्षण के अलग–अलग उपायों के दुष्परिणामों को कम किया जा सकता है। इस विधि में गुणवता की हानि कम होती है और सूक्ष्मजीवों का नियंत्रण अच्छा होता है। उत्पाद की गुणवता के आधार पर ही हर्डल का चुनाव करना चाहिए।

न्यूनतम प्रसंस्कृत उत्पादों की पैकिंग एवं भंडारण

सामग्री तैयार होने के उपरांत पैकिंग तथा उनका भंडारण आवश्यक है। पैकिंग करने के कई तरीके हैं। सबसे उपयुक्त पैकिंग विधि है संशोधित वातावरण पैकेजिंग। संशोधित वातावरणीय विधि द्वारा सामग्री के साथ विशेष गैस सम्मिश्रण का सक्रिय प्रयोग कर संशोधित वातावरण तैयार किया जा सकता है। दोनों उपायों का उद्देश्य पैकेज के अन्दर उच्चतम गैस संतुलन बनाना होता है जिससे जहां तक संभव हो सके

उत्पाद में श्वसन सक्रियता कम से कम रहे। सामान्यतः इसका उद्देश्य 2–5 प्रतिशत कार्बन डाईऑक्साइड, 2–5 प्रतिशत ऑक्सीजन तथा शेष नाईट्रोजन गैस का संयोजन बनाए रखना है। अधिकतर न्यूनतम प्रसंस्कृत उत्पाद कम तापमान पर भंडारित किए जाते हैं जिससे उनमें रासायनिक क्रियाओं को नियंत्रित किया जा सके तथा उनको अधिक समय के लिए टिकाऊ बनाया जा सके।

इसके अतिरिक्त साधारण वैक्युम पैकेजिंग भी एक प्रकार की संशोधित वातावरण पैकेजिंग है। इसमें उत्पाद को एक हवारहित डिब्बे में 40 के.पा. (40KPa) दबाव पर 4–7° सेल्सियस तापमान पर रखा जाता है, परन्तु गैस की मात्रा सामान्य होती है। इस वातावरण में उत्पाद की गुणवता को सुरक्षित रखा जाता है क्योंकि इनमें रासायनिक क्रिया और सूक्ष्मजीवों से होने वाली क्षति को कम कर सकते हैं।

एक दूसरी प्रकार की पैकेजिंग तकनीक भी है जिसे "एक्टिव पैकेजिंग" कहते हैं। इस तकनीक का प्रयोग भी किया जा सकता है। इसे कई प्रकार से किया जा सकता है जैसेः– ऑक्सीजन को कम करने वाले व कार्बन डाईऑक्साइड को सोखने वाले तरीके या ऐसे तरीके जिनसे एथिलीन गैस की मात्रा कम की जा सके। रसायनों का उपयोग (पोटैशियम परमैंग्नेट, एक्टिव चारकोल) इत्यादि। इन तरीकों से उत्पादों की गुणवता को टिकाऊ बनाया जा सकता है तथा उन्हें कीटाणुरहित रखा जा सकता है।

आजकल कई आधुनिक विधियों का प्रयोग किया जाता है जिससे न्यूनतम प्रसंस्कृत फलों और सब्जियों को परिरक्षण के बाद भी ताज़ा रख सकें। इनमें से एक विधि है – खाद्य लेपन (edible coating)। इस विधि में खाद्य लेपन की पतली परत प्रसंस्कृत उत्पाद पर चढ़ाई जाती है जिससे उत्पाद में गैस, नमी, तेल, वसा तथा अन्य पदार्थों का बाहर निकलना नियंत्रित किया जा सके और उनमें सुगंधित पदार्थों को सुरक्षित रखा जा सके। इस विधि से उत्पाद की गुणवता को नियंत्रित किया जाता है ताकि वितरण के दौरान और पैकेट खोलने के बाद भी खाद्य पदार्थ ठीक रहे। तालिका 1 में कुछ उत्पादों के लिए खाद्य लेपन के बारे में जानकारी दी गई है।

तालिका 1: फलों एवं सब्जियों के लिए खाद्य लेपन तथा उसका उद्देश्य

उत्पाद	लेपन	उद्देश्य
ताजा कटे हुए सेब	एल्जीनेट/जिलेटिन	ऑक्सीजन, कार्बन डाईऑक्साइड तथा पानी को नियंत्रित करना।
	ज़ीन (Zein)	ऑक्सीजन, कार्बन डाईऑक्साइड तथा पानी को नियंत्रित करना तथा चमक बनाए रखना।
छिली हुई गाजर	ज़ेन्थम गम (गोंद)	पानी, कैल्सियम तथा विटामिन ई की मात्रा को नियन्त्रित रखना।
	एल्जिनेट	पानी को रोकना, तथा जीवाणुओं से बचाव करना।
लीची (छिली हुई)	काईटोसन	ऑक्सीजन तथा पानी का नियंत्रण।
नाशपाती (कटी हुई)	मिथाईल सैल्युलोज़	ऑक्सीजन, कार्बन डाईऑक्साइड एवं पानी का नियंत्रण।
सलाद (लैटयूस)	एल्जिनेट	ऑक्सीजन तथा कार्बन डाईऑक्साइड का नियंत्रण।

न्यूनतम प्रसंस्करण से संबंधित समस्याएं

सीमित जीवन क्षमता

छीलने तथा पीसने के क्रम में न्यूनतम प्रसंस्कृत पदार्थों की कोशिकाएं फट जाती हैं और ऑक्सीडाइजिंग एंजाइम जैसे अन्तराकोशिकी उत्पाद अलग हो जाते हैं। अतः ठंडे तापमान में 1–3 दिन तक सीमित जीवन क्षमता हो जाती है।

सूक्ष्म जैविक क्षति

उत्पाद को छीलने और लच्छे बनाने के दौरान उत्पाद की सतह वायु के सम्पर्क में आती है और उसके कारण जीवाणु, खमीर और फफूंदी से संदूषण होने की संभावना रहती है। विशेष रुप से न्यूनतम प्रसंस्कृत सब्जियों के मामलों में जिनमें से अधिकांश निम्न अम्ल वर्ग में (पी.एच. 5.8–6.0) आती हैं, उच्च आर्द्रता और बड़ी संख्या में कटी हुई सतहों से सूक्ष्मजीवों के विकास के लिए श्रेष्ठ परिस्थितियां पैदा हो जाती हैं। इसलिए उन्हें लम्बे समय तक बनाए रखने के लिए और उनकी सूक्ष्म जैविक सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए $\leq 5^{\circ}$ सेल्सियस तापमान पर संग्रहित करना चाहिए।

भूरापन

पहले से छीले हुए और फांके किए हुए सेबों और आलूओं का भूरा होना एक मुख्य समस्या है जो कि पॉलीफिनोल ऑक्सीडेस एंजाइम की संक्रिया के कारण होता है। पारम्परिक रुप से भूरा होने से बचने के लिए सल्फाइट का प्रयोग किया जाता था परंतु यह विशेष रुप से अस्थमा के मरीजों के लिए उनका प्रयोग हानिकारक है। इस कारण यू.एस. फूड एंड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन ने सल्फाइट के प्रयोग को प्रतिबधित कर दिया है जिससे सल्फाइट के विकल्पों में दिलचस्पी अधिक बढ़ रही है।

अच्छी विनिर्माण कार्यविधियां (जी.एम.पी.)

- संदूषण को रोकने के लिए कच्ची सामग्री को प्राप्त करने तथा उसके भंडारण कक्ष और उत्पादन कक्ष का सही प्रबंधन करें।
- आराम तथा सामाजिक कक्ष का उचित प्रबंधन होना चाहिए।
- प्रसंस्करण कक्ष का अच्छा सामान्य रखरखाव हो।
- अच्छा वैयक्तिक स्वास्थ्य एवं प्रशिक्षण।
- फालतू सामग्री का उचित प्रबंधन करें।
- तृण शैय्या और भंडारण कक्ष का निरीक्षण एवं सफाई नियमित अंतराल पर करें।
- उपकरणों और मशीनों का डिजाइन ठीक हो।
- उपकरण सामग्री का उचित चयन करें।
- मशीनों, उपकरणों तथा लिफ्ट आदि में नुकीले कोण नहीं होना चाहिए।
- निर्मित उपकरण की अच्छी साफ–सफाई रखें।

- प्रसंस्करण कक्ष और उपकरणों के लिए सफाई तथा स्वच्छता कार्यक्रम होना चाहिए।
- प्रसंस्करण कक्ष तथा उपकरणों की रोजाना धुलाई करें।
- स्वच्छता और सुरक्षा, रख–रखाव, उचित कार्यप्रणाली एवं सही समायोजन आदि के लिए उपकरणों का निरीक्षण करते रहें।
- उचित कार्यविधि, अच्छी विनिर्माण कार्यविधि, निर्धारित पैरामीटर के अनुपालन और रिकार्ड रखने के लिए संक्रियाओं की जांच करते रहें।

न्यूनतम प्रसंस्कृत फल और सब्जी उत्पादों को विकसित करने के लिए अभी भी बहुत अधिक अनुसंधान की आवश्यकता है जिनकी उच्च संवेदी गुणवता, सूक्ष्म जीवीय सुरक्षा और पौषणिक मान होता है। सूक्ष्मजीवीय संदूषण के जोखिम को कम करने के लिए एच.ए.सी.सी.पी. सिद्धान्त (खतरा विश्लेषण महत्वपूर्ण नियंत्रण बिन्दु) का और जी.एम.पी. का अनुप्रयोग बहुत अधिक महत्वपूर्ण है।

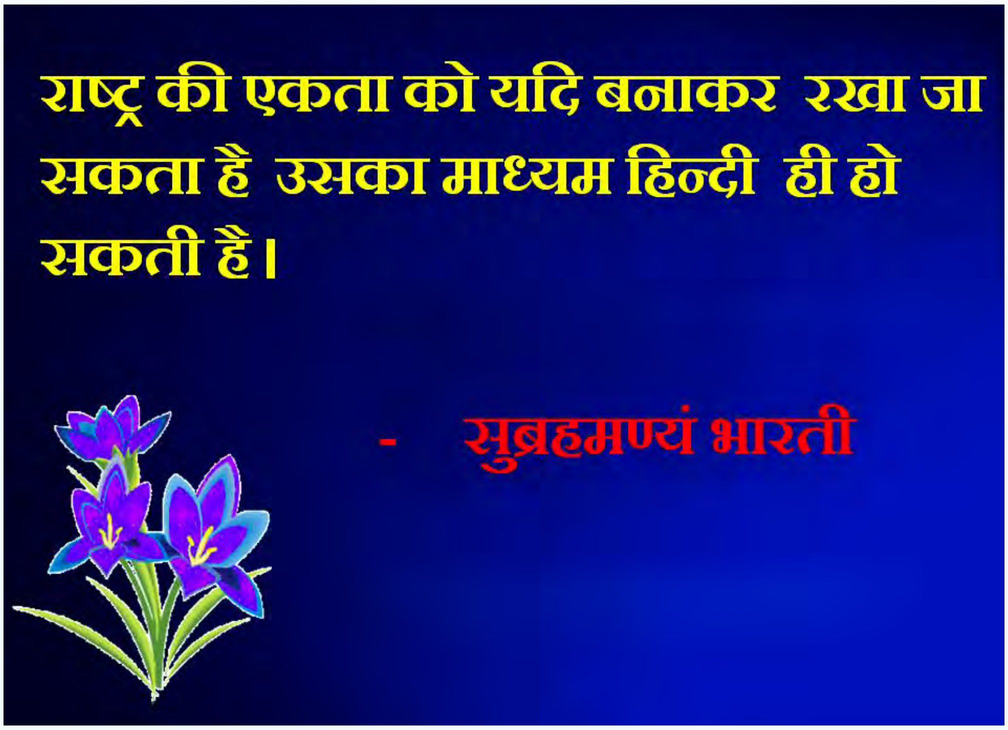

टमाटर के नए कीट, *टूटा एब्सोलूटा* की निगरानी एवं त्वरित कार्यवाही योजना

पी.आर. शशांक, सचिन एस. सुरोशे, नरेश एम. मेश्राम एवं जे.पी. सिंह
कीट विज्ञान संभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

टमाटर पिन वर्म या पर्ण सुरंगी या कलिका कृमि, *टूटा एब्सोलूटा,* एक विदेशी कीट है जिसको पहली बार भारत में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों ने महाराष्ट्र में टमाटर की फसल को क्षति पहुंचाने के बारे में रिर्पोट किया। यह कीट पूरे विश्व में टमाटर को क्षति पहुंचाने वाले एक प्रमुख कीट के रूप में चिन्हित किया गया है। इसके बाद इस कीट की उपस्थिति को हमारे देश के अन्य राज्यों जैसे कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, तेलंगाना और गुजरात में भी दर्ज किया गया। अतः इस कीट के प्रसार को अन्य टमाटर उत्पादक राज्यों में रोकने के लिए एवं उसके प्रभावी प्रबंधन हेतु तत्काल कदम उठाने की आवश्यकता है ताकि प्रारंभिक अवस्था में ही इसके प्रकोप को रोककर उपज में होने वाली क्षति को बचाया जा सके। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए इस कीट की सही तरीके से पहचान एवं निगरानी अति आवश्यक है।

उत्पत्ति एवं विवरण

टूटा एब्सोलूटा का उद्‌भव देश दक्षिण अमेरिका है। यूरोप (स्पेन) में इस कीट के प्रकोप को 2006 में देखा गया। इसके बाद इस कीट के प्रकोप को सम्पूर्ण यूरोपियन देशों एवं उत्तरी अफ्रीका तथा मध्य पूर्व भागों सहित पाया गया। इस समय इस कीट की उपस्थिति को विश्व के अन्य देशों जैसे इटली, फ्रांस, माल्टा, यूनाइटेड किंगडम, ग्रीस, स्विटजरलैंड, पुर्तगाल, मोरक्को, एल्जीरिया, ट्यूनीशिया, लीबिया, एल्वेनिया, सउदी अरब, यमन, ओमान, इजिप्ट, सूडान, दक्षिणी सूडान, इथियोपिया तथा सेनेगल में भी दर्ज की गई है।

कीट की पहचान

वयस्क कीट 6.7 मि.मी. लम्बा एवं पंख फैलाने की स्थिति में 10–14 कि.मी. लम्बाई में होता है। वयस्क कीट का रंग भूरा या रजत भूरा तथा अग्रपंख पर गहरा धब्बा पाया जाता है। पंख का उपरी भाग धारीदार एवं भूरी पपड़ीनुमा होता है। कीट की श्रृंगिका (एन्टीना) बड़ी, तन्तु आकार की काले एवं भूरे स्केल से आक्षारित होती है। अण्डा क्रीम सफेद से पीले रंग का 0.35–0.40 मि.मी. लम्बा एवं छोटे बेलन के आकार का होता है। प्रारम्भिक अवस्था में सूंडी का रंग क्रीम एवं सिर काले रंग का होता है। लेकिन बाद की अवस्था सूंडी का रंग हल्का गुलाबी एवं सिर भूरे रंग का हो जाता है। प्यूपे का रंग भूरा होता है।

जीवन चक्र एवं क्षति के लक्षण

वयस्क मादा कीट पत्तियों की निचली सतह पर्णवृन्त एवं कालिका पर औसतन 206 अंडे देती है। अंडे से 4–6 दिन में सूंडी निकलती है। सूंडी पौधे के उतक को भेदने से पहले कुछ घंटों तक पत्तियों को खाती है। सूंडी द्वारा पहुंचाई गई क्षति की धारियों को पत्तियों पर देखा जा सकता है। ये धारियां टमाटर की पत्तियों पर लीफ माइनर द्वारा बनाई गई धारियों से अपेक्षाकृत चौड़ी होती है। लीफ माइनर का उत्सर्ग (मलमूत्र) काले धागे नुमा धब्बा होता है जबकि *टूटा एब्सोलूटा* का उत्सर्ग काली गोली (पीलेट्स) के आकार का होता हैं पूर्ण विकसित सूंडी पत्तियों पर बड़ा दाग बनाती हैं। सूंडियों एवं उनके उत्सर्ग को उनकी द्वारा बनाई गई सुरंगों में भी देखा जा सकता है। कभी–कभी एक पत्ती में एक से अधिक सूंडियां भी पाई जाती हैं। सूंडियां टमाटर के पौधे की

अंतस्थ कलिका (टर्मिनल वड) एवं फलों का भी क्षतिग्रस्त करती हैं जिससे बाजार में ऐसे क्षतिग्रस्त फलों को पसंद नहीं किया जाता है। *टूटा एब्सोलूटा* द्वारा क्षतिग्रस्त फलों पर पिन होल पाया जाता है जबकि *होलिको आर्मीजेरा* के सूंडियों का आधा भाग फल के अन्दर व आधा भाग बाहर होता है। टूटा एब्सोलूटा को देखने के लिए हमें फल को काटना पड़ता है। सूंडियों का विकास चार अवस्थाओं में होता है तथा सूंडियां पत्तियों के हरे भाग को खा जाती हैं एवं क्षतिग्रस्त सुरंगों में ही रहती हैं। पूर्ण विकसित सूंडियां अपने द्वारा बनाई सुरंगों में प्यूपा खाती हैं या कभी–कभी प्यूपा अवस्था में जाने के लिए जमीन पर गिर जाती हैं। कीट का जीवन चक्र वातावरण की अवस्था पर निर्भर करता है। सामान्यतः जीवन चक्र 19.7^0 सेल्सियस तापमान पर 39.8 दिन में 27.1^0 सेल्सियस तापमान पर 23.8 दिन में सम्पन्न होता है।

परपोषी क्षेत्र

टमाटर इस कीट के लिए सबसे उपयुक्त परितोषी है लेकिन इसके अतिरिक्त अन्य सोलेनेसी कुल की फसलें जैसे बैंगन (*सोलैनम मेलोन्जेना*), शिमला मिर्च (*कौप्सिकम एंनम*), आलू (*सोलैनम ट्यूबेरोसम*), स्वीट पेपर (*सोलैनम मूरीकैरम*) एवं तम्बाकू (*निकोटियाना टोवैकम*) पर भी इस कीट का प्रकोप पाया जाता है। इस कीट की अन्य सोलेनेसी कुल की घासों, जैसे *धतूरा फेरोक्स, धतूरा स्ट्रैमोनियम* एवं *निकोटियाना ग्लाउका* पर भी पाई जाती है।

टूटा एब्सोलूटा कीट के प्रबंधन के उपाय

टूटा कीट को रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग करके नियंत्रित करना बहुत कठिन होता है क्योंकि इस कीट की सूंडियां अपने द्वारा बनाई गई सुरंगों के अन्दर रहती हैं। हालांकि इसके जीवन चक्र में कुछ कमजोर कड़ियां हैं जिसे लक्ष्य बनाया जा सकता है। कीट द्वारा अंडे पत्तियों एवं अन्य भागों की सतहों पर दिए जाते हैं जिंहें परभक्षी एवं परजीवी कीट आसानी से आक्रमण कर सकते है। सूंडी की प्रथम अवस्था कई घंटे तक सुरंग बनाने से पहले पत्तियों पर रहती हैं। इस समय को कीट नियंत्रण हेतु प्रभावी तरीके से प्रयोग किया जाता है।

जनसंख्या अवलोकन

जनसंख्या का अवलोकन कीट की उपस्थिती एवं उसका समय से नियंत्रण सुनिश्चित करने हेतु अति आवश्यक है। प्रारम्भिक अवस्था में अन्डे की एवं सूंडियों द्वारा बनाई गई सुरंगों की पहचान करना इस कीट के प्रबंधन हेतु अत्यंत लाभदायक हो सकता है। फीरोमोन ट्रैप का प्रयोग करके नर कीटों की संख्या का अनुमान लगाया जा सकता है। 20–25 कीट प्रति ट्रैप की संख्या

को आर्थिक स्तर मानकर उसके नियंत्रण हेतु प्रभावी कदम उठाया जाना चाहिए ताकि इसकी संख्या का आर्थिक क्षति स्तर तक पहुंचाने से रोका जा सके।

प्रबंधन हेतु तत्काल उठाए जाने वाले कदम

कर्षण विधि

- एकधा सस्यन (मोनो क्रॉपिंग) या अन्य सोलेनैसियस फसल में पूर्वावशिष्ट संख्या को रोकने के लिए दो फसलों के बीच में दो महीने का अंतराल होना चाहिए।
- जुताई करने के पश्चात् प्लास्टिक पलवार द्वारा सौरीकरण (सोलराइजेसन) करें।
- वैकल्पिक घास परिपोषकों की सफाई करें।
- पौधरोपण हेतु स्वस्थ पौद का प्रयोग करें।

जैविक नियंत्रण

नेसिडियोकोरिस टेनुइस, नेक्रोम्नस जाति, *ओरियस जाति* एवं *ट्राइकोग्रैमा* जाति का संरक्षण करें या अभिवर्धन (आगुमेन्टेसन) करें।

कीटनाशकों का छिड़काव

- एक बार सूंडियों के सुरंगों के अन्दर प्रवेश करने के पश्चात् केवल वही कीटनाशक प्रभावी होंगे जो पत्ती के अन्दर प्रवेश कर सकें।
- केन्द्रीय कीटनाशक बोर्ड पंजीकरण समिति ने अस्थायी रूप से क्नोरैन्ट्रानीलीप्रोल (0.3 मि.ली./लीटर), फलूवेन्डियामाइड 20% WG (0.3 मि.ली./लीटर), इन्डोक्साकार्व 14.5% (0.5 मि.ली./लीटर) और इमिडाक्लोप्रिड 17.8% SL (0.3 मि.ली./लीटर) की दो वर्षों के लिए संस्तुति की है।

कुछ अन्य उठाए जाने वाले कदम

- कीट ग्रसित क्षेत्र की पौध का प्रयोग न करें।
- कीट की उपस्थित के बारे में लगातार निगरानी रखें।
- जिन कीटनाशकों की संस्तुति न की गई हो उसका प्रयोग न करें एवं कीटनाशकों के अधिकाधिक प्रयोग से बचें।
- जिन क्षेत्रों में इस कीट के आक्रमण की सूचना है वहां पर उपयुक्त कीट प्रबंधन के तरीके को अपनाएं।
- कृषि विज्ञान केन्द्रों, कृषि विश्वविद्यालयों एवं कृषि अनुसंधान परिषद् के संस्थानों से इस कीट के प्रबंधन हेतु संपर्क करें।

हिन्दुस्तान को सचमुच एक राष्ट्र बनाना है तो चाहे कोई माने या न माने राष्ट्रभाषा तो हिन्दी ही बन सकती है क्योंकि जो स्थान हिन्दी को प्राप्त है वह किसी दूसरी भाषा को नहीं मिल सकता।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी

कांजीः तुरंत पीने योग्य प्रोबायोटिक पेय

प्रेरणा नाथ और एस.जे. काले

बागवानी फसल प्रसंस्करण प्रभाग

भा.कृ.अ.प.–केंद्रीय कटाई–उपरांत अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी संस्थान, अबोहर–152116

कांजी एक लोकप्रिय किण्वित पेय है जो काली गाजर से तैयार किया जाता है। यह बहुत ही बढ़िया मसालेदार पेय होता है जो स्वादिष्ट तथा पौष्टिक गुणों से भरपूर होता है। यह पेय अधिकतर गर्मियों के लिए लाभकारी होता है। काली गाजर के जूस को नमक व राई से किण्वित करके लम्बे समय तक खाद्य रसायन डालकर सुरक्षित रखा जा सकता है। काली गाजर की लोकप्रियता भारत में कम है, फिर वह चाहे सलाद के रूप में खाना हो, या सब्जी के तौर पर। परन्तु उत्तरी भारत में इसे एक किण्वित पेय बनाने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। काली गाजर का प्रयोग करके तुर्की में भी किण्वित पेय बनाया जाता है जिसे 'शलगम' के नाम से जाना जाता है। काली गाजर अनेक औषधीय गुणों से सम्पन्न है जैसे कि मूत्रवर्धक, गर्भाशय उत्तेजक आदि। काली गाजर का उपयोग मासिक प्रभावों को कम करने में भी पाया गया है। काली गाजर की जड़ों को अगर उबालकर काढ़ा बनाकर पिया जाए तो यह किडनी की पथरी को हटाने का काम करती है। अपच की समस्याओं के निवारण के लिए इसकी जड़ों का अर्क परंपरागत तौर से किया जाता है। कांजी के सेवन से ठण्डक एवं ताजगी का एहसास होता है। इसके अतिरिक्त कांजी में उच्च पोषक तत्व भी भरपूर मात्रा में उपस्थित होते हैं।

कांजी आमतौर पर सहज प्राकृतिक किण्वन पर निर्भर करता है। कांजी बहुत लोकप्रिय पेय है और इसे ठण्डक देने वाला और उच्च पोषण तत्व वाला माना जाता है। कांजी एक प्रोबायोटिक पेय है क्योंकि यह खपत के समय तक सभी पोषक तत्वों और व्यवहार्य माइक्रोबायोटा बरकरार रखता है। यह अतिसार, लैक्टोज अपच, कब्ज, कोलोनिक विकार और खाद्य एलर्जी के उपचार में प्रभावी है। इसमें लैक्टोबैसिलस, बिफिडोबैक्टीरियम, स्ट्रेप्टोकोकस और एन्टरोकोकस प्राकृतिक प्रोबायोटिक जीवाणु जातियां पाई गई हैं। प्रोबायोटिक्स स्वाभाविक रूप से भोजन में मौजूद होते हैं जो जठरांत्र संबंधी मार्ग के भीतर फायदेमंद माइक्रोफ्लोरा के विकास को उत्तेजित करते हैं जिससे पाचन में सहायता मिलती है। प्रोबायोटिक्स की सहायता से एंटी–म्यूटाजेनिक, एंटीकारकिनोजेनिक, सीरम कोलेस्ट्रॉल कम कर देता है और प्रतिरक्षा प्रणाली को उत्तेजित करते हैं। डायरिया, लैक्टोज असहिष्णुता, कब्ज, बृहदान्त्र संक्रमण और अन्य पेट संबंधी विकारों में प्रोबायोटिक पेय पदार्थ प्रभावी पाए गए हैं। कांजी में होमो–फरमेन्टेटिव और हेटेरो–फरमेन्टेटिव एल.ए.बी. (लेक्टेबेटिलस), सैकरोमायसिस और गैर–सैककोरॉयस सूक्ष्मजीव शामिल हैं। माइक्रोबायोटा के आधार पर, किण्वन के मुख्य उत्पाद लैक्टिक अम्ल, एसिटिक अम्ल, इथेनॉल (निचले स्तर में) और कार्बोनिल यौगिकों, वाष्पशील एसिड, उच्च अल्कोहल, एस्टर, टेरपेनोल, नॉरिसोपेरेनोइड, लैक्टोन और वाष्पशील फिनोल सहित वाष्पशील सुगंधित यौगिक हैं। यह उच्च एंथोसायनिन सामग्री, फिनालिक यौगिकों और अन्य व्यवहार्य माइक्रोफ्लो के साथ स्वास्थ्य महत्व वाला एक कार्यात्मक प्रोबायोटिक पेय है।

किण्वन विधि द्वारा काली गाजर का परिरक्षण

किण्वन विधि से सब्जियों को काफी समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इस विधि से न केवल सब्जियों को नष्ट होने से बचाया जा सकता है बल्कि इससे पौष्टिक तथा खनिज तत्व कम नष्ट होते हैं। किण्वन के दौरान सब्जियों में लैक्टिक अम्ल बनाने वाले जीवाणुओं द्वारा सब्जियों की प्राकृतिक शक्कर लैक्टिक अम्ल में परिवर्तित हो जाती है। यह लैक्टिक अम्ल सब्जियों को परिरक्षित करने में सहायक होता है। किण्वन के लिए सब्जियों का चुनाव करते समय यह ध्यान रखें कि सब्जियां ताजी हों तथा गली सड़ी व अधिक पकी हुई ना हों। सबसे पहले सब्जियों को साफ पानी से धो लें। काटने के लिए केवल स्टील के पात्र का ही उपयोग करें। उपरोक्त

सामग्री को अच्छी प्रकार से मिलाकर कांच के जार में गर्दन तक भर दें। जार में सब्जियां भरने से पहले जार को अच्छी तरह से धोकर सुखा लें व पोंछ लें। प्रतिदिन एक बार जार को अच्छी तरह हिलाते रहें ताकि सब्जियों का किण्वन ठीक प्रकार से हो सके और वे खराब न हों। किण्वित पदार्थों को छायादार स्थान पर रखें। जहां तक हो सके इन्हें कम तापमान वाले ठंडे स्थान पर रखें। किण्वित पदार्थ डेढ़ से दो महीने तक सामान्य तापमान पर बिना किसी रसायन के परिरक्षित किए जा सकते हैं। कम तापमान पर इनको 4–5 महीनों तक रख सकते है।

किण्वीकरण के लाभ

- कुछ सब्जियां जो मौसम में अधिक मात्रा में बाजार में आ जाती हैं तथा बिक्री के बाद बच जाती हैं। उन्हें इस विधि द्वारा कुछ समय के लिए खराब होने से बचाया जा सकता है।
- किण्वीकरण द्वारा सब्जियों का बेमौसम में भी आनंद लिया जा सकता है।
- किण्वित खाद्य पदार्थों को पकाने में समय व ईंधन भी कम लगता है। ये अपेक्षाकृत पौष्टिक व शीघ्र पचने वाले होते हैं। इनके उपयोग से कब्ज आदि रोगों में लाभ पहुंचता है।
- किण्वित सब्जियों में, ताजा सब्जियों की तुलना में अम्ल की मात्रा बढ़ जाती है जिससे सब्जियां अचार की तरह स्वादिष्ट लगती हैं तथा इनमें फफूंदी व अन्य जीवाणुओं का आक्रमण भी कम होता है। विदेशों में इस प्रकार किण्वित सब्जियों का प्रयोग किण्वित अचार की तरह किया जाता है तथा वहां ये बहुत लोकप्रिय हैं।
- हमारे देश में भी यदि किण्वीकरण को लघु उद्योग स्तर पर अपनाया जाए तो किसानों को मजबूरन कम कीमत पर बची हुई सब्जी व फल को बेचना नहीं पड़ेगा। इस प्रकार उनकी आय में बढ़ोतरी हो सकती है।

विधि

जूस में नमक, सरसों का पाउडर व संरक्षक मिलाएं। अच्छे से घुलने के बाद थोड़ा पानी मिलाकर हिला लें। मिश्रण प्राकृतिक लैक्टिक अम्ल से गुजरता है और लगभग 8 से 10 दिनों तक पूरी तरह से किण्वित हो जाता है।

तालिका 1: काली गाजर के रस से कांजी बनाने की विधि

सामग्री	**मात्रा**
काली गाजर का जूस	1 लीटर
नमक (गर्म किया हुआ)	30 ग्राम
सरसों का पाउडर या राई	10 ग्राम
लाल मिर्च	5 ग्राम
जीरा	इच्छानुसार
संरक्षक (सोडियम बेंजोएट)	0.2 ग्राम
पोटैशियम मेटाबाईसल्फाइट	0.1 ग्राम

काली गाजर
↓
धोकर, छीलकर काट लें, या कद्दूकस करें
↓
गाजर के बराबर पानी डालें और मिक्सर में जूस निकाल लें
↓
जूस को छान लें
↓
अब जूस को नमक व राई से किण्वित करें तथा बोतलों में भरें। इसमें खाद्य रसायन भी डालें
↓
किण्वित रस को कई महीनों तक सुरक्षित रख सकते हैं
↓
पीने के समय लाल मिर्च व जीरा डालें तथा ठंडा पानी मिलाएं

कांजी की संरचना, पैकिंग, भंडारण एवं निधानी आयु

किण्वित रस को साफ, सूखी कांच की बोतलों में पैक किया जाना चाहिए। कॉर्क करें या ठीक से उन्हें सील करके कमरे के तापमान पर भंडारण करें। किण्वित पेय पदार्थों को कमरे के तापमान पर 6 महीने तक अच्छा रंग, पोषक और स्वाद बनाए रख सकते हैं। पाश्च्युरीकरण या परिरक्षकों से निधानी आयु को 1–2 वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है, लेकिन संवेदी गुण समय के साथ बदल सकते हैं। कांजी का पीएच 3.2–3.5 होना चाहिए, जिससे यह अवांछनीय जीवाणुओं द्वारा खराब नहीं होती। सूक्ष्मजीव अम्लीय वातावरण में बढ़ सकते हैं और परत निर्माण, रंग परिवर्तन और खराब–स्वाद

आदि के कारण खराब हो सकते हैं। संबंधित सूक्ष्मजीव में से कुछ हैः *कैंडिडा क्रुसी, कैंडिडा पेलिकुलोसा* और *कैंडिडा लाइपोलीटिका* हैं।

काली गाजर किण्वन के लाभ

- खाद्य सुरक्षा में सुधार।
- आय तथा रोजगार का विकास।
- पोषण का विकास।
- औषधीय लाभ।
- नए बाजारों के लिए नए उत्पादों का निर्माण।
- विशिष्ट संवेदी गुण विकसित करना।
- आहार में विविधताएं।
- अन्य वाणिज्यिक रूप से उपलब्ध कृत्रिम पेय का स्वस्थ विकल्प।

प्रयोगशाला में तैयार की गई कांजी

तालिका 1 में वर्णित फार्मूले के अनुसार कांजी को काली गाजर के रस से तैयार किया गया। तैयार कांजी की संरचना तालिका 2 में दर्शायी गई है। रस 7 दिनों के भीतर कांजी में किण्वित हुआ और इसका विभिन्न भौतिक–रासायनिक मापदंडों के लिए विश्लेषण किया गया। इसमें कुल घुलनशील ठोस पदार्थ, कुल फिनॉल आदि शामिल हैं (तालिका 2)। कांजी को कुल फिनोलिक्स और एंथोसायनिन का एक बढ़िया स्रोत माना जाता है, इसलिए इसे एक कार्यात्मक पेय कहा जा सकता है।

तालिका 2: प्रयोगशाला में तैयार की गई कांजी की संरचना

विशेषताएं	कांजी
अनुमाप्य अम्लता, (प्रतिशत)	0.47 ± 0.282
पीएच मान	3.02 ± 0.101
कुल घुलनशील ठोस (डिग्री ब्रिक्स)	3.87 ± 0.451
कुल शर्करा (प्रतिशत)	1.32 ± 0.312
अपघटित शर्करा (प्रतिशत)	0.94 ± 0.267
कुल फिनॉल (मिलीग्राम / 100ग्रा.)	330.98 ± 2.56
कुल मोनोमेरिक एन्थोसायनिन (मिलीग्राम / ली.)	1135 ± 0.628

कांजी की विशेषताएं

- रंगीन होने के कारण इसमें उच्च उपभोक्ता अपील होती है।

कांजी तैयार करने के लिए काली गाजर से रस निकालने की प्रक्रिया

- काली गाजर के एंथोसायनिन से प्राकृतिक रंग।
- यह मौजूदा कृत्रिम शीतल पेयों के लिए एक विकल्प।
- इस उत्पाद में स्वाद का अद्वितीय मिश्रण।
- यह पेय एंथोसायनिन में समृद्ध एवं अधिक प्रतिऑक्सीकारक सक्रियतायुक्त है।

काली गाजर की विशेषताएं

- एंथोसायनिन का एक संभावित स्रोत (1750 मिलीग्राम प्रति किग्रा)।
- इसमें एसिलेटेड एंथोसायनिन, साइनाइडिन–3–सिनोपॉयल–एक्सलॉसिल–ग्लूकोसिल–गैलेक्टोसैड शामिल होता है।

- प्रकाश और गर्मी के प्रति अधिक स्थिरता।
- प्राकृतिक रंग–कम पीएच खाद्य पदार्थों में उत्कृष्ट लाल रंग प्रदान करता है।
- एक संभावित कार्यात्मक घटक।
- पानी में घुलनशील।
- कृत्रिम रंगों के लिए एक आदर्श विकल्प।

कांजी का उपयोग एवं महत्व

गर्मियों के लिए एक ताजा पेय है। यह प्रतिऑक्सीकारक और अन्य पोषक तत्वों को बढ़ावा देने के साथ शांत और सुखद अनुभव देता है। पेय कम वांछित स्वस्थ विकल्प है जो गर्मियों के शीतल पेय के लिए व्यावसायिक रूप से उपलब्ध कृत्रिम रसायनों और रंगों के साथ उपलब्ध होता है। किण्वित काली गाजर कार्यात्मक पेय में मिर्च पाउडर, नमक, चीनी और अन्य मसाले समन्वित हो सकते हैं। पीने से पहले इसमें 3 से 4 गुना ठंडा पानी मिलाएं।

ऐसे बचाएं अमरूद को

राम रोशन शर्मा[1], अमित गोस्वामी[2], ए. नागाराजा[2] एवं मनीष श्रीवास्तव[2]

[1]खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग

[2]फल एवं औद्यानिक प्रौद्योगिकी संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

भारत में अमरूद को 'गरीबों का सेब', 'गरीबों का फल' 'उष्ण जलवायु का सेब' आदि कई नामों से जाना जाता है। इसे हमारे देश में 'गरीबों का फल' शायद इसलिए कहते हैं क्योंकि यह अन्य फलों की अपेक्षा लगभग सारा साल कम दामों पर मिलता है। शायद इसका पोषक मान सेब से भी कई मायनों में अच्छा होने के लिए इसे 'उष्ण जलवायु का सेब' भी कहा जाता है।

हमारे देश में अमरूद की बागवानी उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में सफलतापर्वूक की जा रही है। अमरूद के फल विटामिन 'सी' व पैक्टिन के बहुत अच्छे स्रोत होते हैं। औसतन विटामिन 'सी' की मात्रा (260 मि.ग्राम/100 ग्राम) अन्य फलों से काफी अधिक है। विटामिन 'सी' की मात्रा के संदर्भ में केवल बार्बेडॉस चैरी (1500 मि.ग्राम/100 ग्राम) एवं आंवला (700 मि.ग्राम/100 ग्रम) ही अमरूद से बढ़िया स्रोत हैं। पके फलों में लगभग 78 से 87 प्रतिशत नमी, 12 से 26 प्रतिशत शुष्क तत्व व लगभग 2 से 7 प्रतिशत तक रेशा पाया जाता है। हालांकि फलों के संघटन व पोषक मान को कई कारक जैसे किस्म, मृदा की दशा, प्रबंधन व्यवस्था, पानी, कीट एवं रोग आदि प्रभावित करते हैं, परन्तु कुल घुलनशील ठोस की मात्रा 8.2 से 10.1 प्रतिशत व शर्करा की मात्रा 4.9 से 10.1 प्रतिशत तक हो सकती है। अमरूद में कई प्रकार की शर्कराएं होती हैं परन्तु सबसे अधिक फ्रक्टॉस (59 प्रतिशत) पाई जाती है। इसके अतिरिक्त ग्लूकोस व सुक्रास भी अच्छी मात्रा में पाई जाती हैं।

अमरूद के फलों में कई अम्ल पाए जाते हैं परन्तु सिट्रिक व मैलिक अम्ल काफी मात्रा में पाए जाते हैं। अमरूद में विशेष प्रकार की सुगन्ध फलों में व्याप्त हाइड्रोकार्बन, एल्कोहल एवं कार्बोनिल के कारण होती है। साधारणतः शीत ऋतु में तैयार अमरूद के फल वर्षा ऋतु में तैयार फसल की अपेक्षा अच्छी गुणवता के होते हैं।

अमरूद को अधिकतर लोग ताजे फल के रूप में खाना पसन्द करते हैं एवं यह एक ऐसा फल है जिसे विभिन्न अवस्थाओं में खाया जाता है जैसे कुछ लोग अधपके हरे फलों को खाना पसन्द करते हैं तो कुछ लोग पूर्ण रूप से पके फलों को खाते हैं। ताजा खाने के अतिरिक्त, अमरूद के कई बहुमूल्य उत्पाद जैसे जैली, कार्डियल आदि भी बनाए जाते हैं। पके फलों से आईस क्रीम, शर्बत, चीज व टॉफी आदि भी बनाई जा सकती हैं। कुछ विदेशों में अमरूद से शराब व शर्बत बनाने का अच्छा रिवाज है। इसी प्रकार अमरूद के

फलों से लदी अमरूद की टहनी

गुलाबी अमरूद के कटे फल

अमरूद की जैली

अमरूद का जूस

बीजों से कहीं–कहीं पर तेल भी निकाला जाता है। हमारे देश में अमरूद की उत्पादकता (15 टन/हेक्टेयर) अन्य देशों से काफी कम है। कम उत्पादकता के वैसे तो कई कारण है, परंतु अमरूद को लगने वाले कीट एवं रोग इसमें मुख्य भूमिका निभाते हैं। इस लेख में अमरूद को क्षति पहुंचाने वाले प्रमुख कीटों एवं रोगों के बारे में जानकारी दी गई है।

पादप सुरक्षा

प्रमुख कीट एवं उनका नियंत्रण

अमरूद को कई कीट हानि पहुंचाते हैं। कुछ महत्वपूर्ण कीटों का विवरण एवं प्रबंधन की जानकारी निम्नलिखित है

फल मक्खी

यह अमरूद का सबसे हानिकारक कीट है जो साधारणतः बरसात वाली फसल को अधिकाधिक प्रभावित करता है। वैसे तो फल मक्खी की कई जातियां अमरूद को क्षति पहुंचाती है परन्तु *डेक्स डॉर्सेलिस* सबसे हानिकारक है। मादा मक्खी मानसून में फूलों पर अंडे देती है। अंडों से निकलकर बच्चे, फलों में घुसकर गूदे को खाकर बढ़ते रहते हैं। मक्खी–ग्रसित फलों का पता नहीं चलता परन्तु पूर्ण पके फलों को जब काटा जाता है तो उनमें से रेंगते हुए बच्चे दिखाई पड़ते हैं। प्रभावित फल पेड़ों पर नहीं टिक पाते और झड़ जाते हैं। फल मक्खी के प्रभाव से बचने हेतु निम्न उपाय प्रभावी पाए गए हैं:

1. जून–जुलाई में बाग की अच्छी तरह से जुताई करें ताकि मक्खियों के प्यूपे मर जाएं या उन्हें पक्षी चुनकर खा जाएं।
2. फलों की थैलाबंदी करें।
3. प्लास्टिक के 4–5 बर्तनों में मिथाईल युक्नॉल डालकर बाग में लटकाएं।
4. प्रभावित फलों को नष्ट कर दें।
5. बरसात की फसल की अपेक्षा जाड़े की फसल लें।

मीली बग

फल मक्खी के बाद अमरूद को मीली बग सबसे अधिक क्षति पहुंचाती है। अमरूद को आम की मीली बग (*ड्रोसिचा मैंगीफेरी*) व नींबू वर्गीय फलों की मीली बग (*पलेनोकोक्स सिट्री*) अधिक क्षति पहुंचाती हैं। मीली बग के बच्चे व प्रौढ़ नाजुक पत्तियों, टहनियों, फूलों व फलों से रस चूसते हैं। प्रभावित भाग सूख जाते हैं जो फलों की उपज एवं गुणवता को प्रभावित करते हैं। इस कीट की रोकथाम हेतु निम्नलिखित उपाय लाभकारी रहते हैं:

1. पौधों के तनों पर 25–30 सेमी. प्लास्टिक सीट (400 गेज मोटी) की पट्टी बांधें। पट्टी और तने के बीच की जगह को भरने हेतु ग्रीस या चिकनी मिट्टी अवश्य लगाएं।
2. क्लोरोपाइरीफॉस (0.08 प्रतिशत) या रोगोर (0.08 प्रतिशत) या कार्बेरिल (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करें।
3. फलों की थैलाबंदी करें।

अमरूद पर फल–मक्खी

फल–मक्खी द्वारा क्षतिग्रस्त अमरूद

अमरूद की प्रौढ़ फल मक्खी

मीली बग से ग्रसित अमरूद

तना वेधक

इस कीट का प्रकोप उन बागों में अधिक होता है जिनकी देखरेख ठीक से नहीं की जाती है। इस कीट की सूंडी मुलायम प्ररोहों के उपरी भाग में छेद कर मुख्य तने में घुस जाती है। प्रभावित तना खोखला हो जाता है और काले रंग के कीट–अवशेषों से भर जाता है। इस कीट की रोकथाम के लिए

अमरूद में मीली बग एवं फल–मक्खी से बचने हेतु फलों की थैलाबंदी

कीटों द्वारा बनाए गए छिद्रों में एक नुकीला तार डालकर घुमाना चाहिए। ऐसा करने से सूंडी मर जाती है। नुवाक्रॉन अथवा मैलाथियॉन (0.05 प्रतिशत) के घोल को 5 मि.ली. प्रति छिद्र के हिसाब से डाल देना चाहिए। सल्फास की गोलियों या रुई को पेट्रोल में भिगोकर छिद्रों में रखकर बाहर से गीली मिट्टी से बंद करने से भी इस कीट को नियंत्रित किया जा सकता है।

छाल भक्षी इल्ली

यह कीट उत्तर प्रदेश में बहुत सक्रिय है। इसका वैज्ञानिक नाम *इन्दरबेला ट्रेट्राआनिस* है जो कि अमरूद के अतिरिक्त आम व नींबू वर्गीय फलों को भी आक्रमित करता है। यह कीट अमरूद के बागों में ऐसी जगह पर पाया जाता है जहां बाग की उचित देखभाल नहीं होती है। इस कीट की इल्ली तने की छाल खाकर तने में छेद बना देती है। छाल खाने के बाद इल्ली एक प्रकार का काला अवशेष छोड़ती है जो कि प्रभावित हिस्सों पर चिपका रहता है। इस कीट की रोकथाम के लिए अवशेषों को साफ कर देना चाहिए तथा तने में बने हुए छिद्रों में क्लोरोफार्म में रुई डुबोकर भरने के बाद छेदों को गीली मिट्टी से बन्द कर दें।

स्केल कीट

यह अमरूद का बहुत ही हानिकारक कीट है जो पत्तियों और मुलायम प्ररोहों का रस चूसता है। यह कीट एक प्रकार का मीठा रस भी छोड़ता है जिस पर बाद में शैवाल उग जाती है। इससे पत्तियों की प्रकाश संश्लेषण की क्रिया धीमी पड़ जाती है। इस कीट का प्रकोप गर्मियों में अधिक होता है। इस कीट की रोकथाम के लिए घनी व प्रभावित डालियों तथा प्ररोहों को छांट दें तथा नई पत्तियां निकलने के समय रोगोर (0.05 प्रतिशत) या मेटास्टिॉक्स (0.05 प्रतिशत) का छिड़काव करें।

प्रमुख रोग एवं उनका नियंत्रण

अमरूद की फसल को कई रोग क्षति पहुंचाते हैं, परन्तु प्रमुख रोगों के बारे में जानकारी नीचे दी जा रही है।

म्लानि रोग

यह अमरूद का सबसे विनाशकारी रोग है। यह रोग भारत के प्रत्येक क्षेत्र, जहां–जहां अमरूद की बागवानी हो रही है, में पाया जाता है। इस रोग के असली कारणों का अभी पता नहीं चल पाया है। हालांकि वैज्ञानिक मानते

म्लानि रोग से ग्रसित अमरूद का पेड़

हैं कि *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरिम, फ्यूजेरियम सोलानी, मैक्रोफोमिना फैसियोली, राइजोक्टीनिया वाटाटीकोला* एवं *सिफालोस्पोरियम* जाति आदि अनेकों कवक इस रोग से अवश्य जुड़े हैं। इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम बरसात में दिखाई देते हैं। रोगी पेड़ों की पत्तियां भूरे रंग की हो जाती हैं और पेड़ मुरझा जाता है। पेड़ों की छाल की सतह बदरंग हो जाती है। प्रभावित पेड़ों की डालियां एक–एक करके सूखने लगती हैं। यह रोग उन क्षेत्रों में अधिक तीव्र हो जाता है जहां की मृदा का पी.एच. मान 7.5 से अधिक होता है एवं तापमान 40^0 सेल्सियस से अधिक रहता है। भूमि की नमी भी रोग को फैलाने में सहायक होती है। 60–80 प्रतिशत मृदा की आर्द्रता पर रोग का प्रकोप बढ़ जाता है। यह रोग विश्व प्रसिद्ध किस्म इलाहाबाद सफेदा को अधिकाधिक प्रभावित करता है। इस रोग की रोकथाम हेतु निम्नलिखित उपाय कारगार सिद्ध हुए हैं:

1. बाग लगाने से पहले खेतों को फॉर्मेल्डिहाइड (2 प्रतिशत) से उपचारित करें या उसमें ब्रॉसीकोल डालें।
2. सरदार, बनारसी आदि किस्मों के बाग लगाएं।
3. रोग के शुरुआती लक्षण दिखने पर बेविस्टिन (1 प्रतिशत) के 15 दिन के अंतराल पर दो–तीन छिड़काव करें।
4. बागों में जल निकास का उचित प्रबंध करें।
5. यदि संभव हो तो पूसा सृजन मूलवृंत का प्रयोग करें।

एन्थ्राकनोज (श्यामव्रण)

यह रोग *कोलेटाट्रइकम सिडिआई* नामक कवक द्वारा होता है। यह रोग उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र में काफी भयंकर है तथा वहां काफी क्षति पहुंचाता है। रोग का प्रकोप मुख्यतः फलों पर होता है, परन्तु आक्रमण शाखाओं, पुष्पकलिकाओं और फूलों पर भी देखा गया है। रोगी पेड़ उपर से सूखना प्रारम्भ कर देते हैं। इसके लक्षण बरसाती फलों पर अधिक दिखाई देते हैं। सर्वप्रथम फलों पर खुरदरे धब्बे बन जाते हैं और इनका रंग भूरा हो जाता है। प्रभावित फलों का बाजार भाव गिर जाता है और भंडारित फलों में सड़न पैदा हो जाती है।

इस रोग की रोकथाम के लिए बाग को साफ रखना चाहिए। प्रभावित फलों व अन्य भागों को काटकर जला देना चाहिए। 2–3 ग्राम फाइटोलॉन (50 प्रतिशत) नामक कवकनाशी को एक लीटर पानी के हिसाब से घोलकर 10

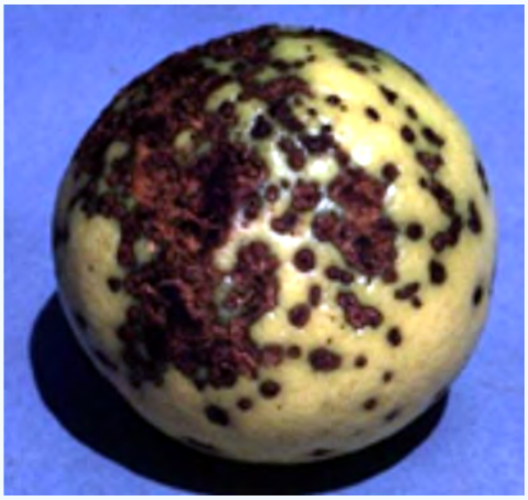

एन्थ्राकनोज रोग से ग्रसित अमरूद

दिन के अंतराल पर 4–5 बार छिड़कना चाहिए। फलों की थैलाबंदी करना भी लाभकारी होती है। भंडारण के लिए स्वस्थ फलों को चुनना चाहिए। 'एपिल कलर' किस्म इस रोग के प्रति कुछ सहिष्णु पाई गई है।

फल सड़न

यह रोग *फाईटोफ्थोरा पैरासीटिका* नामक कवक द्वारा होता है और उत्तरी भारत के पंजाब व हरियाणा राज्यों में यह

अमरूद का बहुत ही भयंकर रोग है। शुरू में कवक की सफेद तह फल के डंठल पर जमना शुरू होती है जो 3–4 दिनों में पूरे फल को ढ़क लेती है। प्रभावित फलों को बेचना बहुत कठिन हो जाता है। यह रोग अधपके फलों को ग्रसित करता है, जिससे वे गिर जाते हैं। आर्द्र मौसम, रोग के कवक को फैलाने में बहुत सहायता करता है। रिडोमिल (0.2 प्रतिशत) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2 प्रतिशत) के छिड़काव से इस रोग का शतप्रतिशत नियंत्रण संभव है।

स्कैब

यह रोग *पेस्टालोशिया सिडिआई* नामक कवक द्वारा होता है। इस रोग का प्रकोप हिमालय के तराई क्षेत्रों में अधिक होता है। सर्वप्रथम इस रोग के लक्षण पत्तियों पर दिखाई देते हैं, जिन पर विभिन्न आकार के भूरे धब्बे बनते हैं। बाद में धब्बों के बीच का हिस्सा धूसर रंग का हो जाता है। प्रभावित फलों पर गहरे रंग के धब्बे बनते हैं तथा फल विकृत हो जाते हैं जिससे उनका बाजार में भाव गिर जाता है। इस रोग की रोकथाम के लिए बाग को स्वच्छ रखना बहुत जरूरी है। प्रभावित भागों को इकट्ठा करके जला देना चाहिए तथा पेड़ों पर ब्लाइटॉक्स (0.2 प्रतिशत) के 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

फल चित्ती

फल चित्ती रोग *सेफेल्यूरोज विरिसेन्स* नामक शैवाल द्वारा होता है। यह रोग आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं है क्योंकि इससे क्षति बहुत कम होती है। रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों पर बादामी से गुलाबी लाल धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। रोग के बढ़ने के साथ धब्बों का आकार व संख्या भी बढ़ जाती है। धब्बों का रंग बाद में भूरा हो जाता है। इस रोग की रोकथाम के लिए फाइटोलॉन (0.3 प्रतिशत) के 10 दिन के अंतराल पर 3–4 छिड़काव करने लाभकारी रहते हैं।

पक्षियों द्वारा क्षति

अमरूद के फलों को कई पक्षी जैसे तोता, मैना, चिड़िया एवं मोर आदि बहुत क्षति पहुंचाते हैं। पक्षियों द्वारा क्षति से बचने हेतु अपनाए जाने वाले उपाए अधिक दिनों तक प्रभावी नहीं रह पाते हैं क्योंकि पक्षी बहुत चालाक होते हैं एवं उन्हें भगाने हेतु अपनाई गई विधी से एकदम अवगत हो जाते हैं। लेकिन फिर भी ढोल बजाकर एवं चमकीले रीवन लगाकर उन्हें भगाया जा सकता है। आजकल विश्व के विभिन्न देशों में फलों की थैलाबंदी तकनीक को भी पक्षियों द्वारा क्षति से बचने हेतु प्रयुक्त किया जा रहा है। हमें आशा की नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि उपर्युक्त विधियां अपनाकर, किसान अमरूद को जैविक कारकों से होने वाली क्षति को बचा पाने में सफल होंगे।

पक्षियों द्वारा क्षतिग्रस्त अमरूद

आंवले के प्रसंस्करण द्वारा ग्रामीण व्यवसाय एवं रोजगार की सम्भावनाएं

शालिनी गौड़ रुद्रा, अल्का जोशी, ज्ञानेन्द्र सिंह एवं विद्या राम सागर

खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

आंवला एक अल्पजनिक पर्णपाती वृक्ष है जिसे भारतीय उपमहाद्वीप में सूखे व उपेक्षित क्षेत्रों में आसानी से उगाया जा सकता है। आंवले की कई किस्में भारत में उगाई जाती है जैसे कि बनारसी, चक्कैया, हाथी झूल, बंसीलाल, गुलाबी, कृष्णा, कंचन इत्यादि। आंवले का फल नवम्बर–दिसम्बर में तुड़ाई के लिए तैयार हो जाता है परन्तु फरवरी मास तक भी इन्हें बिना झड़े पेड़ों पर ही छोड़ा जा सकता है। एक वृक्ष साल में औसतन 250–300 किलो फल दे सकता है। बदलते मौसमी परिवेश में आंवले का क्षेत्रफल धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा है एवं खारी मिट्टी से प्रभावित क्षेत्रों में यह फसल ज्यादा कारगर है।

आंवला चिरकाल से अपने स्वास्थवर्धक गुणों के कारण जाना जाता है। आंवले के पौष्टिक गुणों पर दृष्टि डालें तो यह अन्य सभी फलों से कई मापदंडों में उत्तम प्रतीत होता है। इसके प्रति 100 ग्राम में कार्बोहाइड्रेटस, रेशा, प्रोटीन की मात्रा क्रमशः 10.18 ग्राम, 4.3 ग्राम तथा 0.88 ग्राम है। यह विटामिन सी (500 से 1000 मिली ग्राम/100 ग्राम) एवं लौह तत्व की उपलब्धता बढ़ाने के लिए बहुत अच्छा स्रोत है। गौरतलब है कि आंवले में विटामिन सी की मात्रा संतरे के रस की तुलना में 20 गुना है। इसके सेवन से लौह तत्वों की शरीर में उपलब्धता बढ़ जाती है। कैल्सियम भी इस फल में प्रचुर मात्रा में है। आंवलों में प्राकृतिक रूप से कई प्रति ऑक्सीकारक भी पाए जाते हैं जिस वजह से सुखाने, पकाने के बाद भी इसके गुण काफी हद तक बने रहते हैं। इन प्रकृष्ठ गुणों के कारण आंवला च्यवनप्रकाश, त्रिफला एवं अन्य आयुर्वेदिक औषधियों में भरपूर प्रयोग किया जाता है।

ताजे फलों का भंडारण : आंवले के फल की सामान्य परिवेश में भंडारण आयु केवल 3–4 दिन है। इस फल की भंडारण आयु कम होने की वजह से बाजार में इसकी तुरन्त बिक्री करना जरूरी है परन्तु मौसमी भरमार/अधिक होने की वजह से किसानों को इसकी काफी कम कीमत मिलती है। इन फलों को 10^0 से 12^0 सेल्सियस तापमान पर 8–10 दिन तक ज्यादा नमी (85–90%) वाले शीतकक्ष में रखा जा सकता है। शोध के अनुसार आंवलों को कैल्सियम नाइट्रेट (1%), जिब्रेलिक अम्ल (50 मिलीग्राम प्रति किलो) एवं बोरेक्स (4%) के घोल से उपचारित करने से फलों को सूखने और सड़ने पर काफी हद तक नियंत्रण पाया जा सकता है।

आंवले के फल

मूल्यवर्धन की आवश्यकता : इतने स्वास्थ्यवर्धक गुण होने के बावजूद आंवले में अत्यधिक रेशा, खरास एवं तिक्त स्वाद की वजह से कच्चा आंवला खाने में पसंद नहीं किया जाता। यही कारण है कि आंवलों को यदि तुड़ाई के पश्चात प्रसंस्कृत कर दिया जाए तो आंवले के मूल्यवर्धन से अधिक लाभ तो मिलेगा ही साथ ही साथ इन उत्पादों की भंडारण क्षमता अधिक होने के कारण इन्हें लम्बे समय तक प्रयोग में लाया जा सकता है एवं आंवले के गुणों का लाभ अधिक मुनाफे के साथ स्वादिष्ट व्यंजनों के रूप में वर्ष भर लिया जा

सकता है। आंवले के प्रसंस्करण से संबंधित जानकारी जैसे आंवला उत्पाद बनाने की विधि, आवश्यक मशीनरी, लागत एवं आय का आंकलन आदि इस लेख में प्रस्तुत है।

आंवले से मूल्यवर्धित उत्पाद

आंवले का रस, आंवले के पेय, आंवले की चटनी, जैम, आंवले का अचार, आंवले की सॉस, आंवले की सुपारी, आंवले का चूर्ण या लच्छे, आंवले का मुरब्बा, आंवला कैंडी, आंवला पापड़ (फ्रूट बार) एवं आंवले का साइडर आदि। मूल्यवर्धित उत्पाद बनाए जा सकते हैं। सर्वप्रथम आंवले से निम्न विधि द्वारा गूदा तैयार करते हैं। सबसे पहले लाए गए आंवलों की छंटाई करके साफ पानी से धो लें तथा पत्तियों व डंठल आदि अलग करके फलों को उबलने के लिए स्टील के भगोने में रखें तथा 3–5 मिनट तक उबाल आने दें। इसके पश्चात फलों को पानी से निकाल कर अलग करें व थोड़ा ठंडा होने पर हाथ से गुठलियों को अलग करें या पल्पर मशीन में डालकर गुठली अलग कर गूदा बनाएं। यदि गुठलियां हाथ से निकाली गई हैं तो फलों की फांकों को मिक्सी में डालकर गूदा बना लें। गूदे को संरक्षित करने के लिए इसे 90^0 सेल्सियस तक गर्म करें तथा गर्म होने के पश्चात ही गर्म गूदे में 0.5–0.7 ग्राम/किलो के हिसाब से पोटैशियम मेटाबाईसल्फाइट दो चम्मच साफ पानी में घोलकर मिलाएं। इसके बाद साफ, उबली हुई बोतलों में गर्म गूदा डालकर बोतल सील करें। इस गूदे का उपयोग आंवले का पेय, चटनी, जेम, सॉस एवं पापड़ आदि बनाने में करें।

आंवले का पेय : आंवला पेय तैयार करने के लिए 15 प्रतिशत आंवले का गूदा या रस + 15 प्रतिशत चीनी तथा 0.3 प्रतिशत सिट्रिक अम्ल को मिलाकर घोल तैयार कर लेते हैं तथा 90^0 सेल्सियस पर इस घोल को गर्म करके साफ बोतलों में पैक करते हैं या पैकिंग मशीन द्वारा पॉलीथीन की थैली में पैकिंग कर देते हैं। तत्पश्चात् ठंडा होने पर लेबल लगाकर ठंडी जगह भंडारण कर बाजार में बिक्री हेतु भेजते हैं। आंवले के रस में विभिन्न तरह के अन्य रस जैसे अदरक, अंगूर, अनन्नास, आम, गाजर व टमाटर के साथ इस गूदे का सम्मिश्रण कर कई तरह के पेय तैयार किए जा सकते हैं।

आंवले का पेय

आंवले की चटनी : आंवले के गूदे को उपर्युक्त विधि से तैयार करें। प्रति किलो फल के गूदे के लिए 1.0 किलो चीनी, 40 ग्राम नमक एवं अदरक, प्याज तथा लहसुन तीनों लगभग 50 ग्राम बराबर मात्रा में व लाल मिर्च, काली मिर्च, दाल चीनी, बड़ी इलायची, सौंफ एवं जीरा 10–10 ग्राम (कुल 50 ग्राम) सुझावित हैं। सभी मसालों को बारीक कपड़े की पोटली में बांधकर मिश्रण के साथ धीमी आंच पर गाढ़ा होने तक पकाएं। अन्त में मसाले की पोटली को निचोड़कर रस निकालें व चार मि.ली. सिरका एवं 500 मि. ग्राम सोडियम बैंजोएट मिलाकर रखें। फिर साफ उबले हुए गर्म जार में गर्म–गर्म चटनी भरें तथा ठंडा होने पर सील कर चटनी तैयार की जाती है।

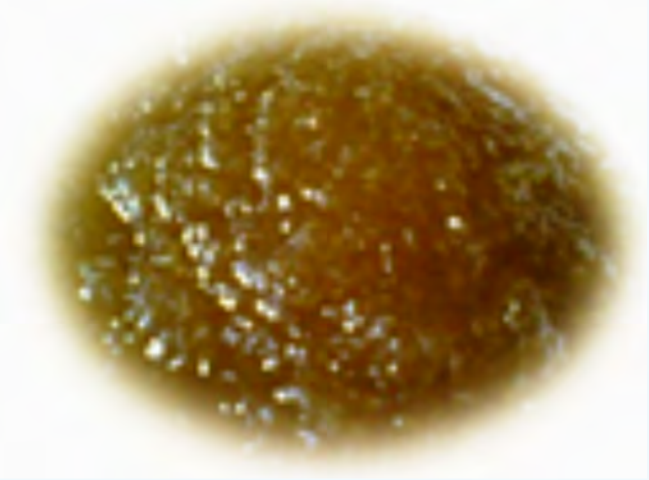

आंवले की चटनी

आंवले का सॉस : एक किलो आंवले के गूदे में 75 ग्राम चीनी, 10 ग्राम नमक डालकर धीमी आंच पर रखें। 50 ग्राम प्याज, 50 ग्राम लहसुन, मिर्च पाउडर, दाल चीनी, छोटी इलायची, जीरा, सौंफ (सभी 10–10 ग्राम) को बारीक कपड़े में पोटली बांधकर मिश्रण के साथ में पकाएं। गाढ़ा होने पर पोटली निचोड़कर बाहर निकाल दें तथा 10 मि.ली. सिरका एवं 0.2 ग्राम पोटैशियम मेटाबाइसल्फाइट मिलाएं। मिश्रण को साफ व उबली हुई बोतलों में भरकर सील करें तथा ठंडी होने पर बोतलों को भण्डारित करें। आंवले के गूदे को टमाटर के गूदे के साथ मिलाकर भी सॉस बनाया जा सकता है।

आंवले की सॉस

आंवले का पापड़ : आंवले व पपीते के गूदे को समान मात्रा में मिलाकर आम पापड़ जैसा ही अति रोचक उत्पाद बनाया जा सकता है। इसके लिए 1 किलो समिश्रित गूदे में 1 किलो चीनी मिलाकर 80–82^{0} सेल्सियस पर धीमी आंच

आंवले का पापड़

पर पकाया जाता है। मिश्रण के गाढ़ा होने के लिए थाली में बिछा दिया जाता है एवं कैबिनेट ड्रायर में 60^{0} सेल्सियस पर 7 घंटे तक सुखा लिया जाता है। ठंडा होने के पश्चात् इसे मन पसन्द आकार में काटकर पैक कर दिया जाता है।

आंवले का अचार : आंवले को धोने के पश्चात् उबालकर उनकी गुठली अलग कर ली जाती है। इसके बाद आंवले की फाकों को एक दिन धूप में सुखाया जाता है। 1 किलो आंवले की फांकों के लिए 80 ग्राम नमक, 10 ग्राम हल्दी, 10 ग्राम लाल मिर्च, 30 ग्राम मेथी, 5 लौंग एवं 350 मि.ली. तेल चाहिए। सूखे मसालों को तेल में तलकर उसमें फांकें डालकर 5 मिनट तक धीमी आंच पर पकाएं। अंत में नमक मिलाकर साफ बर्तन में पलटें व ठंडा होने पर सील करें। ध्यान रहे कि इस अचार की भंडारण आयु केवल 15 दिन ही होती है।

आंवले का अचार

आंवले की सुपारी : परिपक्व, ठोस एवं कम रेशे वाले आंवलों को ही सुपारी के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। सबसे पहले कच्चे आंवले से बीजों को अलग कर लिया जाता है। आंवले की 100 ग्राम' फांकों को छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर मसालों के मिश्रण (नींबू का रस 15 ग्राम, नमक 5 ग्राम; अथवा काली मिर्च एवं अदरक 6 ग्राम, नींबू का रस 15 ग्राम, नमक 5 ग्राम) के साथ मिलाकर 48 घंटे तक छोड़ दिया जाता है। मसालों के रमने के बाद आंवले के टुकड़ों को 60–80^{0} सेल्सियस पर चार से पांच घंटे कैबिनेट ड्रायर में सुखाया जाता है। तत्पश्चात् तैयार सुपारी को पैक कर दिया जाता है।

आंवले की सुपारी

आंवले के निर्जलीकृत लच्छे : आंवलों को छांट कर धो लें। थ्रेडर मशीन या हाथ से घिस कर आंवले के लच्छे बनाएं। इन लच्छों को तीन मिनट तक खौलते पानी में रखें। ठंडा करने के लिए पोटैशियम मेटाबाईसल्फाइट (10 मिलीग्राम/लीटर पानी) युक्त ठंडे पानी में लच्छों को तीन मिनट तक रखें। निर्जलीकरण करने के लिए लच्छों को समानान्तर ट्रे पर बिछा कर 55–60^0 सेल्सियस पर सुखाएं। मसालायुक्त लच्छों (1 किलो) को पोटैशियम मेटाबाईसल्फाइट युक्त ठंडे पानी से निकालने के बाद 100 ग्राम अदरक के रस व 30 ग्राम नमक मिलाकर 12 घंटे के लिए छोड़ दें। स्वाद रमने के बाद लच्छों को केबिनेट ड्रायर में सुखाएं व पैक करें।

आंवले का चूर्ण : आंवलों को उबलते पानी में 3–5 मिनट रखें। ठंडा होने पर इन्हें श्रैडर में डालें। आंवले के टुकड़ों को कैबिनेट ड्रायर में सुखाएं (55–60^0 सेल्सियस पर 10 से 12 घंटे तक) व ठंडा होने पर पीसकर पैक कर आंवले का चूर्ण बनाया जा सकता है।

आंवले का चूर्ण

आंवले का मुरब्बा : आंवलों को धोकर स्टील के कांटे से गोद लें। आंवलों को 2–3 प्रतिशत चूने के घोल में तीन दिन तक रखें। इससे आंवलों का कसैलापन दूर हो जायेगा। फिर आंवलों को साफ पानी से अच्छी तरह धो लें। एक साफ स्टील के पतीले में एक तह आंवले की बिछाएं व एक तह सूखी चीनी की परत बिछाएं। ऐसे ही सारे आंवलों को चीनी के बीच परतों में बिछा दें। दो दिन बाद चीनी का पतला घोल बन जाएगा। इसमें और चीनी मिलाकर एक तार चाशनी बना लें। अगले दिन फिर इस चाशनी में चीनी मिलाकर गाढ़ी करें ताकि वह एक तार की चाशनी बन जाए। इस प्रकार तीन–चार दिन तक यह प्रक्रिया दोहराएं। अन्त में सारी चाशनी अलग कर आंच पर रख दें एवं उबालें। उबलने के बाद चाशनी में पोटैशियम मेटाबाईसल्फाइट (0.3 ग्राम/किलो) मिलाएं। फिर आंवलों को इस चाशनी में भिगो दें। तत्पश्चात् कांच के बर्तन में भरकर रखें। दो–तीन दिन बाद मुरब्बा पैकिंग के लिए तैयार हो जाता है।

आंवले का मुरब्बा

आंवला कैंडी : आंवला कैंडी परासरण द्वारा निर्जलीकरण विधि से तैयार की जाती है। यह आंवले के मुरब्बे का सूखा व सहज प्रतिरूप है। बाजार में मीठी, चटपटी व शहद वाली कैंडी उपलब्ध हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा प्राकृतिक लाल रंग की आंवला कैंडी भी विकसित की गई है। आंवला कैंडी बनाने के लिए सर्वप्रथम आंवलों को पानी में

आंवले की कैंडी

उबलने के लिए रख देते हैं। लगभग 5 मिनट तक उबलने के पश्चात् आंवले काफी नर्म हो जाते हैं। पानी को निथार कर आंवलों की फांकों तथा गुठलियों को अलग कर लिया जाता है। फिर फांकों को चीनी की चाशनी में डाल दिया जाता है। अगले दिन चाशनी में चीनी डालकर उसको गाढ़ा कर दिया जाता है। तीसरे दिन फिर चाशनी को दो तार तक गाढ़ा किया जाता है। इसके बाद चौथे दिन आंवले की फांकों को चाशनी से निकाल कर अलग कर लेते हैं तथा गीले कपड़े से पोंछ कर कैबिनेट ड्रायर में डालकर सुखा लेते हैं। बाहरी परत की चिपचिपाहट खत्म होने पर इसे नर्म अवस्था में निकालकर ठंडा कर पैक कर देते हैं।

आंवले का साइडर : केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ के वैज्ञानिकों द्वारा आंवले से साइडर बनाने की प्रक्रिया विकसित की है। आंवला साइडर को बनाने के लिए आंवले के रस को *सेकरोमाइसीज एलिप्सोडियस सेरेविसी* उपजाति *मोंट्राचैट* खमीर के साथ किण्वीकरण कर साइडर बनाया जाता है। जिसमें मिठास 10 डिग्री ब्रिक्स है तथा इसमें 4 प्रतिशत मदिरा एवं 0.4 प्रतिशत पॉलीफिनोल्स व 66 मि. ग्राम/100 मि.ली. विटामिन सी होता है। साइडर को एक साल से अधिक समय तक भण्डारित कर सकते हैं जिसकी स्वीकार्यता भंडारण के साथ बढ़ती जाती है।

आंवला के प्रसंस्करण के लिए आवश्यक मशीनों की अनुमानित कीमत

1. भार तुला : 3 हजार
2. साफ पानी हेतु (एक्वागार्ड अथवा आर.ओ.) संयंत्र : 10 हजार
3. स्टैनलेस स्टील बर्तन : 10 हजार
4. चूल्हा और गैस सिलेण्डर : 5 हजार
5. प्लास्टिक टब, ड्रम : 1 हजार
6. हाइड्रोलिक प्रेस : 1 लाख
7. मसाला पिसाई मशीन : 15–20 हजार
8. आंवला गोदने की मशीन : 10 हजार
9. पल्पर : 60 हजार
10. श्रेडर या फ्रूट मिल : 50 हजार
11. बीज निकालने की मशीन : 5 हजार
12. केबिनेट ड्रायर : 1 लाख
13. अन्य बड़ी मेज, भंडारण हेतु अलमारी इत्यादि : 15 हजार

आय का आकलन

आंवले के प्रसंस्करण से संबंधित व्यवसायीकरण इकाइयां देश के विभिन्न हिस्सों में मौजूद हैं। कृषि विज्ञान केन्द्र, मोरेना, मध्य प्रदेश में किए गए एक शोध के अनुसार कृषि महिला कर्मियों द्वारा विभिन्न आंवलों के उत्पादों को 80 से 260 रुपये प्रति किलो के हिसाब से बेचने पर 6500 रुपये प्रति महीना आय दर्ज हुई जो कि एक सफल एवं सराहनीय प्रयास है।

अधिकतर खंडित आंवला कैंडी के प्रसंस्करण का लाभ लागत अनुपात 1.96:1.0 पाया गया है जिससे लागत मूल्य की भरपाई लगभग तीन वर्षों में हो जाती है। वर्ष 2008–2009 में महाराष्ट्र के मराठावाड़ा जिले में आंवले की दस प्रसंस्करण इकाइयों के आकलन के दौरान यह पाया गया कि सालाना केवल 75 दिनों तक काम करने पर 60 कुन्तल आंवले का प्रसंस्करण कर इन इकाइयों ने 2 लाख 26 हजार रुपये तक का मुनाफा अर्जित किया गया।

निष्कर्ष

आंवले के प्रसंस्करण की विधियां अत्यन्त सरल तथा सहज होने के कारण इसका प्रसंस्करण घरेलू स्तर पर, लघु एवं बड़े पैमाने पर बेरोज़गार युवाओं, महिलाओं व अप्रशिक्षित कर्मियों द्वारा भी बड़ी आसानी से किया जा सकता है। विशेषतः महिलाओं में यह उद्यमशीलता का विकास, उत्साहवर्धन तथा गांवों में रोजगार के अवसर प्रदान करने की सामर्थ्य रखता है।

आंवले के उत्पादन में सस्य एवं सिंचाई की आवश्यकता भी कम है एवं यह बंजर/ऊसर भूमि में आसानी से उगाया जा सकता है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण राजस्थान प्रदेश है जहां की कुछ सूखी एवं कृषि अयोग्य भूमि में आंवला बहुतायत में उगाया जाता है। इस नजरिये से भी आंवले का प्रसंस्करण एक नए आयाम खोलता है क्योंकि सस्ती तकनीकों तथा सस्ते कच्चे माल के रूप में यह उन लोगों को भी उपलब्ध है जो महंगे उत्पादों को या तो खरीद नहीं सकते या जटिल वैज्ञानिक विधियों को अपना नहीं सकते।

प्रसंस्करण से संबंधित लाभ–लागत अनुपात के नतीजे भी अत्यधिक उत्साहित करने वाले है जो आंवले के प्रसंस्करण को प्रारम्भ करने के इच्छुक उद्यमियों के लिए एक प्रबल सकारात्मक संकेत हैं। शहरी जीवन–शैली के कारण उत्पन्न कई रोगों जैसे मधुमेह, उच्च रक्तचाप, पेट की खराबी, अस्थमा तथा गठिया जैसे रोगों के निवारण में आंवले के लाभकारी गुणों को देखते हुए शहर के लोगों में भी आंवले के प्रति जागरूकता एवं रुचि बढ़ती जा रही है। जिसकी वजह से शहरों में आंवले के उच्च गुणवता वाले उत्पादों की प्रबल मांग है। इसके साथ ही बढ़ती हुई आबादी के कारण कृषि योग्य भूमि लगातार संकुचित होती जा रही है। अतः बंजर/ऊसर भूमि में उग सकने वाले फलों एवं सब्जियों जैसे आंवले का प्रसंस्करण समय की मांग है जो किसानों के लिए खेती के अतिरिक्त आय का सशक्त माध्यम साबित हो सकता है।

कीवी प्रवर्धन की उत्तम तकनीक

अरुण कुमार शुक्ला, कल्लोल कुमार प्रमाणिक, संतोष वाटपाड़े, जितेन्द्र कुमार एवं सुनील कुमार
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, अमरतारा काटेज, शिमला–04

पर्वतीय क्षेत्रों में मूलतः शीतोष्ण फलों का बहुतायत उत्पादन किया जाता है। परंतु बदलते हुए जलवायु परिदृश्य में कीवी वैकल्पिक फसल के रूप में उभरकर सामने आई है। इस फल की न केवल उत्पादकता अच्छी है बल्कि पोषणमान भी काफी अच्छा है। बाजार में मांग के साथ–साथ प्रति हेक्टेयर अधिक लाभ भी प्राप्त हो रहा है। कीवी फल या चाइनिज गूजबेरी की भारत वर्ष के मध्य हिमालय क्षेत्र तथा शीतोष्ण फल उत्पादन क्षेत्रों में व्यवसायिक ढंग से खेती करने की असीम सम्भावनाएं हैं। भारत वर्ष के महानगरों में इस फल का विक्रय 150 से 200 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से हो सकता है। शिमला क्षेत्र के उत्पादकों को 70 से 90 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से आय हो जाती है। इसे ध्यान में रखते हुए इस फल के पौधों की मांग निरंतर बढ़ती जा रही है। विभिन्न राजकीय संस्थान, विश्वविद्यालय और निजी पौधशालक इस की पौध के प्रवर्धन में जुटी हुई हैं, लेकिन ये सब मिलकर भी पौधों की मांग पूरी नहीं कर पा रहे हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के क्षेत्रीय केंद्र, अमरतारा कॉटेज, शिमला के वैज्ञानिकों ने कीवी के पौधों के प्रवर्धन की एक सरल तकनीक विकसित ही है। इससे पौधों का प्रवर्धन किसान बिना किसी कठिनाई और कम लागत पर कर सकते हैं। जिसमें किसान अपने ही संसाधनों का प्रयोग सुविधानुसार कर सकता है। यह तकनीक मूलतः कलम रोपण विधि द्वारा पौधे तैयार करने पर आधारित है। इस विधि में कलमों में जड़ पैदा करने के लिए विशेष प्रकार की रोपण क्यारियां तैयार की जाती हैं और कलमों को उगाने से पहले एक रूटिंग हार्मोन से उपचारित किया जाता है। किसानों के खेत में किए गए परीक्षण से यह सिद्ध हुआ है कि इस विधि द्वारा कम से कम 50 से 60 प्रतिशत कलमों से पौधे प्राप्त करने में सफलता मिल जाती है।

कीवी प्रवर्धन

कीवी के प्रवर्धन हेतु आवश्यक बातें

आदर्श क्लोन का चयन

अच्छी उत्पादकता व गुणवतायुक्त युक्त जाति के क्लोन चयनित करते हैं। सामान्यतः नर्सरी के व्यवसायिक उत्पादन के लिए मातृ खण्ड (मदर ब्लॉक) की स्थापना आदर्श क्लोन द्वारा की जानी चाहिए। मादा कीवी के लिए उपयुक्त किस्म जैसे बरुनो, एलीसन, मोन्टी, हेवार्ड तथा एबाट तथा नर कीवी हेतु टमूरी तथा मतुआ किस्म का चयन करना चाहिए।

क) प्रवर्धन की जाने वाली उन्नतशील किस्मों का विशेषज्ञ दल द्वारा निरीक्षण कराकर आदर्श क्लोन का चयन कर उनसे प्रवर्धित पौधे ही मातृ खण्ड में स्थापना हेतु प्रयोग में लाए जाएं।

कीवी की कलम में जड़तंत्र का विकास

ख) जिन पौधों का चिन्हीकरण किया जाना है उनकी 3–5 वर्षों के उत्पादन के आंकड़े उपलब्ध होने चाहिए।

ग) चयनित पौधा स्वस्थ एवं रोग से मुक्त होना चाहिए।

घ) मातृखण्ड में रोपित पौधों की काट–छांट नियमित अंतराल पर होनी चाहिए।

मूलन माध्यम बनाना

प्रवर्धन हेतु आवश्यकतानुसार स्वस्थ पौधे तैयार करने के लिए मूलन माध्यम तैयार करना चाहिए। इसमें एक भाग मिट्टी, एक भाग बालू, एक भाग सड़ी गोबर खाद या वर्मीकम्पोस्ट तथा कोकोपिट एक भाग इन सभी अवयवों को अच्छी तरह मिलावट ट्रे में भर देना चाहिए।

मूलन माध्यम का निर्जर्मीकरण

मूलन माध्यम में किसी प्रकार के हानिकारक कवक अथवा जीवाणु न रहें, अतः इसे भाप, सूर्यताप या 2 प्रतिशत फार्मेलीन द्वारा शोधित किया जाता है।

माध्यम उर्वरक मिश्रण

पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए मुलन माध्यम के निर्जर्मीकरण के बाद उर्वरक को निश्चित अनुपात में मिलाकर उपयोग में लाना चाहिए। प्रति घनमीटर मूलन माध्यम में 2.5 कि. ग्रा. उर्वरक मिश्रण का प्रयोग किया जाना चाहिए जिसे निम्न अनुपात में तैयार किया जाता है। कैन 1.2 कि. ग्रा. सिंगल सुपरफॉस्फेट–2.5 कि. ग्रा. एवं म्यूरेट ऑफ पोटाश 1 कि. ग्रा.।

रोपण क्यारियां तैयार करना

कलम रोपण के लिए क्यारियां सतह से 30 से.मी. उठी हुई होनी चाहिए ताकि इनमें जल भराव न हो सके। इन क्यारियों में सबसे नीचे 10 से.मी. तह लकड़ी के बारीक बुरादे की होनी चाहिए। इससे न केवल जनवरी से मार्च माह तक क्यारियों का तापमान सामान्य से ऊंचा रहेगा बल्कि कलमों में जड़ें निकलने की प्रक्रिया को भी प्रोत्साहन मिलेगा। क्यारियों की 20 से.मी. ऊपरी सतह मिट्टी, रेत और गली–सड़ी गोबर की खाद 2:1:1 के अनुपात में बनाए गए मिश्रण की होनी चाहिए। ठंड के समय में क्यारियों को पाले से और गर्मी के मौसम में सीधी धूप से बचाने का उचित प्रबंध किया जाना चाहिए। इसके लिए क्यारियों के ऊपर 1.5 मीटर की ऊंचाई पर सूखी घास, गेहूं या धान की पुआल का छप्पर उपयुक्त रहेगा। सामान्यतः 2 x 1 मी. की क्यारी की देखरेख आसानी से की जा सकती है। आर्द्रता बनाए रखने के लिए क्यारियों के ऊपर बांस या किसी अन्य लकड़ी का 30 से 45 से.मी. ऊंचा फ्रेम बना कर इसे पॉलीथीन शीट से ढक देना चाहिए। क्यारियों को कम से कम एक माह के लिए इस प्रकार ढकना आवश्यक है।

कलम तैयार करना

कीवी के प्रवर्धन के लिए दृढ़ काष्ठ कलम सबसे उपयुक्त रहती है। इस के लिए 30 से.मी. लम्बी कलमों का चयन किया जाना चाहिए, जिसमें कम से कम पांच कलियों का होना आवश्यक है। कलमें एक वर्ष की आयु की टहनियों से लेनी चाहिए। कलम का ऊपरी भाग तिरछा (कलम के मुंह की तरह) तथा निचला हिस्सा जो कि क्यारी में रोपित किया जाना है, गोलाकार काटा जाना चाहिए। इससे रोपण करते समय कलम निचले व उपर के भाग की पहचान बनी रहती है। यह अति आवश्यक है क्योंकि टहनियों की शिखर व पैंदे की पहचान कटने के बाद कठिन हो जाती है। यदि इन कलमों को सुषुप्तावस्था में दिसम्बर–जनवरी के माह में काटा गया हो तो उस स्थिति में इनके बन्डल बना कर किसी ठंडे आर्द्र

स्थान में 60–70 से.मी. गहरी खाई में दबाकर बसन्त ऋतु तक रखी जा सकती हैं। गीली मॉस घास में बांधकर इन कलमों को फ्रीज के निचले भाग में भी भंडारण के लिए रखा जा सकता है।

कलम का रोपण व उपचार

शरद ऋतु के पश्चात जैसे–जैसे मौसम बदलने लगे और तापमान बढ़ना शुरू हो तो कलमों को क्यारियों में रोपित कर देना चाहिए। रोपण का समय कीवी के पौधों में कलियां फूटने से पहले ही उपयुक्त होता है। शिमला जैसी जलवायु में फरवरी के आखिरी सप्ताह के बाद इन कलमों को लगाने का उपयुक्त समय होता है। रोपण से पूर्व कलमों को जड़ उगाने वाले हार्मोन, ठंडोल ब्यूटारिक अम्ल (2500 पी.पी.एम.) से उपचारित किया जाना चाहिए। यह हार्मोन भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (उद्यान विज्ञान), अमरतारा कॉटेज, शिमला–4 से भी प्राप्त किया जा सकता है। कलमों को तेज चाकू से 5 से.मी. ऊपर से नीचे की ओर चीरा लगा देना चाहिए और यह चीरा केवल कलम की छाल तक ही हो, अंदर की लकड़ी को हानि न पहुंचाएं। इसके उपरांत कलमों के चीरा लगे भाग को जड़ उगाने वाले हार्मोन में 15 सैकेण्ड के लिए डूबा रहने दें।

इस उपचार के पश्चात कलमों को उल्टा कर छाया में सुखा लें। क्यारियों में हल्की सिंचाई दिए जाने के बाद तिरछे छिद्र (लगभग 450 कोण) किसी पतली लकड़ी या सरिये के टुकड़े से बना लें। यह छिद्र 15 x 15 से.मी. की दूरी पर होने चाहिए। इन छिद्रों में उपचारित की गई कलमों को रोप दें। रोपण के तुरंत बाद स्प्रे पम्प द्वारा क्यारियों की हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए और क्यारियों के ऊपर लकड़ी की फ्रेम पर पॉलीथिन शीट बिछा दें जिसके किनारे क्यारी की सतह से नीचे तक आ जाएं। इससे कलमों के समीप वातावरण में उच्च आर्द्रता बनी रहेगी। इसमें आर्द्रता बनाए रखने के लिए दिन में तीन या चार बार स्प्रे पम्प द्वारा पॉलीथिन शीट के अंदर पानी का छिड़काव कर देना चाहिए। इसके लिए पॉलीथिन शीट का एक कोना जरा सा उठा कर छिड़काव पम्प की नाली (लॉस) अंदर डाल कर स्प्रे किया जा सकता है और पूरी पॉलीथिन शीट उठाने की आवश्यकता नहीं होती। जड़ें फूटने के लिए उच्च आर्द्रता बनाए रखना अत्यंत आवश्यक होता है। पॉलीथिन शीट तब तक न उठाएं जब तक कलमों में अच्छी वानस्पतिक बढ़ोतरी न हो जाए और सामान्य जलवायु गर्म न हो जाए। आकस्मिक ठंड का पड़ना प्रवर्धन के लिए हानिकारक हो सकता है। अच्छी वानस्पतिक बढ़ोतरी के लिए तालिका 1 में दिए गए पौष्टिक तत्वों का छिड़काव 30 दिन के अंतराल पर करना चाहिए।

कीवी पौधों की नई कोमल पत्तियों और शाखाओं को कुछ कीट नुकसान पहुंचाते हैं जिनका नियंत्रण कीटनाशकों जैसे न्यूवान इत्यादि से किया जाना चाहिए। इस विधि से अगले वर्ष जनवरी माह में बगीचे में लगाने के लिए स्वस्थ कीवी के पौधे मिल जाते हैं। पोषक तत्वों का मिश्रण, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, (उद्यान विज्ञान) अमरतारा कॉटेज, शिमला से भी उपलब्ध हो सकता है।

तालिका 1: कीवी की कलमों पर छिड़काव के लिए पौष्टिक तत्व

पौष्टिक तत्व	मात्रा प्रति लीटर
पोटैशियम नाईट्रेट	800 मी. ग्रा.
मैगनीशियम सल्फेट	450 मी. ग्रा.
फॉस्फोरिक अम्ल	120 मी. ग्रा.
कैल्सियम सल्फेट	200 मी. ग्रा.
अमोनियम सल्फेट	200 मी. ग्रा.
फैरस सल्फेट	5 मी. ग्रा.
बोरिक अम्ल	3 मी. ग्रा.
जिंक सल्फेट	0.2 मी. ग्रा.
कॉपर सल्फेट	0.2 मी. ग्रा.
मैगनीज सल्फेट	0.1 मी. ग्रा.

सजावटी तथा पुष्पीय फसलों में शुष्कन द्वारा मूल्यवर्धन

नमिता, ऋतु जैन, सपना पंवर, एस.एस. सिंधु एवं रोहित पिंडर

पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निर्माण संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली –110012

पुष्पों का प्रयोग जन्म से लेकर मनुष्य के अंतिम समय तक एवं किसी भी उत्सव या शुभ अवसर पर अधिकाधिक होता है। भारतवर्ष में जलवायु की विविधता होने के कारण अनेकों प्रकार के फूल उगाए जाते हैं तथा दूसरे देशों में निर्यात भी किए जाते हैं। जब मण्डी में फूलों की कीमत कम मिल रही हो तो हम उनके विभिन्न मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे माला, लड़ी, वेणी, गजरा, पुष्प विन्यास, पंखुड़ी, गुलकन्द, जैली, शर्बत, अर्क, इत्र, पॉट प्यूरी, एवं सूखे पुष्प आदि तैयार कर सकते हैं। फूलों को काट कर या तोड़कर उनका उत्पाद तैयार करने की प्रक्रिया को मूल्यवर्धन कहते हैं तथा इस प्रकार तैयार किए गए उत्पाद मूल्यवर्धित उत्पाद कहलाते हैं। इस प्रकार बनाए गए उत्पाद का मूल्य दो तरह से वर्धित होता है, एक तो उत्पाद की आकृति बहुत अच्छी हो जाती है चाहे वह कोई माला, वेणी या पुष्पविन्यास की शक्ल में हो। दूसरा उस उत्पाद का विपणन मूल्य भी बढ़ जाता है। मूल्यवर्धित उत्पाद बनाने से आय भी अधिक होती है तथा अधिक उपज का अच्छा उपयोग हो जाता है। कभी–कभी जब शादी, ब्याह या कोई पर्व या उत्सव नहीं होता तो मण्डी में फूलों की मांग कम हो जाती है तथा कभी–कभी ऐसा भी होता है कि जो किसान फूल उगाता है, उसे मण्डी में बेचने के लिए लाता है उसे मण्डी में मंदी के कारण अपनी पूरी लागत भी नहीं मिलती है और किसान को काफी नुकसान उठाना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में फूलों को सुखाकर उनके विभिन्न उत्पाद तैयार करना एक लाभकारी विकल्प है। इस प्रकार किसान की जो भी अधिक उपज होगी, उसे वह काट कर मण्डी में लाने के बजाए, घरेलू स्तर पर सुखाकर विभिन्न तरह के उत्पाद जैसे शुभकामना पत्र (बधाई कार्ड), पुस्तक चिन्ह, कागज दाब (पेपर वेट), पंखुड़ी, पॉट प्यूरी आदि तैयार कर सकता है। इस प्रकार बनाए गए उत्पादों की विदेशों में भी बहुत मांग है क्योंकि यह उत्पाद न केवल प्राकृतिक मूल्यवर्धित उत्पाद हैं, अपितु ये सस्ते, पर्यावरणमित्र, जैवनाशी, सुगमता से परिवहित होने वाले, गर्मी या सर्दी के प्रकोप से अनछुए होते हैं। ताजे फूलों की अपेक्षा हमें इन उत्पादों की ज्यादा देखरेख भी नहीं करनी पड़ती है। जहां ताजे फूलों की आयु 2 दिन से लेकर 4 सप्ताह तक होती है, वहीं सूखे (शुष्क) फूलों के उत्पादों की आयु 6 महीने से लेकर 10 वर्ष तक हो सकती है। सूखे फूलों के उत्पाद कभी भी बनाए जा सकते हैं। इसके लिए किसी विशेष प्रकार के जलवायु या तापमान की आवश्यकता नहीं होती। यदि एक बार फूलों को सुखाकर हवारहित डिब्बे में बंद करके रख लिया जाए तो वह कभी भी उत्पाद बनाने के लिए प्रयोग किए जा सकते हैं। इस तरह से बनाए गए उत्पाद किसान के लिए अधिक एवं अतिरिक्त आय का साधन बन सकते हैं। अब सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि इन फूलों को कैसे सुखाया जाए तथा किस प्रकार उनके मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार किए जाएं। इस लेख में हमने पुष्पों को सुखाने की विभिन्न विधियों एवं ऐसे उत्पादों की जानकारी देने की कोशिश की है।

पुष्पों को सुखाने की विधियां

पुष्पों की किस्म एवं उपयोग के अनुसार उन्हें निम्नलिखित विभिन्न तरीकों से सुखाया जा सकता है :

1. वायु शुष्कन

i. **स्वःस्थाने शुष्कन/पेड़ पर सुखानाः** कुछ फूल एवं पौधों के हिस्से जैसे फल आदि को पौधों के साथ ही लटके हुए सुखाया जाता है। उसे स्वःस्थाने शुष्कन कहते हैं। उदाहरणतः अमलतास, बेल, चीड़, रीठा आदि।

ii. **लटकन शुष्कनः** इस विधि में फूलों को उल्टा लटका कर या उन्हें खांचों में सीधा खड़ा करके सुखाया जाता है। खेत

से फूलों को लाने के पश्चात, फूलों को गुच्छों में बांध दिया जाता है। गुच्छे बनाने के बाद फूलों को एक ठंडे एवं अंधेरे कमरे में रस्सी पर एक से दो सप्ताह तक लटका दिया जाता है। स्ट्रा फलावर, पेपर फलावर, बोगेनविलिया तथा स्टेटिस इत्यादि पुष्प इस विधि द्वारा सुखाए जा सकते हैं।

विधि

- फूलों को पूरी तरह खिलने पर काटे/तोड़े।
- तने के निचले 5 सेंमी. हिस्से से पत्तियां निकाल कर उनको तैयार कर लें।
- फूलों के दस या बीस के गुच्छे बनाएं।
- फूलों के गुच्छों के निचले हिस्से को रबर बैंड से बांधें।
- फूलों के गुच्छों को अंधेरे एवं वायु प्रवाह वाले कमरे में बांस की खपच्ची के ऊपर या रस्सी बांधकर उसमें धागे की सहायता से उल्टा लटका दें।
- एक सप्ताह बाद सूखे फूलों को इकट्ठा करके उसे ठंडे एवं शुष्क स्थान पर भंडारित कर लें।

iii. समतल पट्ट शुष्कनः इस विधि में फूलों को समतल पट्ट पर अंधेरे कमरे में सपाट सूखने के लिए प्रकाशरहित स्थान पर रख दिया जाता है।

2. दाब शुष्कन

इस विधि को "हरबेरियम विधि" भी कहते हैं। इस विधि में फूलों एवं पत्तियों को सोख्ता कागज या अखबार की सतह में रख कर तथा उन्हें हरबेरियम प्रेस में दबा कर रखते हैं। हर तीसरे दिन इन फूलों को पलट कर नए कागज की परत के बीच में रख दिया जाता है ताकि फूलों में फफूंदी न लगें अथवा फूल काले न पड़ें। इस विधि में फूलों का आकार खो जाता है परन्तु उनका रंग बना रहता है। यदि दाब विधि से फूल जल्दी सुखाने हों तो फूलों को हरबेरियम प्रेस में दबाकर या किसी मोटी पुस्तक में दबा कर गर्म वायु वाली तप्त भट्टी में 40–45^0 सेल्सियस तापमान पर 48 घंटे के लिए रखा जा सकता है। यदि उससे भी अधिक जल्दी हो तो सूक्ष्मतरंग भट्टी में 1 से 3 मिनट तक रखें तथा भट्टी से निकालने के बाद हरबेरियम प्रेस को आधे घंटे के लिए छोड़ दें व आधे घंटे के पश्चात फूल निकाल कर प्रयोग करें या उन्हें भंडारित करें। इस विधि द्वारा सुखाए गए फूल शुभकामना पत्र, पेपर वेट, बुक मार्क, दीवार भित्ती/लटकन, दृश्यावली इत्यादि बनाने के काम आते हैं। उदाहरणतः पैंजी, लार्कस्पर कोरियोप्सिस, डैजी, पॉपी, कैलेण्डूला, गुलदाउदी, नरगिस, फ्लॉक्स, जिनिया आदि पुष्पों को इस विधि से सुखाया जा सकता है।

विधि

- फूलों को पूरी तरह खिल जाने के बाद तोड़ लें।
- अब हरबेरियम प्रेस लेकर उसमें अखबार या सोख्ता कागज बिछा लें।
- इस अखबार/सोख्ता कागज के ऊपर फूल की पंखुड़ियों/पत्तियों को व्यवस्थित करें।
- अब इन्हें सोख्ता कागज/अखबार की तह से ढ़क दें।
- दोबारा एक सोख्ता कागज या अखबार की सतह बिछाएं तथा ऊपर की तरफ फूल व्यवस्थित करें।
- अब फूलों/पंखुड़ियों को अखबार से ढ़क दें। इसी तरह 4–5 सतह में फूल रख लें।
- अब हरबेरियम प्रेस को पेच की सहायता से बंद कर दें।
- फूलों को सुखाने के लिए गर्म भट्ठी में या धूप में या छाया में रखें।
- यदि छाया में सुखाना हो तो हर तीसरे दिन पुराने सोख्ता कागज को हटा कर नया सोख्ता कागज लगा दें।

- फूलों की पत्तियों व पंखुड़ियों को पूर्णतः सूखने के पश्चात निकाल लें।

3. अन्तःस्थापित शुष्कन

इस विधि के प्रयोग से फूलों के रंग एवं आकार में बहुत कम बदलाव होता है। फूलों को काटने तथा तैयार करने के बाद फूलों को शुष्कक पदार्थों में रखा जाता है। शुष्कक पदार्थ जैसे रेत, सिलिका जेल, बोरिक अम्ल, बोरेक्स, बुरादा, फिटकरी चूर्ण, एल्युमिनियम स्ल्फेट आदि प्रायः अन्तःस्थापित शुष्कन में प्रयोग किए जाते हैं। इस शुष्कन विधि के प्रयोग से जल्दी फूल सुखाने के लिए अन्तस्थापित फूलों के पात्र को धूप में, गर्म हवा तप्त भट्टी में, सूक्ष्म भट्टी में या निर्वात भट्टी में रखा जा सकता है। उदाहरणतः गुलाब, गैंदा, गुलदाउदी, पेपर फ्लावर, स्ट्रा फ्लावर, एमोबियम, डॉग फ्लावर, लार्कस्पर, आर्किड, गैलारडिया आदि पुष्पों को इस विधि से सुखाया जाता है।

विधि

- जल शुष्कक की एक परत पात्र के तले में बिछा लें।
- एक समय में एक ही जाति/किस्म के फूल सुखाएं।
- फूलों को उनके प्रकार के हिसाब से लगाएं। किसी भी दो फूलों के किनारे एक दूसरे फूल को या पात्र को न छुएं।
- शुष्कक पदार्थ को धीरे–धीरे सब तरफ से तब तक डालें जब तक यह 1.5 से.मी. की परत फूलों के ऊपर ना बना लें।
- शुष्कक पदार्थ को फूल का सम शुष्कन करना चाहिए तथा फूलों को सहारा देना चाहिए जिससे फूल का आकार बना रहे।
- पात्र को छाया में रखने पर शुष्कन समय 2–4 सप्ताह तक हो सकता है।
- तप्त भट्टी में यह समय 24–72 घंटे तथा सूक्ष्म भट्टी में 1–5 मिनट होता है।
- जब फूल पूरी तरह से सूख जाएं तो उन्हें शुष्कक कर्मक से बाहर निकाल लें।
- फूलों को शुष्कक कर्मक के साथ छलनी में डालें ताकि शुष्कक कर्मक छिद्रों में से निकल जाए एवं फूल भी क्षतिग्रस्त न हों।
- फूलों को निकालने के बाद उन्हें छोटे पेंट ब्रुश से धीरे–धीरे झाड़ें ताकि अतिरिक्त शुष्कक कर्मक की परत फूलों पर न जमी रहे।
- फूलों को निकालने के बाद उनका अच्छे से भंडारण करें क्योंकि फूल भंगुर हो सकते हैं।

4. ग्लीसरीन शुष्कन

इस विधि के द्वारा मुख्यतः शोभाकारी पत्तियों को सुखाया जाता है। जिन पत्तियों में चमक होती है तथा जो पत्तियां रंगीन (पीली, लाल, भूरे रंग वाली) एवं लचीली होती हैं उन्हें ग्लीसरीन द्वारा आसानी से सुखाया जा सकता है। इस विधि में हम 1 भाग ग्लीसरीन को 2 भाग गर्म पानी (गुनगुना) में मिला कर उसका घोल तैयार कर लेते हैं। इस घोल में पत्तियों को डुबोकर रख दिया जाता है। 4–7 दिन के पश्चात् इन्हें इस घोल से निकाल कर किसी नर्म कागज या कपड़े से पोंछ कर रख लिया जाता है। इन पत्तियों को ग्लीसरीन के घोल में डुबोया जाता है तो पत्तियों का पानी निकाल कर घोल में समावेषित हो जाता है तथा पत्तियां सूख जाती हैं, उनका रंग, चमक एवं लचीलापन भी बना रहता है। उदाहरणतः रबड़, चम्पा, सफेदा, मेपल, पॉपलर, चिनार, स्टेरिस, हाईड्रेन्जिया, मोलूसेला, जिप्सोफिला, कॉक्स कॉम्ब आदि की पत्तियों को इस विधि से सुखाया जा सकता है।

5. जल शुष्कन

जिन फूलों की पंखुड़ियां शुष्कन के पश्चात एकदम भंगुर हो जाती हैं, उन्हें पानी में सुखाया जाता है। जैसे:– हाईड्रेन्जिया, कनेर, चम्पा आदि।

6. हिम शुष्कन

इस विधि द्वारा सुखाए गए फूलों की गुणवता दुगने से भी अधिक होती है। इस विधि में फूल को लाकर फ्रिज ड्रायर में लगाया जाता है तथा फूलों को -35^0 सेल्सियस तापक्रम पर हिमित कर दिया जाता है। कोई भी हिम का कण यदि फूलों पर हो तो उन्हें गर्म करके वाष्पित कर दिया जाता है। यह विधि अन्य विधियों की अपेक्षा मंहगी है।

पैकिंग व भंडारण

सूखे फूलों को बहुत से तरीकों से पैक किया जा सकता है जैसे कि पॉली बैग, विन्डो बॉक्स, लकड़ी के डिब्बे, गत्ते के डिब्बे या थैली में। सर्वप्रथम फूलों को नीचे के भाग को धागे से बांध कर गुच्छा बनाया जाता है। इस गुच्छे को टिशु कागज में लपेटा जाता है। तत्पश्चात उन्हें गत्ते के डिब्बे में इस प्रकार बंद किया जाता है कि डिब्बे के अन्दर सूर्य का प्रकाश न पहुंच सके। पैकिंग करते समय यह ध्यान अवश्य रखें कि पैकिंग सामग्री इतनी स्थिर तथा मजबूत हो कि सूखे फूलों के भंडारण या परिवहन के दौरान उन्हें कोई क्षति न हो। सूखे फूलों को विभिन्न उपायों से परिरक्षित किया जा सकता है जैसे कि सूखे फूलों को सूर्य के सीधे प्रकाश से दूर रखें, फूलों को गर्म हवा के प्रवाह के पथ में न रखें, साधारण ताजे पानी की धुमिका के द्वारा सूखे फूलों को ताजा एवं धूलरहित रखा जा सकता है।

सावधानियां

- पुष्प सामग्री को ओस/नमी का वाष्पीकरण होने के बाद (दिन के समय) एकत्रित करें।
- खेत में सिंचाई के 2–3 दिन बाद सामग्री एकत्रित करें।
- ताजा सामग्री इकट्ठा करें।
- पुष्पक्रम के विकसित सभी अवस्थाएं जिनके फूल पूरी तरह कठोरीभूत हो जाएं उन्हें ही एकत्रित करना चाहिए क्योंकि अपरिपक्व पुष्प बहुत तेजी से सिकुड़ जाते हैं।
- एक समय में एक ही प्रकार के फूलों या पत्तियों को अन्तःस्थापित करना चाहिए।
- अन्तः स्थापन से पहले अवांछित हिस्सों को काट लेना चाहिए।

सूखे पुष्पों से मूल्यवर्धित उत्पाद

मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार करने के लिए हम उपर्युक्त विधियों द्वारा सुखाए गए पुष्पों का प्रयोग करते हैं। ग्रामीण महिलाएं, गृहणियां तथा बेरोजगार युवक/युवतियाँ फूलों, पत्तों, कलियों, घास, फली, फल एवं बीजों को सुखाकर उनके विभिन्न शिल्प बना सकते हैं जिन की मांग बाजार में पूरे वर्ष रहती है। यह सजावटी समान स्वरोजगार के अवसर प्रदान करता है। इन शिल्पों में प्रमुख है; बधाई पत्र, दीवार भित्ति, पुस्तक चिन्ह, कागज दाब (पेपर वेट) या पुष्प विन्यास इत्यादि।

शुभकामना पत्र : शुभकामना पत्र बनाने के लिए दाब विधि से सुखाए गए फूलों का प्रयोग करते हैं। जो फूल सूख कर भंडारित किए गए हों उन्हें हम आईबरी शीट या मोटे कागज पर चिपका कर शुभकामना पत्र बना सकते हैं। एक आइबरी शीट का 4 × 6'' या 5 × 7'' का कार्ड लो। उसके सामने वाले भाग पर 3 × 5'' या 4 × 6'' का मखमली कागज/हस्तनिर्मित कागज चिपकाएं। इस कागज के ऊपर सूखी पत्तियों एवं पंखुड़ियों को विभिन्न आकारों एवं डिजाइनों के रूप में फेविकोल की सहायता से चिपकाएं। एक डिजाईन पूरा होने के बाद शुभकामना पत्र को एक पुस्तक

या हरबेरियम प्रेस में दबा कर 7–8 घंटे तक सूखने हेतु के रख दें। तत्पश्चात इसे निकाल लें। अब आप इसी शुभकामना पत्र को विभिन्न अवसरों जैसे दिवाली, नववर्ष, जन्मदिवस, सालगिरह आदि मौकों पर प्रयोग कर सकते हैं। इसी प्रकार विभिन्न आकार के बोर्ड का प्रयोग करते हुए पुस्तक स्मृति चिन्ह, लटकन, दृश्यावली, दीवार भित्ति, कागज दाब इत्यादि बना सकते हैं।

पुस्तक चिन्हः पुस्तक चिन्ह बनाने के लिए 1–1 इंच की आईवरी शीट की पट्टी काटें। इस पट्टी के ऊपर पहले से सुखाए हुए (दाब शुष्कन द्वारा) फूल एवं पत्तियों का प्रयोग करें। इन फूलों एवं पत्तियों को गोंद से सजावटी तौर पर चिपकाएं। जब चिपकाने का काम समाप्त हो जाए तो इस पुस्तक चिन्ह को शीशे के नीचे दबाकर सूखने के लिए रख दें। सूखने के बाद इस पुस्तक चिन्ह में शीर्ष की तरफ छेद करके एक सुन्दर सा धागे या रिबन का टुकड़ा बाध दें। इस प्रकार पुस्तक चिन्ह तैयार हो जायेगा।

दीवार भित्तिः दीवार भित्ति को बनाने के लिए उपयुक्त आकार का चौकोर या आयताकार आईवरी शीट का टुकड़ा लें। उस पर पहले से सुखाए गए फूलों एवं पत्तियों को गोद की सहयता से कलात्मक रूप में चिपकाएं। इसके पश्चात इसे शीशे के नीचे रखकर सुखाएं। सुखाने के बाद इसे फ्रेम करवाए। इस प्रकार दीवार भित्ति या लटकन तैयार हो जाएगी।

कागज दाबः कागज दाब को बनाने के लिए दाब शुष्कन द्वारा सुखाए गए फूलों का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए पहले कागज दाब के आकार की शीट काट ले, बाद में इसके उपर पंखुड़ियों, पत्तियों एवं घास इत्यादि को गोंद की सहायता से चिपका कर सूखा लें। तत्पश्चात इस कागज दाब के आकार की बनाई गई शिल्प को कागज दाब के निचले हिस्से में पारदर्शी गोंद से चिपका दें।

पुष्प आभूषणः फूलों के बीच, पंखुड़ी एवं पूरे फूलों के आभूषण भी बनाए जा सकते है। फूलों के बीच जैसे शिवदर्शन, रूद्राक्ष, तुलसी आदि की माला एवं कानों के झूमके तथा आर्किड के आभूषण बनाए जा सकते हैं।

सूखे फूलों का पुष्प विन्यास : फूलों को सुखा कर उन्हें टोकरी में सुव्यवस्थित करके पुष्प विन्यास (फ्लावर अरेंजमेंट) बनाया जा सकता है। इसके लिए बांस से बनी एक टोकरी लें। अब उसके आकार की थर्मोकोल शीट या फ्लोरल फोम काट कर टोकरी में लगा लें। अब इस टोकरी में विभिन्न तरह के या एक ही तरह के डंडी वाले फूल विभिन्न लेवल पर स्थापित करें। इस टोकरी में दो तरह के विन्यास बनाए

जा सकते हैं, एक जिनमें पृष्ठभूमिका (बैकग्रांउड) ऊंची या ऐसी विन्यास टोकरी के मध्य भाग से शुरू होकर सब तरफ से बराबर प्रदर्शित हों। जिन विन्यासों को दीवार के साथ प्रयोग करना हो उन्हें हम एक तरफ बना सकते हैं परन्तु जो विन्यास किसी मेज के मध्य में रखने हों तो उनमें फूल इस तरह लगाएं कि वे चारों ओर से दिखाई दें। इन विन्यासों में पृष्ठभूमि बनाने के लिए फर्न, मोरपंखी, सिल्वर ओक की लम्बी डंडी वाली पत्तियों का प्रयोग कर सकते हैं।

पॉट प्यूरी : पॉट प्यूरी को बनाने के लिए हमें फूलों, पत्तियों, फलों एवं फूल की डंडियों तथा इत्र की आवश्यकता होती है। इसे बनाने के लिए फूलों, उनकी पंखुड़ियों, पत्तियों आदि को छाया में सुखा लें। अब उन्हें एक कांच के बर्तन में डालें। कांच के बर्तन में ओरिस की जड़ का पाउडर मिला दें तथा बर्तन को ढक कर रख दें। 2–3 सप्ताह पश्चात उसमें सड़ने की बदबू आने लगे तो इसे फैंकना नहीं चाहिए। क्योंकि इस समय इसकी क्योरिंग हो रही होती है। फिर से उस बर्तन को ढक कर रख दें। चार सप्ताह के बाद उस बर्तन से फूलों की भीनी–भीनी सुगन्ध आनी शुरू हो जाएगी। इस वक्त पॉट प्यूरी तैयार हो जाती है। अब इस पॉट प्यूरी को किसी आकर्षक कांच, प्लास्टिक के जार में या सेटिन की थैली में डाल कर उसमें इत्र की छोटी सी बोतल डाल दें तथा कमरे में रख दें। बर्तन का ढक्कन थोड़ा ढ़ीला करके रखें ताकि कमरा पॉट प्यूरी की खुशबू से महक उठे। इस तरह बनाई गई पॉट प्यूरी की बाजार में अधिक मांग है तथा यह अच्छे दाम में बिकती है।

पारदर्शी शीशे में फूलों का विन्यासः कांच के पात्र के आधार के आकार की थर्मोकोल शीट काट ले। उसके ऊपर गोंद से मखमली कागज चिपका लें। अब अन्तःस्थापन या वायु शुष्कन विधि द्वारा सुखाए गए फूलों को इसके ऊपर व्यवस्थित करें। सबसे पहले मध्य में सबसे लम्बे फूल व्यवस्थित करें। उसके बाद किनारों की तरफ मध्यम आकार के फूल लगाएं तथा बाहर की तरफ सबसे छोटे आकार के फूल लगाएं। फूलों को व्यवस्थित करने के पश्चात इस आधार को पारदर्शी पात्र से ढक दें तथा निचले हिस्से को गोंद से चिपका दें। अब इस पात्र को 30–45 मिनट के लिए तप्त भट्टी में 40–45^0 सेल्सियस तापमान रखें ताकि उसके अन्दर से नमी निकल जाए।

इस तकनीक को सीखने के लिए विशेष कौशल की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इस तकनीक को किसी भी आयु वर्ग का व्यक्ति या महिला सीख सकती है। इसके लिए कोई विशेष शिक्षा की आवश्यकता नहीं होती है। इसको कोई भी सीख सकता है। इस तकनीक से किसी भी समय घर में बैठकर अलग–अलग प्रकार के फूल व पत्तियों को सुखाकर, इनसे विभिन्न प्रकार के उत्पाद बनाए जा सकते हैं। जिस मौसम में बाजार में फूलों की कीमत अच्छी नहीं मिलती, उन दिनों में महिलाएं, पुष्पों को खास तरीकों से सुखाकर इनका भंडारण कर सकती हैं। ग्रामीण महिलाओं को अपने आस–पास के क्षेत्रों और अपने खेतों में नाना प्रकार के खरपतवारों के फूल, ज्वार–बाजरा की बाली, तिल और सरसों आदि के डंठलों और घास–फूंस के पत्तों व फूलों को सुखाकर इस तकनीक से नाना प्रकार के उत्पाद बना सकती हैं। इस प्रकार की तकनीकों द्वारा रोजगार सृजन करने के उद्देश्य से भा.कृ.अ.स. के पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निर्माण संभाग, नई दिल्ली ने तीन गांवों की महिलाओं को विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार के सौजन्य से "मूल्य वर्धन के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं का उद्यम विकास और वित्तीय सशक्तिकरण" परियोजना के अंर्तगत प्रशिक्षित किया। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य महिला सशक्तिकरण के साथ–साथ रोजगार के अवसर प्रदान करना, ग्रामीण महिलाओं के लिए सूखे पुष्पों से मूल्यवर्धित उत्पाद का निर्माण करना तथा महिलाओं के परिवारों की आय बढ़ाने के साथ–साथ इन्हें सशक्त बनाना था।

भारतीय उप उष्णकटिबन्धीय कृषि परिप्रेक्ष्य में सूत्रकृमि का फैलाव व महत्व

हरेन्द्र कुमार, पंकज एवं जगन लाल

सूत्रकृमि विज्ञान संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसमें 60 प्रतिशत से अधिक ग्रामीण खेती का कार्य करते है। कृषि का विकास दर केवल 1.1 प्रतिशत है और खाद्यान उत्पादन समयनुसार बढ़ती जनसंख्या के हिसाब से पर्याप्त नहीं है। भारत में सिंचाई की व्यवस्था लगभग 30 प्रतिशत कृषि क्षेत्र में है। बाकि की कृषि का क्षेत्र वर्षा पर निर्भर है। भारत में मौसम की अनिश्चितता बनी रहती है। वर्षा कम होने पर कई क्षेत्रों में सूखा पड़ता है और कृषि उत्पादन घट जाता है। वर्षा ज्यादा होने से कई क्षेत्रों में भयंकर बाढ़ आती है। जिससे खड़ी फसल बर्बाद हो जाती है और जान माल व पशुओं का भारी नुकसान होता है व कई बार ओलावृष्टि होने से भी खड़ी तैयार व पकी फसल बर्बाद हो जाती है। किसान इन सब से आर्थिक तौर पर प्रभावित होता है।

आज के समय में दालों का उत्पादन कम होने की वजह से दालों का आयात किया जा रहा है क्योंकि भारत में अधिकतर व्यक्ति शाकाहारी हैं। मनुष्य की प्रोटीन की आपूर्ति का मुख्य स्त्रोत दालें हैं। भारत में खाद्यान का भण्डार पर्याप्त मात्रा की सीमा में है। परन्तु देश में खाद्यान्न वितरण प्रणाली सही नहीं है जिस कारण गरीब परिवारों के बच्चों में कुपोषण बढ़ता जा रहा है।

भारत को जलवायु के आधार पर विभिन्न पर्यावरण क्षेत्रों में विभाजित किया गया है।

- उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र
- उत्तरी मैदानी भाग
- शुष्क क्षेत्र
- अर्धशुष्क क्षेत्र
- द्वीप समूह

उपर्युक्त क्षेत्रों की अपेक्षाओं के अनुसार ही फसल योजना निर्धारित की जाती है।

अधिकतर फसल सिंचाई के लिए खेती स्थानीय नहर व मौसमी नहर पर निर्भर है। मौसम में विविधता व फसलों की विविधताओं के कारण ही फसलों में सूक्ष्मजीव, जैसे सूत्रकृमि की उत्पत्ति व विकास होता है जो फसलों में विभिन्न बीमारियों का एक मुख्य कारण है। सूत्रकृमियों की जाति व संख्या विभिन्न फसलों पर निर्भर है। भारत में गेहूं व धान प्रमुख खाद्यान फसलें है। इनकी पैदावार में किसी प्रकार की क्षति होने पर लोगों का जीवन अस्त–व्यस्त हो सकता है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में फसलोत्पादन की क्षमता भिन्न–भिन्न है व उनकी उत्पादकता में भी भिन्नता है। खेत में एक ही फसल बार–बार उगाने से कुछ खास प्रकार के जीव–जन्तु बढ़ जाते हैं और उस फसल के मुख्य परजीवी बन जाते हैं एवं फसल पैदावार में कमी आनी शुरू हो जाती है। अतः एक फसल पद्धति/प्रणाली फसल उत्पादन में कमी के कारण किसान के लिए हितकारी नहीं है। अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि गुणात्मक व बहुफसलीय पद्धति में (पैदावार/मी^{2}) फसल उत्पादन बढ़ाने के लिए सही है तथा यह पद्धति पर्यावरण की दृष्टि से भी लाभकारी है। कृषि का परिप्रेक्ष्य एक क्रियाशील क्षेत्र होता है जहां पर्यावरण में परिवर्तन होता रहता है जो कृषि के क्षेत्र में जटिलता प्रदान करता है। वैज्ञानिक तरीकों से कृषि करने पर पर्यावरण की कुछ अनियमित्ताओं को दूर किया जा सकता है।

भारत में खाद्यान्न का उत्पादन 257 मैट्रिक टन होता है जिसमें धान का 100 मैट्रिक टन और गेहूं का 95 मैट्रिक टन उत्पादन होता है। कृषि में नई व उचित तकनीक के समावेश

से फसल उत्पादन में बढ़ोतरी होना संभव हुआ है। अब भारत निर्यात करने वाले देशों की श्रेणी में आ गया है। कृषि क्षेत्रफल के बढ़ने की संभावना नहीं है और विभिन्न फसलों में कीट व बीमारियों द्वारा लगभग 600 मिलियन रुपयों का नुकसान प्रतिवर्ष देश को होता है। उच्च तकनीकी अपनाकर फसलों को कीटों बीमारियों से हो रहे नुकसान का 10 प्रतिशत तक भी कम कर पाये तो कृषि जगत के लिए लाभकारी होगा। अधिकतर किसानों को कीट व बीमारियों की जानकारी व उनकी रोकथाम के उपाय पता नहीं होते हैं इस कारण से फसलों में कीट व बीमारी द्वारा हानि को रोक पाना कठिन होता है। सूत्रकृमि मिट्टी में जड़ों पर व पौधों के ऊपरी भागों पर तना, पत्तियों व बीज आदि में लगकर हानि पहुंचाते हैं। सामान्यतः सूत्रकृमि जड़ों की परत पर चिपकार भोजन करते हैं, परन्तु कुछ सूत्रकृमि जड़ों के अन्दर कोशिकाओं में जाकर भोजन करते हैं व जड़ों को क्षति पहुंचाते हैं। सूत्रकृमि एकभक्षी व बहुभक्षी दो प्रकार के होते हैं।

एकभक्षी सूत्रकृमि : यह सूत्रकृमि एक प्रकार की फसल पर आश्रित रहते हैं।

बहुभक्षी सूत्रकृमि : यह सूत्रकृमि अनेक तरह की फसलों पर आश्रित रहते हैं और ज्यादा आर्थिक हानि पहुंचाते हैं।

यदि किसानों को इन बीमारियों के बारे में समय पर उचित जानकारी प्राप्त हो जाए तो फसलों में हो रहे नुकसान को कम किया जा सकता है। इसी संदर्भ में सूत्रकृमि से संबंधित विशेष जानकारी दी जा रही है:—

जड़ गांठ सूत्रकृमि (मेलाइडोगाइनी) : जड़—गांठ सूत्रकृमि की भिन्न—भिन्न प्रजातियां होने से यह बहुफसली परजीवी/कृमि है। यह सूत्रकृमि खाद्यान्न, दालें, फल व फूल आदि फसलों को अधिक हानि पहुंचाता है। इसका फैलाव पूरे भारत में ही नहीं अपितु विश्व भर में है। किसान सब्जियों की फसलें लगभग पूरे साल लगातार उगाते हैं जो सूत्रकृमि की संख्या बढ़ाने में सहयोगी है। जड़—गांठ सूत्रकृमि से लगभग 25—30 प्रतिशत फसल उपज की हानि होती है। इस कृमि की फसल को हानि करने की गुणात्मक क्षमता अधिक होने से फसल पैदावार में ज्यादा नुकसान होता है। इस कृमि का

जड़—गांठ सूत्रकृमि द्वारा सब्जियों में जड़—गांठ रोग

खेतों में आर्थिक दृष्टि से विनाशकारी जीवों में प्राथमिकता के आधार पर पहला नम्बर है। क्योंकि इस सूत्रकृमि का प्रकोप एक ही प्रकार की फसल खेत में बार—बार लगाने से बढ़ता है। यह फसलों की पौध (नर्सरी) द्वारा एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में फैलता है। इस सूत्रकृमि की रोकथाम निम्न प्रकार से की गई है :—

- गर्मियों में खेत की हल्की सिंचाई करके 2—3 गहरी जुताई 10—12 दिन के अंतराल पर करें। इससे सूत्रकृमि ऊपरी सतह पर आकर सूर्य की तपन से मर जाते हैं।
- जड़—गांठ ग्रसित खेत में 2—3 साल तक फसल चक्र अपनाते हुए सूत्रकृमि अवरोधक फसल उगायें जैसे — गेहूं, सरसों, जौ व जाफरी गेंदा आदि।
- मई—जून में पौध वाली फसल की नर्सरी लगाने से पहले क्यारी को पॉलीथीन चादर से 3—4 हफ्ते तक ढककर, सूर्य तपन करने के बाद क्यारी में नर्सरी लगायें।
- पौध वाली फसल की नर्सरी लगाने से पहले पौध की क्यारियों में कार्बोफ्यूरान (फ्यूराडान) 3जी, 1.5 ग्राम/वर्ग मीटर की दर से मिट्टी में मिलाने से कृमि रहित पौध/नर्सरी बनेगी।

गेहूं में पुट्टी सूत्रकृमि (हैटेरोडेरा एवीनी) : यह सूत्रकृमि उत्तरी भारत में गेहूं, जौं व जई की फसलों में मौल्या रोग उत्पन्न करके हानि पहुंचाता हैं। इसका विस्तार राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश तक है। इस कृमि का अधिक प्रकोप राजस्थान के जयपुर, अलवर व सीकर आदि जिलों में है। बलुई दोमट मिट्टी में उगने वाली फसलों को 20—25 प्रतिशत उपज में

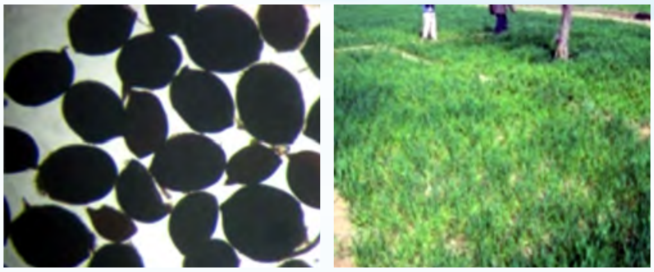

गेहूं में पुट्टी सूत्रकृमि व खेत में मौल्या रोग

हानि पहुंचाता है। यह गेहूं की फसल का प्रमुख हानिकारक कृमि है। इसका समय से रोकथाम के उपाय करने चाहिए।

फसल चक्र

- रबी के मौसम में किसान 2–3 वर्ष का फसल चक्र अपनाते हुए सरसों, मटर, सौंफ, चना, अलसी, व गाजर की फसल उगाकर सूत्रकृमि की संख्या को कम हानि पहुंचाने वाली सीमा में रखा जा सकता है।
- खेत में बीज बोने के साथ कार्बोफ्यूरान (फ्यूराडान) 3 जी को 33 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डालकर फसल को इस कृमि के द्वारा हानि से बचाया जा सकता है।
- खेत में उचित मात्रा में खाद डालकर मिट्टी की उर्वरा शक्ति बनाये रखें जिससे पौधों में रोग सहने की शक्ति बढ़ जायेगी।

गुर्दानुमा सूत्रकृमि (रोटीलेकुलस रेनीफॉर्मिस) : यह सूत्रकृमि फसल उपज में हानि करने के आधार पर दूसरे स्थान पर है। यह कृमि नगदी फसलें जैसे – कपास, दलहन, सोयाबीन, सूरजमुखी, सब्जियां व अरंडी आदि के उत्पादन को हानि पहुंचाता है। यह गर्म मौसम में अधिक सक्रिय रहता है और पूरे भारत में पाया जाता है। फसल में क्षति, खेत में कृमि की संख्या पर निर्भर करती है। यदि मिट्टी में कृमि की संख्या ज्यादा है तो फसल उत्पादन में ज्यादा हानि होगी। यह कृमि पौधों की जड़ों में आधे अन्दर और आधे बाहर रहकर जड़ों में पानी व लवण सोखने वाली कोशिकाओं को क्षति पहुंचाते हैं, इससे पौधों में खाद्य पदार्थ की कमी के लक्षण उत्पन्न होते हैं और पौधे मुरझाये से नजर आते हैं। पौधों में पीलापन, सूखापन, पत्तियां छोटी रहना व फूल व फलों का आकार छोटे रहना व पौधों में फुटाव कम होना आदि लक्षण पौधों में पानी व लवण की कमी को दर्शाते हैं। यह कृमि विपरीत परिस्थितियों में भी जीवित रह सकता है। इस सूत्रकृमि प्रबंधन के लिए भिन्न उपाय है।

फसल चक्र अपनाकर

- कृमि रोगी खेत में फसल चक्र अपनायें जैसे – प्याज, मिर्च, लहसून, गाजर व गोभी आदि फसलें लगाकर सूत्रकृमि की संख्या को कम कर सकते हैं।
- गर्मियों में खेत की 2–3 गहरी जुताई करने से सूत्रकृमि की संख्या को कम कर सकते हैं।

अरहर का कोष्टक/पुट्टी सूत्रकृमि (हैटेरोडेरा केजनेई) : अरहर की फसल में पुट्टी सूत्रकृमि का प्रकोप पाया जाता है। यह सूत्रकृमि अर्ध गर्म जलवायु में अधिक सक्रिय रहकर फसल पैदावार में हानि का प्रमुख कारक बन गया है। इस कृषि की विषम परिस्थितियों को सहने की क्षमता अधिक होती है। यह कृमि अधिक गर्मी व अधिक सर्दी में भी अपने आप को जीवित रखकर फसल पर परजीवी बना रहता है। अरहर की फसल 7–8 महीने में पक कर तैयार होती

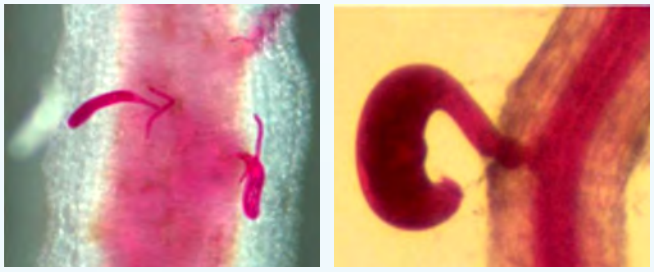

जड़ों पर रोटायलैक्यूलास रेनीफार्मिस

कोष्टक/पुट्टी सूत्रकृमि

है। जिस वजह से सूत्रकृमि की संख्या ज्यादा बढ़ जाती है। इसका असर फसल बढ़ोतरी व पैदावार पर पड़ता हैं यह कृमि अपना जीवन चक्र 20–25 दिन में पूरा करके संख्या बढ़ाते रहते हैं। यह सूत्रकृमि पौधों के पानी व लवण सोखने वाले उतकों को भी हानि पहुंचाते हैं जिससे फसल में पानी व लवण की कमी दिखाई देती है व फसल पीली व पौधे कमजोर तथा मुरझाये से लगते हैं। इस कृमि की फसल में अधिक हानि करने की क्षमता को ध्यान में रखकर ही सूत्रकृमि विरोधी नीतियों में फसल की प्रतिरोधकता पर ज्यादा जोर दिया है। सूत्रकृमि अवरोधक फसलों का फसल चक्र बनाकर उसमें सनई की फसल उगाकर कृमि की संख्या को आंशिक रूप से नियमित किया जा सकता है। हरी खाद के लिए सनई की फसल उगाने से सूत्रकृमि के नियंत्रण के साथ–साथ, खेत की मिट्टी की उर्वरा शक्ति भी बढ़ जाती है। मिर्च, लहसुन, प्याज, पालक व धनियां आदि फसलें भी इस सूत्रकृमि के लिए प्रतिरोधक फसलें हैं।

आज के जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में सूत्रकृमि संबंधित समस्या, विभिन्न फसलों में एक मुख्य कृमिरोग के रूप में उभर रही है। सूत्रकृमि मिट्टी में रहते हैं व सीधे आंखों से नहीं देखे जा सकने के कारण किसान इसे नजर अंदाज कर देते हैं। जिससे फसल पैदावार में लगातार हानि होती रहती है। आज के समय में आधुनिक कृषि व न्यूनतम कृषि में उन सभी मुख्य बिंदुओं को ध्यान में रखना होगा एवं किसी भी संवेदनशील सूत्रकृमि रोग की रोकथाम के लिए एक प्रभावी समेकित प्रणाली को अपनाना होगा जो सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरण के लिए भी लम्बे समय तक उपयोगी रहेगी।

कोई भी नई पद्धति अपनायें तो उसमें दूर दृष्टि होनी चाहिए अन्यथा उसका परिणाम विफलता की तरफ ले जा सकता है। सूत्रकृमि का जैविक/अजैविक तत्वों के साथ परस्पर संबंध के बारे में उचित जानकारी के उपरान्त, सूत्रकृमि नियत्रंण करने के एक आसान विकल्प को अपनाया जा सकता है। कुछ अच्छी कृषि पद्धति जैसेः–

- उचित जैविक खाद्य पदार्थ को खेतों में डालना।
- समय पर खेतों में फसल अवशेषों की सफाई कराना।
- अच्छे व स्वस्थ बीजों की बुवाई कराना।
- समय पर फसलों में निकाई–गुड़ाई कराना।
- सही समय पर फसलों में सिंचाई कराना।
- फसल बुवाई क्षेत्र के आधार पर कार्बनिक खाद व पोषक तत्वों को डालने का समेकित प्रबंधन करना चाहिये।

उपर्युक्त सभी उपाय करने से फसलों में सूत्रकृमि रोग व अन्य बीमारियों को कम किया जा सकता है और फसल उपज में समयानुसार वृद्धि होती है एवं खर्चा/लागत व आमदनी का अनुपात भी अच्छा रहता है।

फसलों में विभिन्न सूत्रकृमियों द्वारा रोग के लक्षण विभिन्न प्रकार के दिखाई देते हैं, जो निम्न हैंः–

- सूत्रकृमियों द्वारा क्षतिग्रस्त जडें मटमैले रंग की नजर आती है। क्षतिग्रस्त जड़ें मिट्टी से उचित मात्रा में पानी व लवण पदार्थों को ग्रहण नहीं कर पाती हैं, इसी कारण पौधों में इन पदार्थों की कमी होने के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। पौधे मुर्झाये से लगते हैं व पौधों में हरियाली कम हो जाती है व पौधे पीले दिखाई देने लगते हैं।
- पौधों में ये लक्षण नाईट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश की कमी जैसे होते हैं क्योंकि क्षतिग्रस्त पौधे इन्हें ग्रहण नहीं कर पाते है।
- पौधों में हरियाली कम हो जाने से प्रकाश संश्लेषण कम होता है इससे पौधों में खाद्य पदार्थों का बनना कम हो जाता है पत्तियां पीली पड़कर समय से पहले ही गिरने लग जाती है व पौधों की बढ़वार कम हो जाती है।
- फल, फूल व बालियां कम व छोटी रह जाती हैं व फल, फूल बगैर पके ही झड़ जाते हैं। सूत्रकृमियों की संख्या ज्यादा होने पर पौधे भी मर जाते हैं।
- सूत्रकृमि का फैलाव खेत में एक जैसा नहीं होता है। अर्थात, कही ज्यादा कही कम संख्या में सूत्रकृमि होते हैं इसी वजह से पौधों की बढ़ोतरी एक समान न रहकर जगह–जगह पौधे छोटे–बड़ें उगते हैं।

विविधा....

सस्य विज्ञान संभाग - एक परिचय

दिनेश कुमार, सीमा सेपट एवं अनिता कुमावत

सस्य विज्ञान संभाग

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

सस्य विज्ञान (एग्रोनॉमी) विषय मुख्य रूप से फसल उत्पादन तथा भूमि प्रबंधन से संबंधित है। पृथ्वी पर रहने वाले सभी जीव–जंतुओं की अनेक प्रकार की आवश्यकताएं विभिन्न फसलों द्वारा पूरी होती हैं। इसमें सबसे महत्वपूर्ण है खाद्य सुरक्षा जोकि मुख्य रूप से अनाज एवं दालों की पर्याप्त उपलब्धता पर निर्भर करती है। अतः खाद्य सुरक्षा को लगातार बनाए रखने के लिए विभिन्न खेत फसलों से अच्छा एवं सतत् उत्पादन लेना आवश्यक हो जाता है। इस दिशा में सस्य विज्ञान का ज्ञान एक अहम् भूमिका अदा करता है। अतः कृषि विज्ञान के अनेक विषयों में सस्य विज्ञान एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है क्योंकि इस विषय से संबंधित ज्ञान सीधे तौर पर किसानों एवं कृषि के लिए सीधे–सीधे उपयोगी होता है। देश के लगभग सभी कृषि विश्वविद्यालयों में इस विषय पर अनुसंधान एवं शिक्षण कार्य किया जा रहा है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली के अंतर्गत भी सस्य विज्ञान विषय पर काफी लंबे समय से अनुसंधान एवं अध्यापन कार्य किया जा रहा है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली के सस्य विज्ञान संभाग की उत्पत्ति का इतिहास वर्ष 1905 में इम्पीरियल एग्रीकल्चरल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूसा, बिहार की स्थापना के समय से जुडा है जब वहां फसल और पशु प्रजनन नाम से एक अनुभाग का शुभारंभ किया गया था। वर्ष 1923 में फसल और पशु प्रजनन अनुभाग से अलग होकर एक मुक्त सस्य विज्ञान संभाग की स्थापना की गई जिसका मुख्य उद्देश्य फार्म प्रबंधन, प्रशिक्षण तथा डिप्लोमा देना था। वर्ष 1936 में जब यह संस्थान नई दिल्ली स्थित अपने वर्तमान स्थान पर लाया गया तो इस संभाग ने अपने अनुसंधान कार्यक्रम का पुनर्गठन किया। आरंभ में कृषि स्नातकों के लिए एक वर्ष का प्रशिक्षण पाठ्यक्रम चलाया गया था जो वर्ष 1945 तक चलता रहा। वर्ष 1952 में गोपशु प्रजनन के कार्यक्रम को करनाल में स्थापित डेयरी फार्म में स्थानांतरित कर दिया गया। 1940 के दशक से लेकर 1950 के दशक तक विभिन्न संभाग बने जो इस संभाग से ही व्युत्पन्न हुए माने जाते हैं। इनमें से प्रमुख हैं, कृषि अभियांत्रिकी, कृषि प्रसार एवं सूक्ष्मजीव विज्ञान, आदि। इसके अतिरिक्त इस संभाग से आई.ए.एस.आर.आई.– नई दिल्ली, सी.आर.आई.डी.ए.–हैदराबाद, आई.आई.एफ.एस. आर.–मेरठ और एन.डी.आर.आई.–करनाल जैसे संस्थानों का भी उदय हुआ।

आधुनिक सस्य विज्ञान शिक्षा के उद्देश्य के लिए 'एसोसिएट आई.ए.आर.आई.' का द्विवार्षिक डिप्लोमा पाठ्यक्रम वर्ष 1946 में आरंभ किया गया जो वर्ष 1958 तक निरंतर चलता रहा और प्रत्याशियों को 'एसोसिएट आई.ए.आर.आई.' की उपाधियां प्रदान की गई। वर्ष 1947 से 1959 तक कुल 258 प्रत्याशियों को ये उपाधियां प्रदान की गई थी। जैसा कि विदित है कि वर्ष 1958 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान को मानद विश्वविद्यालय का दर्जा प्रदान किया गया और इसी वर्ष (1958) से इस संभाग में एम.एस.सी. व पी.एच.डी. की

उपाधियां दिए जाने के लिए स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम का भी शुभारंभ किया गया। वर्ष 1958 से 2016 के बीच कुल 288 छात्रों की एम.एस.सी. को तथा 495 छात्रों को पी.एच.डी. की उपाधियां प्रदान की गई।

संभाग के अधिदेश (मैंडेट्स) इस प्रकार हैं

- टिकाऊ आधार पर किसानों के लिए उपयुक्त सस्य–विज्ञानी प्रौद्योगिकी की नई संकल्पनाएं और दृष्टिकोण विकसित करके सस्य–विज्ञानी अनुसंधान में नेतृत्व प्रदान करना।
- प्रमुख फसल प्रणालियों के लिए टिकाऊ आधार पर उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने हेतु उचित फसल उत्पादन प्रौद्योगिकियों का विकास।
- रासायनिक उर्वरकों के संतुलित उपयोग, कार्बनिक खादों, फसल अपशिष्टों तथा जैव–उर्वरकों के पर्यावरणीय दृष्टि से ठोस और आर्थिक रूप से व्यवहारिक उपयोग की विधियों का विकास, ताकि अनाजों, दलहनी, तिलहनी तथा सब्जी फसलों की टिकाऊ उच्च उत्पादकता के लिए इन तकनीकों का उपयोग किया जा सके।

उपलब्धियां

सस्य विज्ञान संभाग ने अपने आरंभ के दिनों से लेकर अब तक अनेक उपलब्धियों की प्राप्ति की है। इस संभाग की कुछ महत्वपूर्ण उपलब्धियों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

1. फसलों की खेती

- ले–फार्मिंग की संकल्पना लागू की गई व उसे परिशुद्ध बनाया गया।
- बरसीम को पहली बार हरे चारे के रूप में प्रयोग के लिए सुझाया गया।
- सौर ताप को न्यूनतम करने और फसलों की अधिक से अधिक स्थापना के लिए उत्तर–दक्षिण दिशा में मेड़ें बनाने की संकल्पना सफलतापूर्वक विकसित की गई।
- चारा तथा लॉन में रोपी जाने वाली घासों की अनेक किस्में विकसित की गईं तथा विभिन्न घासों के अंतरराष्ट्रीय संकलन की नर्सरी का रखरखाव किया गया।
- बौने गेहूं की खेती की प्रौद्योगिकी ने पिछली शताब्दी के छठे दशक के मध्य में हरित क्रान्ति में उल्लेखनीय योगदान दिया।
- चावल, गेहूं, मक्का, बाजरा, फलीदार फसलों, तिलहनी फसलों व सब्जी वाली फसलों की उच्च उपजशील किस्मों का सस्य विज्ञान विकसित किया गया।
- उत्तरी भारत में बसंत के मौसम में सूरजमुखी की खेती का सस्य विज्ञान विकसित किया गया।
- रबी मक्का की संकल्पना विकसित की गई तथा उसकी जांच उत्तर भारतीय स्थितियों में की गई।
- उत्तर भारत के लिए खरीफ में प्याज की खेती की सिफारिश की गई।
- आलू में रोगों को कम करने में पोटाश की भूमिका स्थापित की गई।
- उत्तर भारत की स्थितियों के लिए आलू के वास्तविक बीज का सस्य विज्ञान विकसित किया गया।
- अनाज–आधारित फसल प्रणालियों में लोबिया और मूंग जैसी द्वि–उद्देशीय दलहनी फसलों को उगाने की प्रौद्योगिकी पर बल दिया गया।
- संकर धान के सस्य विज्ञान को परिशुद्ध किया गया और 9 टन/हैक्टर तक उपज प्राप्त की गई।
- कपास की फसल के बाद गेहूं और सरसों की रोपाई की प्रौद्योगिकी विकसित की गई।
- पछेती बुवाई वाली स्थितियों के अंतर्गत बाजरा की रोपाई की उन्नत सस्य तकनीक का विकास किया गया।
- धान–गेहूं प्रणाली में मूंग को सम्मिलित करने से धान–गेहूं प्रणाली की तुलना में दाने की उपज, मृदा उर्वरता व लाभ में वृद्धि होती हैं।

2. बारानी सस्य विज्ञान

- फसल कैफेटेरिया, फसल कार्बनिक और अकार्बनिक उर्वरकों को उचित स्थान पर डालना, पलवारों के उपयोग और उत्स्वेदन रोकने वाली युक्तियों की संकल्पना विकसित की गई।

- सरसों और गेहूं की बुवाई के लिए ईष्टतम् तापमान की संकल्पना सृजित की गई। अक्तूबर के मध्य में लगभग 26–27 डिग्री सेल्सियस औसत दैनिक तापमान पर सरसों की बुवाई करना अनुकूलतम पाया गया।
- सरसों की पूसा बोल्ड किस्म को बारानी क्षेत्रों के लिए पहचाना गया और यह किस्म औपचारिक रूप से जारी किए जाने से पहले ही किसानों के बीच लोकप्रिय हो गई।
- गेहूं और चने की फसलों में जलीय–बुवाई प्रौद्योगिकी से फसलों में पौधों की संख्या, नाइट्रोजन उपयोग की दक्षता में वृद्धि हुई और जल व पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता बढ़ी जिससे इन फसलों की उच्च उपज प्राप्त की जा सकी।
- ग्रीष्म ऋतु में जुताई, खेतों में मेड़ बनाना और कार्बनिक खाद देना जैसी सुधरी हुई नमी संरक्षण तकनीकों का सुझाव विभिन्न फसलों के लिए दिया गया।
- बारानी क्षेत्रों के लिए हरी खाद प्रौद्योगिकी विकसित की गई जिसमें मध्य अगस्त तक अगेती समाहन के लिए (बढ़वार के 30 दिनों तक) हरी खाद का उपयोग किया जाता है तथा ढैंचा की उच्च बीज दर (45 कि.ग्रा./है.) रखते हुए बुवाई की जाती है।
- एक्वा बुवाई (बीज के साथ जल डालना) विभिन्न शुष्क क्षेत्रों की फसलों जैसे सरसों, गेहूं तथा मसूर की अच्छी बढ़वार तथा अधिक उत्पादन में सहायक है। एक्वा बुवाई तकनीक रबी मौसम की फसलों के लिए राजस्थान, हरियाणा, पंजाब एवं उत्तर प्रदेश के असिंचित क्षेत्रों के लिए उपयोगी है।

3. जल प्रबंधन

- क्रांतिक शरीर क्रिया–विज्ञानी अवस्थाओं के आधार पर सिंचाई अनुसूचीकरण की संकल्पना विकसित की गई।
- बौने गेहूं में चंदेरी जड़ें निकलने की अवस्था में पहली सिंचाई करने पर बल दिया गया।
- ड्रम कल्चर तकनीक द्वारा चावल में जल निकासी की आवश्यकता के आकलन की संकल्पना विकसित की गई। इससे उपज में कमी लाए बिना फसल की पानी में खड़े रहने की गहराई 10 सें.मी. से घटाकर 3–5 सें.मी. रह गई और इस प्रकार जल के उपयोग में किफायत हुई।
- आयतन के आधार पर सिंचाई की अनुसूची हेतु संकन स्क्रीन इवेपोरीमीटर की संकल्पना सृजित व विकसित की गई। इससे आई.डब्ल्यू. : सी.पी.ई. अनुपात की संकल्पना विकसित हुई।
- मृदा में नमी का पता लगाने के लिए टेन्सियोमीटर तथा जिप्सम ब्लॉक जैसी विभिन्न युक्तियां विकसित की गईं तथा उपयुक्तता के लिए उनका परीक्षण किया गया।
- विभिन्नि फसलों में सुधरी हुई जुताई व बुवाई की विधियों के माध्यम से सिंचाई जल के उपयोग की दक्षता बढ़ाने के लिए प्रौद्योगिकियां विकसित की गई।
- कपास की रोपाई – मानसून के शूरू होने पर कपास की रोपाई करने से 4–5 सिंचाइयों की बचत, 20–25 प्रतिशत बीज की बचत, फसल का बेहतर जमाव व 10–12 प्रतिशत उत्पादन की लागत में कमी आती हैं। इस तरह से 15–20 प्रतिशत अधिक शुद्ध आय प्राप्त होती है।

4. पोषक तत्व प्रबंधन

- नाइट्रोजन स्थिर करने की क्षमता बढ़ाने में बरसीम तथा अन्य फलीदार फसलों में फॉस्फेट उर्वरक डालने का महत्व सिद्ध किया गया।
- फसल उत्पादकता बढ़ाने तथा मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए हरी खाद के महत्व को सिद्ध किया गया।
- उर्वरक संबंधी साधारण परीक्षण आरंभ किए गए जिनसे बाद में जटिल उर्वरक परीक्षणों को तैयार किया गया। इसके परिणामस्वरूप अखिल भारतीय समन्वित सस्य–विज्ञानी अनुसंधान परियोजना का सृजन हुआ।
- ऊतक परीक्षण तथा पोषक तत्वों को पौधों की पत्तियों पर डालने की तकनीकें विकसित की गई।
- फलीदार फसलों पर आधारित फसल प्रणाली में उर्वरकों की खुराक कम करके नाइट्रोजन की बचत का मात्रात्मक आकलन किया गया।

- ट्रेसर अध्ययनों का उपयोग करके बहु–फसलीय प्रणालियों में नाइट्रोजन और फॉस्फोरस उपयोग की दक्षता का मूल्यांकन किया गया तथा इन उर्वरकों की मात्रा का निर्धारण किया गया।
- ^{15}N तथा ^{32}P आइसोटोपों के उपयोग के साथ उर्वरक उपयोग की दक्षता से संबंधित अध्ययनों के उल्लेखनीय परिणाम प्राप्त हुए।
- यूरिया उर्वरक के लेपन हेतु नीम के संरूप विकसित किए गए। पूसा नीम गोल्डन यूरिया तथा नीम बिटर लेपित यूरिया से सिंचित धान में नाइट्रोजन उपयोग की दक्षता एवं दाने की उत्पादकता में वृद्धि हुई।
- यूरिया पर नीम तेल के लेपन की सही मात्रा का निर्धारण किया गया और इसको आधार मानकर भारत सरकार ने नीम लेपित यूरिया के मानकों का निर्धारण किया।
- साधारण यूरिया की तुलना में 0.1 प्रतिशत नीम लेपित यूरिया के प्रयोग से धान में दाने की उपज, नाइट्रोजन उपयोग– क्षमता व अतिरिक्त आय में बढ़ोतरी हुई।
- खरपतवार नियंत्रण, पोषक तत्वों की बचत और मृदा उर्वरता को बनाए रखने के लिए ल्यूसिना (सुबबूल) की हरी पत्तियों की खाद के प्रयोग की अनुशंसा की गई।
- फलीदार दलहनी एवं तिलहनी फसलों की उच्च उत्पादकता के लिए राइजोबियम, अनाज फसलों में एजोटोबैक्टर/एजोस्पिरिलम, फॉस्फोरस को घुलनशील बनाने वाले जैव उर्वरकों के उपयोग पर बल दिया गया।
- अनाज, चारे या हरी खाद के लिए फलीदार फसलों के माध्यम से होने वाले नाइट्रोजन के योगदान का पता विभिन्न अनाज आधारित फसल प्रणालियों में लगाया गया।
- नाइट्रोजन निरोधक तथा नाइट्रोजन को धीरे विमोचित करने वाले उर्वरक विकसित करके उनकी जांच की गई।
- चावल–गेहूं प्रणाली में समेकित पोषक तत्व प्रबंध के विशेष संदर्भ में क्रमबद्ध कार्य आरंभ किया गया।
- विभिन्न फसल प्रणालियों में फसल अवशेषों के पुनः चक्रण व प्रबंध, कार्बनिक खादों और जैव उर्वरकों के उपयोग की अवधारणा सृजित की गई तथा उर्वरकों का उपयोग ईष्टतम बनाने के लिए इसका परीक्षण किया गया।
- मुल्तानी मिट्टी को वाहक बनाकर नीली–हरी काई/शैवाल को धान में प्रयोग करने 20–40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की बचत हुई।
- सोयाबीन की फसल में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश की अनुशंसित खुराकों के साथ घूरे की खाद तथा जस्ते के उपयोग से इस फसल की उपज क्षमता में वृद्धि हुई।
- निम्न श्रेणी के शैल फॉस्फेट के प्रत्यक्ष उपयोग की प्रौद्योगिकियां विकसित की गईं।
- यूरिया के जस्ता समृद्धिकरण के लिए जिंक सल्फेट बेहतर स्त्रोत पाया गया। 1.50 प्रतिशत जस्ता–समृद्ध यूरिया (जिंक सल्फेट) के उपयोग से धान से अधिक उपज एवं लाभ प्राप्त किया जा सकता है।
- साधारण यूरिया की तुलना में 10 प्रतिशत जिप्सम–समृद्ध यूरिया के प्रयोग से धान की उपज में 16–18 प्रतिशत और नाइट्रोजन उपयोग–क्षमता में 25 प्रतिशत वृद्धि पाई गई।
- मक्का में बुवाई के समय 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन व बाद में खड़ी फसल में पर्ण–स्पेड मान $\leq$37.5 पर 20–30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/है. देने से मक्का की अधिक उपज (5.2 टन/है.) तथा 30–45 कि.ग्रा./है. तक नाइट्रोजन की बचत की जा सकती है।
- मृदा जाँच के आधार पर नाइट्रोजन प्रयोग की तुलना में पर्ण–स्पेड मान $\leq$42 पर नाइट्रोजन प्रयोग से गेहूं में 8–9 प्रतिशत अधिक दाने की उपज एवं 20 कि.ग्रा./है. नाइट्रोजन की बचत होती है।

5. संरक्षण कृषि एवं खरपतवार प्रबंधन

- फसलों की जुताई संबंधी आवश्यकता तथा न्यूनतम जुताई की संकल्पना पहली बार विकसित की गई।

- विभिन्न फसलों में पोषक तत्व में सुधार और जल उपयोग की दक्षता बढ़ाने के लिए कूंड़ सिंचित उठी हुई क्यारी प्रणाली विकसित की गई। इस प्रणाली से मसूर, मटर व मेथी की फसलों की व्यावहारिकता का पता लगाया गया।
- स्थानिक जल भराव की स्थितियों के अंतर्गत उठी हुई क्यारियों में फसलें उगाने की संकल्पना विकसित की गई। उच्च वर्षा वाले वर्षों में सोयाबीन की फसल में ईष्टतम पौधों की संख्या व उत्पा दकता प्राप्त करने के लिए क्यारी में रोपाई की तकनीक विकसित की गई।
- रासायनिक खरपतवार नियंत्रण की संकल्पना खोजी गई। गेहूं जैसी फसलों में खरपतवार नियंत्रण के लिए पहली बार 2,4–डी का उपयोग किया गया।
- व्यापक श्रेणी के शाकनाशी, मैथाबेन्जथियाजुरान का उपयोग आरंभ किया गया तथा गेहूं की फसल में फैलेरिस माइनर, जंगली जई तथा चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के विरुद्ध इसके प्रभाव का मूल्यांकन किया गया।
- लागत को न्यूनतम करने तथा मृदा में अपशिष्ट की समस्या से निपटने के लिए फसलों की कतारों में शाकनाशियों के पट्टियों में उपयोग की संकल्पना विकसित की गई।
- मैट्रीब्यूजिन तथा सोडियम क्लोराइड के छिड़काव से पार्थिनियम (गाजर घास) खरपतवार का नियंत्रण किया गया।
- प्रभावी खरपतवार नियंत्रण और पोषक तत्वों की बचत के लिए स्टेल बीज–क्यारी प्रणाली विकसित की गई।
- मक्का पर सिमाजिन की कम खुराकों के अनुरूपण प्रभाव को सिद्ध किया गया।
- खरपतवारों के नियंत्रण के लिए मृदा सौरीकरण (खेतों को धूप में खुला छोड़ना) की संकल्पना विकसित की गई।
- सभी प्रमुख फसलों तथा फसल प्रणालियों के लिए समेकित खरपतवार प्रबंध के उपाय विकसित किए गए।
- सीधी बुवाई वाले धान में दक्ष खरपतवार प्रबंधन के लिए अंकुरण–पूर्व प्रेटिलाक्लोर (750 ग्राम/है.) व बुवाई के 30 दिन बाद साइलोफोप–ब्यूटाईल (60 ग्राम/है.) के अनुक्रमिक छिड़काव से फसल में पूर्ण रूप से खरपतवार नियन्त्रण व अधिकत उपज व शुद्ध आय की प्राप्ति की गई।
- मक्का में खरपतवार प्रबंधन के लिए अंकुरण–पूर्ण एट्राजिन (500 ग्राम/है.) एवं पेन्डीमिथेलीन (750 ग्राम/है.) को एक ही टैंक में मिश्रित करके छिड़कने से खरपतवार प्रबंधन एवं उचित संसाधन उपयोग दक्षता प्राप्त होती है।
- मक्का में ढेंचे की भूरी खाद का प्रयोगः मक्का की फसल के साथ–साथ ढ़ेंचे की बुवाई 15 किलो/है. की दर व 2, 4–डी (0.5 कि.ग्रा./है.) का बुवाई के 25 दिन बाद छिड़काव करने से अच्छा खरपतवार नियन्त्रण होता है।
- सोयाबीन, सीधी बुवाई किया धान, मक्का, अरहर, कपास, गेहूं, चने और सरसों के लिए शून्य जुताई लाभदायक पाई गई। शून्य जुताई से उत्पादन की लागत में 2000 रुपये/हैक्टर और डीजल की 60 प्रतिशत तक बचत पाई गई।
- धान–गेहूं फसल प्रणाली के लिए संरक्षण कृषि – मूंग अवशेष–सीधी बुवाई किया धान – धान अवशेष–शून्य जुताई गेहूं – ग्रीष्मकालीन मूंग प्रणाली में अधिक फसल उत्पादकता व शुद्ध लाभ परंपरागत रोपित धान – गेहूं प्रणाली की अपेक्षा प्राप्त किया जा सकता है।
- मक्का–गेहूं और अरहर–गेहूं की अपेक्षा कपास–गेहूं प्रणाली से 1.2 से 1.5 गुणा अधिक फसल उत्पादकता प्राप्त हुई।

- शून्य जुताई में, समतल क्यारी में बुवाई की अपेक्षा उठी हुई मेढ़ पर फसल अवशेष के साथ करने से अधिक फसल उत्पादकता प्राप्त हुई।

6. फसल एवं कृषि प्रणाली

- स्थानिक और क्षेत्रीय संदर्भ में 400 प्रतिशत गहनतायुक्त रिले फसल प्रणाली की संकल्पना तैयार की गई (मक्का–आलू–गेहूं–मूंग)।
- सफल बहु–फसली प्रणाली के लिए मूंग की पूसा बैसाखी किस्म को रिले फसल प्रणाली का एक महत्वपूर्ण घटक माना गया।
- बहु–मंजिली फसल प्रणाली की संकल्पना सृजित की गई।
- सदियों पुरानी मिश्रित फसल प्रणाली को जुड़वा प्रकार रोपाई प्रणाली को शामिल करके सुधारा गया। इस प्रणाली में अल्पावधि में तैयार होने वाली फलीदार व तिलहनी फसलों को बाजरा, ज्वार तथा मक्का जैसी अनाज वाली फसलों में अन्तःफसल के रूप में उगाया गया।
- बारानी क्षेत्रों के लिए मक्का, मूंग, गेहूं, मसूर, सरसों, चना आदि जैसी उन्नत अन्तःफसल प्रणालियों को अपनाने का सुझाव दिया गया।
- सिंचित क्षेत्रों के लिए खरीफ मक्का, मूंग, रबी मक्का, पालक, मूंगफली, सूरजमुखी, सौंफ, मेथी जैसी अन्तर फसल प्रणालियां अपनाने का सुझाव दिया गया।

नाईट्रोजन की जांच के लिए संभाग की के.जे.एल. लैब

- बैंगन–सौंफ फसल प्रणाली को सर्वाधिक लाभदायक पाया गया।
- चावल–गेहूं फसल प्रणाली का चावल–गेहूं–मूंग, चावल–आलू–मूंग या चावल–बरसीम फसल प्रणालियों के रूप में विविधीकरण सर्वाधिक लाभदायक और टिकाऊ पाया गया।
- फसल प्रणालियों के विविधीकरण और मृदा की उर्वरता में सुधार के लिए सोयाबीन की अनुशंसा की गई।

7. उन्नत यंत्रों का विकास

- प्याज का यंत्र
- बैलों से चलने वाला उर्वरक व बीज रोपाई यंत्र
- सरन मिनी पाइप रोपाई यंत्र
- सरन निराई–गुड़ाई यंत्र

संभागीय उत्कृष्ट सेवा–सुविधाएं

1. नवीनतम उपकरणों से सुसज्जित प्रयोगशालाएं
2. बायोमास उपयोग इकाई
3. बृहद भंडार गृह
4. कंप्यूटर सुविधा
5. पी.जी. लैब

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना - किसानों का रक्षा कवच

मुरलीधर मीना[1], हरनारायण मीना[1], सुरेन्द्र सिंह[2]

[1]मूंगफली अनुसंधान निदेशालय, जूनागढ़, गुजरात

[2]सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग, भा.कृ.अ.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

प्राकृतिक आपदाएं कृषि में निवेश को नष्ट कर किसानों का जोखिम बढ़ा देती हैं। कृषि में हानि को कम और जोखिम को नियंत्रित करने के लिए कृषि बीमा बहुत महत्वपूर्ण योजना है। देश में वर्तमान मे कुल फसली क्षेत्र का केवल 23 प्रतिशत क्षेत्र और कुल किसानों का मात्र 10 प्रतिशत किसानों ने कृषि बीमा का विकल्प चुना है। भारत सरकार ने कृषि बीमा का विस्तार करने के लिए 13 जनवरी, 2016 को प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (PMSBY) नामक एक नए कार्यक्रम का शुभारंभ किया है। इसकी परिकल्पना 50 प्रतिशत क्षेत्र को कवर करने की है। यह योजना किसानों के लिए पुरानी योजनाओं की तुलना में अधिक लाभपद्र और अनुकूल है। इसमें प्रीमियम खाद्यान्न और तिलहन के लिए अधिकतम 2 प्रतिशत और बागवानी/कपास की फसलों के लिए 5 प्रतिशत तक रखा गया है। दावों को शीघ्र निपटाने के लिए सरकार आधुनिक तकनीक का प्रयोग करेगी। किसान को बिना किसी कटौती के पूर्ण बीमित राशि के खिलाफ दावा मिलेगा जो किसानों के नुकसान का समयबद्ध भुगतान कर उसके आर्थिक संकट को दूर करने में लाभकारी होगा। इसलिए किसान स्तर पर प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना को अपनाने के लिए अधिक जोर दिया जाना चाहिए।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के उद्देश्य

इस योजना का मुख्य उद्देश्य कृषि में सतत् उत्पादन का समर्थन करना है, जैसे :

1. अप्रत्याशित घटनाओं से उत्पन्न होने वाली फसल हानि/क्षति पीड़ित किसानों को वित्तीय सहायता प्रदान करना।
2. खेती में किसानों की निरंतरता सुनिश्चित करने के लिए उनकी आय में स्थिरता प्रदान करना।
3. किसानों को नवीन और आधुनिक कृषि पद्धतियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना।
4. कृषि क्षेत्र में ऋण के प्रवाह को सुनिश्चित करना जो उत्पादन जोखिम से किसानों की रक्षा करने के अलावा खाद्य सुरक्षा, फसल विविधीकरण और बढ़ाने के विकास और कृषि क्षेत्र की प्रतिस्पर्धा के लिए योगदान देगा।

किसानों की पात्रता

अधिसूचित क्षेत्रों में अधिसूचित फसल उगाने वाले बंटाईदार और किरायेदार किसानों सहित सभी किसान बीमे के लिए पात्र हैं। गैर ऋणी किसानों को दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए राज्य में प्रचलित भूमि अभिलेखों जैसे अधिकार के रिकॉर्ड (आरओआर), भूमि कब्जे का प्रमाणपत्र (एलपीसी) आदि की आवश्यकता होती हैं। बंटाईदार और किरायेदार किसानों के मामले में साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए संबंधित राज्य सरकार द्वारा लागू अनुबंध/करार विवरण/अन्य अधिसूचित दस्तावेजों की आवश्यकता होती हैं।

व्याप्ति (कवरेज) व कार्यविधि : ऋणी किसानों (अनिवार्य) गैर ऋणी किसानों (वैकल्पिक)

अधिसूचित फसलों के कृषि कार्यों के लिये वित्तीय संस्थाओं से ऋण का लाभ उठाने वाले सभी किसानों को अनिवार्य रूप से शामिल किया जाएगा। अतः सभी ऋणी किसानों का कवर अनिवार्य होगा। योजना गैर ऋणी किसानों के लिए वैकल्पिक है, बीमा का लाभ उठाने के इच्छुक गैर ऋणी किसान योजना का प्रस्ताव फार्म भरकर अपेक्षित बीमा प्रीमियम राशि के साथ नजदीकी बैंक शाखा या बीमा कंपनी की अधिकृत चौनल पार्टनर या बीमा बिचौलियों को प्रस्तुत कर सकते हैं। इस तरह के मामलों के लिए गैर ऋणी किसानों का बैंक में खाता होना आवश्यक है। गैर–ऋणी किसान अपेक्षित प्रीमियम के

साथ बीमा कंपनी को व्यक्तिगत रूप/पोस्ट के माध्यम से भी बीमा प्रस्ताव पेश कर सकते हैं अथवा बीमा कंपनी के ऑन लाइन पोर्टल के माध्यम या सरकार द्वारा डिजाइन फसल बीमा पोर्टल से भी बीमा लाभ ले सकते हैं। गैर ऋणी किसानों के द्वारा व्यक्तिगत रूप से या बीमा कंपनी फसल बीमा पोर्टल के माध्यम से प्रस्ताव प्रस्तुत करने के लिए यह अनिवार्य है कि सबूत के रूप में आवश्यक दस्तावेजी (प्रीमियम के प्रेषण के साथ आवेदन की प्रिंट कॉपी) साक्ष्य की तरह प्रस्तुत करना होगा। अगर प्रस्ताव प्रपत्र में प्रस्तुत तथ्यों सामग्री को गलत पाया जाता है तो कृषक प्रीमियम और दावा पेश करने के लिए पात्र नहीं होंगे। अधूरा प्रस्ताव प्रपत्र, आवश्यक दस्तावेजी या बीमा प्रीमियम सबूत साथ नहीं होने की स्थिति में प्रस्ताव प्राप्त होने के एक माह के भीतर मामले में बीमा कंपनियों को बीमा प्रस्ताव को स्वीकार करने या अस्वीकार करने का अधिकार होगा।

ऋणी किसान ऋण आवेदन पत्र में प्रस्तुत मूल बीमित फसल को भी बदल सकते हैं, लेकिन इस तरह के बदलाव के लिए अग्रिम में संबंधित बैंक शाखा को लिखित रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए ताकि उनके प्रस्तावित फसलों का बीमा किया जा सके। यदि गैर ऋणी किसान किसी भी कारण से पूर्वयोजन फसल मे परिवर्तन करता है तो बीमा खरीदने की आखिरी तारीख से कम से कम 30 दिन के भीतर वित्तीय संस्था/चौनल पार्टनर/बीमा मध्यस्थ के माध्यम से या सीधे बीमा कंपनी को देय प्रीमियम में अंतर के साथ सूचना देनी होगी।

PMSBY योजना के तहत अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/महिला किसानों की अधिकतम कवरेज सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रयास किया गया है। बजट आवंटन और उपयोग इन क्षेत्रों में महिलाओं के साथ–साथ अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/सामान्य भूमि जोत के अनुपात के तहत किया जायेगा। पंचायत राज संस्थाओं को बीमा योजना के कार्यान्वयन के विभिन्न चरणों विशेष रूप से विस्तार और किसानों के बीच जागरूकता पैदा करने, फसलों की पहचान और फीडबैक प्राप्त करने, बुवाई, रोपण जोखिम दावे का आकलन, स्थानीय खतरों, फसल कटाई के बाद क्षति और दावों आदि को अग्रिम भुगतान के लिए शामिल किया जा सकता है।

फसलों की कवरेज

इस योजना के अंतर्गत खाद्य फसलें (अनाज, बाजरा और दालें), तिलहन फसलें और वार्षिक वाणिज्यिक/बागवानी फसलें शामिल हैं।

जोखिम कवरेज

इस योजना के तहत निम्नलिखित जोखिम कवर हैं :

क. बुवाई/रोपण जोखिम

वर्षा या प्रतिकूल मौसमी परिस्थितियों के कारण बुवाई/रोपण नहीं कर पाने या किसान फसलों की प्रत्यारोपण की स्थिति में नहीं हैं, तो वें कारण फसल का नुकसान कवर का पात्र है। यदि अधिसूचित फसल के बुवाई क्षेत्र का 75 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र प्रारंभिक चरण में किसी प्रतिकूल मौसमी परिस्थितियों के कारण बिना बुवाई रह जाता है तो पूरा क्षेत्र कवर का पात्र है। वह किसान इस कवर के तहत वित्तीय सहायता के लिए पात्र होगा जो राज्य सरकार द्वारा अधिसूचना लागू करने से पहले प्रीमियम भुगतान कर चुके हैं या उनके खाते से प्रीमियम डेविट कर दिया गया है। नियमों के अनुसार इस कवर के लिए सामान्य बुवाई प्रक्रिया से पहले योजना की अधिसूचना जारी होनी चाहिए और बैंकों द्वारा बीमा कंपनी को बीमा कवरेज के विवरण की पूरी जानकारी होनी चाहिए। आपदा की अधिसूचना से पहले ऋण की मंजूरी या संवितरण मात्र किसान को दावे के लिए पात्र नहीं मानता। इस कवर के तहत भुगतान बीमित राशि का 25 प्रतिशत तक ही सीमित है और आगे बीमा कवर समाप्त हो जाएगा। फसल क्षेत्र मौसम के अंत में उपज आधारित दावे के पात्र नहीं होगा। सरकार द्वारा प्रीमियम सब्सिडी हिस्सेदारी की प्राप्ति की दशा में बीमा कंपनी को राज्य के आदेश के 30 दिन के भीतर दावे को चुकाना होगा।

उदाहरणार्थः माना जूनागढ़ जिले में 100 मूंगफली बीमा इकाइयां हैं जिनमें प्रति हेक्टेयर बीमा राशि 20,000 रुपये है।

फसल के मौसम की शुरुआत में सूखा पड़ने के कारण 50 बीमा इकाइयों के 80 प्रतिशत क्षेत्र में मूंगफली की फसल नहीं बोई जा सकी। इन 50 बीमा इकाइयों जिनमें 75 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र में मूंगफली की बुवाई नहीं की जा सकी है भुगतान के प्रावधान के रूप में बीमित राशि 20,000 रुपये गुणा 25 प्रतिशत में 5000 प्रति हेक्टेयर लाभ देय होगा।

ख. खडी फसल (बुवाई से कटाई तक)

कीट और रोग, सूखा, बाढ़, सैलाब, भूस्खलन, प्राकृतिक आग और बिजली, तूफान, ओले, चक्रवात, आंधी, तूफान और बवंडर आदि प्राकृतिक आपदाओं के कारण उपज के नुकसान को कवर करने के लिए व्यापक जोखिम बीमा प्रदान की जाती है।

ग. फसल कटाई के बाद

फसल जिन्हें कटाई के बाद सुखने के लिए खेत में छोड़ा जाता है, कटाई से दो सप्ताह (14 दिन) की अधिकतम अवधि के लिए कवरेज उपलब्ध है। सभी बीमित किसानों के लिए खेत इकाई के स्तर पर निर्दिष्ट खतरों से क्षतिग्रस्त सभी प्रभावित फसलों के लिए उपलब्ध है। चक्रवात की घटना, चक्रवाती बारिश और बेमौसम बारिश की दशा में अलग–अलग भूखंडों के आधार पर उपज हानि के आकलन का प्रस्ताव है।

उदाहरणार्थ

क) एक फसल के लिए बीमित राशि = 50,000 रु.

ख) बीमा इकाई में प्रभावित क्षेत्र = 80 प्रतिशत (नमूना सर्वेक्षण के लिए पात्र)

ग) प्रभावित क्षेत्र के बीमा खेतों में जोखिम के कारण हानि मूल्यांकन = 50 प्रतिशत

घ) कटाई उपरांत नुकसान (50 प्रतिशत) तहत देय दावा = 50,000 रुपये × 50 प्रतिशत = 25,000 रु.

ई) मौसम के अंत में उपज में कमी = 60 प्रतिशत

च) बीमा इकाई स्तर पर 'क्षेत्र' दृष्टिकोण के आधार पर लगाया गया दावा अनुमान = 50,000 × 60 प्रतिशत = 30,000 रु. मौसम के अंत में शेष देय राशि = 30,000 – 25,000 = 5000 रु.

हानि और दावों की रिपोर्ट करने का समय, विधि और नुकसान आकलन की प्रक्रिया

बीमित किसान को नुकसान की तत्काल और विस्तृत जानकारी सर्वेक्षण संख्या, बीमा फसल और प्रभावित रकबा का विवरण आदी प्रीमियम भुगतान सत्यापन सहित अगले 48 घंटों संबंधित बैंक में सूचना देनी होगी। सूचना सीधी बीमा कंपनी, स्थानीय कृषि विभाग सरकार/जिला अधिकारियों को भी दी जा सकती है। बैंक नुकसान की जानकारी बीमा कंपनी को ही भेजने से पहले बीमित फसल, बीमा राशि, प्रीमियम डेबिट और डेबिट की तारीख के विवरण की पुष्टि करेंगे। दावों के भुगतान के लिए विधिवत भरा गया दावा प्रपत्र सभी प्रासंगिक दस्तावेजों के साथ अपेक्षित है। जानकारी के प्राप्त होने से 48 घंटों के भीतर नुकसान के आकलन के लिए बीमा कंपनी द्वारा नुकसान मूल्यांकनकर्ताओं को नियुक्त किया जाएगा जो अगले 10 दिनों के भीतर नुकसान के आकलन को पूरा करेंगे। यदि अधिसूचित बीमा इकाई में अधिसूचित फसल के तहत प्रभावित क्षेत्र कुल बीमित क्षेत्र के 25 प्रतिशत से अधिक है तो सभी पात्र किसानों को वित्तीय सहायता के पात्र समझा जाएगा। नुकसान के प्रतिशत का आकलन बीमा कंपनी द्वारा प्रभावित क्षेत्र मे नमूना सर्वेक्षण के आधार पर अपेक्षित किया जाएगा। जब प्रभावित क्षेत्र अधिसूचित बीमा इकाई में कुल बीमित क्षेत्र के 25 प्रतिशत तक ही सीमित है तो पात्र किसानों के नुकसान का मूल्यांकन व्यक्तिगत रूप से किया जाएगा। बीमा कंपनी को नुकसान सर्वेक्षण रिपोर्ट प्राप्त होने के 30 दिनों के भीतर दावा चुकाना होगा।

स्थानीय आपदाएं

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना अधिसूचित क्षेत्र में स्थानीय जोखिम की घटना जैसे मूसलाधार बारिश, भूस्खलन से उत्पन्न हानि/क्षति के लिए कवरेज उपलब्ध है। प्रभावित अधिसूचित इकाई या एक हिस्से में स्थानीय खतरों/आपदाओं अर्थात् भूस्खलन, मूसलधार बारिश, भूस्खलन, ओले और बाढ़ की वजह से होने वाले फसल के नुकसान की दशा में व्यक्तिगत खेत स्तर पर सभी बीमित किसानों को कृषि बीमा कवर प्रदान करती है। स्थानीय आपदाओं की सूचना किसान द्वारा

48 घंटे के भीतर सीधे बीमा कंपनी, संबंधित बैंक, स्थानीय कृषि विभाग, सरकार/जिला अधिकारियों को दी जा सकती है। दावों के भुगतान के लिए विधिवत भरा दावा प्रपत्र सभी प्रासंगिक दस्तावेजों के साथ अपेक्षित है। घटना और घटना की गंभीरता पुष्टि के लिए स्थानीय समाचार पत्र की कटिंग, मोबाइल फोटो अथवा अन्य किसी माध्यम से फसल नुकसान का सबूत पेश किया जा सकता है। जानकारी के प्राप्त होने से 48 घंटे के भीतर नुकसान निर्धारक की नियुक्ति, 10 दिनों के भीतर नुकसान के आकलन और अगले 15 दिनों में दावों का निपटान पूरा कर लिया जाएगा। फसल कटाई के बाद नुकसान और स्थानीय जोखिम की वजह से फसल को नुकसान से उत्पन्न होने वाले दावों के लिए, क्षति का आकलन व्यक्तिगत खेत आधार पर किया जाएगा।

अपवर्जन

युद्ध और परमाणु जोखिम, दुर्भावनापूर्ण क्षति और अन्य रोकने योग्य जोखिम से उत्पन्न होने वाले नुकसान को बीमा कवरेज से बाहर रखा गया है।

क्षतिपूर्ति के स्तर, औसत उपज, निर्दिष्ट उपज, बीमित राशि और प्रीमियम दरें

सभी फसलों के लिए क्षतिपूर्ति के तीन स्तर 70, 80 और 90 प्रतिशत कम, मध्यम और उच्च निर्धारित किए गए हैं। राज्य स्तरीय फसल बीमा समन्वय समिति, बीमा कंपनियों के साथ विचार–विमर्श करके अधिसूचित फसलों और क्षेत्रों, उप–जिला या जिला स्तर के लिए पर क्षतिपूर्ति के स्तर को मंजूरी देती है। अधिसूचित फसल की औसत उपज बीमा इकाई में पिछले सात वर्षों की औसत उपज (दो घोषित आपदा साल को छोड़कर) होगी। अधिसूचित फसलों की उच्चतम उपज, औसत उपज से गुणा क्षतिपूर्ति के स्तर के बराबर है।

बीमित राशि/कवरेज की सीमा

प्रति हेक्टेयर बीमित राशि जिला स्तरीय तकनीकी समिति द्वारा पूर्व–घोषित ऋणी वित्त–पैमाने के बराबर होती है। व्यक्तिगत किसान के लिए बीमा राशि प्रति हेक्टेयर वित्त स्केल गुणा किसान द्वारा प्रस्तावित अधिसूचित फसल के क्षेत्र के बराबर होती है। सिंचित और असिंचित क्षेत्र के लिए बीमा राशि अलग–अलग हो सकती है। ऋण संवितरण बैंक शाखा द्वारा फसल बीमा के लिए देय प्रीमियम राशि के प्रति अतिरिक्त ऋण वित्त किया जाएगा।

प्रीमियम दरें और सब्सिडी किसान द्वारा देय बीमा की दरें निम्न तालिका के अनुसार होगी

क्र. सं.	मौसम	फसल	अधिकतम बीमा प्रभार देय
1	खरीफ	सभी खाद्य अनाज और तिलहन और दालों की फसल	बीमा राशि का 2 प्रतिशत
2	रबी	सभी खाद्य अनाज और तिलहन और दालों की फसल	बीमा राशि का 1.5 प्रतिशत
3	खरीफ और रबी	वार्षिक वाणिज्यिक और वार्षिक बागवानी फसल	बीमा राशि का 5 प्रतिशत

बीमांकिक प्रीमियम दर और किसान द्वारा देय बीमा की दर के बीच के अंतर को सामान्य प्रीमियम सब्सिडी की दर के रूप में माना जाता है जिसे केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा समान रूप से साझा किया जाता है।

उपज में नुकसान/कमी का आकलन

यह योजना 'एरिया एप्रोच' यानि प्रत्येक अधिसूचित फसल के लिए परिभाषित क्षेत्रों के आधार पर कार्य करती है। प्रमुख फसलों में बड़े पैमाने पर आपदाओं के लिए बीमा इकाई गांव/ग्राम पंचायत या किसी भी अन्य समकक्ष इकाई है। जिले में कम से कम 24, तहसील में 16, मंडल में 10 और गांव में 4 सस्य कर्तन प्रयोग का चयन किया जाता है। कुल अधिसूचित सस्य कर्तन प्रयोगों की संख्या के आधार पर उपज की जानकारी राज्य सरकार/केन्द्र शासित प्रदेशों के द्वारा तय कट ऑफ तारीख, और फसलों और क्षेत्रों के अनुसार बीमा कंपनी को प्रस्तुत की जाती है।

दावों का आकलन (व्यापक आपदाओं)

बीमा परिभाषित क्षेत्र में यदि बीमा फसल की प्रति हेक्टेयर वास्तविक उपज (सस्य कर्तन प्रयोग की अपेक्षित संख्या के

आधार पर) निर्दिष्ट उपज (TY) से कम आंकी जाती है तो परिभाषित क्षेत्र के सभी बीमा फसल की खेती करने वाले किसानों को पैदावार में कमी नुकसान उठाना माना जाता है। इस प्रकार की उपज में कमी की स्थिति में यह योजना किसानों को आकस्मिकता के खिलाफ कवरेज प्रदान करती है।

'दावा' की गणना निम्न सूत्र के अनुसार की जाएगी:

= ((निर्दिष्ट उपज–वास्तविक उपज))/(निर्दिष्ट उपज)' बीमा राशि

निर्दिष्ट उपज– अधिसूचित बीमा इकाई में पिछले सात वर्षों में फसल की औसत उपज (अधिकतम दो आपदा वर्ष छोड़कर) गुणा फसल के लिए लागू क्षतिपूर्ति के स्तर है।

उदाहरण: 2015–16 सत्र के लिए निर्दिष्ट उपज (TY) की गणना

''अ'' बीमा इकाई क्षेत्र में पिछले 6 साल के लिए मूंगफली की उपज नीचे तालिका में दी गई है

वर्ष	2009–10	2010–11	2011–12	2012–13	2013–14	2014–15	2015–16
उपज (किग्रा/हेक्टेयर)	1900	1300	2000	1400	2100	1400	2100

यदि 2010–11, 2012–13 और 2014–15 के वर्षों के प्राकृतिक आपदा साल मान लिया जाए तो सात साल की कुल पैदावार हुई 12200 किलोग्राम/हेक्टेयर और, दो सबसे खराब आपदा साल की पैदावार 2700 किलोग्राम/हेक्टेयर (1300+1400)। इसलिए पिछले सात वर्षों की अर्थात् (दो आपदा साल को छोड़कर, 12200–2700 = 9500/5) अधिकतम औसत पैदावार 1900 किलोग्राम/हेक्टेयर हो जाएगी। इसलिए 2015–16 सत्र के लिए निर्दिष्ट उपज (TY) 90, 80 और 70 प्रतिशत क्षतिपूर्ति स्तर पर निर्दिष्ट उपज क्रमश रु. 1710, 1550 और 1330 किलोग्राम/हेक्टेयर होगी।

दावों का सीधा खातों मे भुगतान

यदि फसल उत्पादन के दौरान प्रतिकूल मौसम जैसे बाढ़, सूखा, कम वर्षा आदि के कारण उम्मीद उपज निर्दिष्ट उपज से 50 प्रतिशत से कम होने की संभावना की स्थिति में किसानों को तत्काल राहत ऑनलाइन–खाता भुगतान प्रदान करने का प्रस्ताव है। भुगतान की राशि और नुकसान की मात्रा बीमा कंपनी और राज्य सरकार के अधिकारी के संयुक्त सर्वेक्षण के आधार पर तय की जायेगी। इस प्रावधान के तहत भी केवल वह किसान वित्तीय सहायता/मुआवजे के पात्र होगें जो राज्य सरकार द्वारा अधिसूचना लागू करके पहले प्रीमियम भुगतान कर चुके हैं या प्रीमियम उनके खाते से निकाल दिया गया है। अधिकतम देय राशि संभावित दावों की 25 प्रतिशत होगी। परंतु यदि विपरीत परिस्थितियों सामान्य फसल के कटाई समय से 15 दिनों के पहले या भीतर घटित होती हैं तो यह प्रावधान लागू नहीं होगा।

ऑनलाइन–खाता भुगतान की गणना निम्न सूत्र से की जाएगी:

((निर्दिष्ट उपज–अनुमानित उपज)/(निर्दिष्ट उपज)) बीमा राशि 25% के मामले में।

नुकसान के आकलन और रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए समय सीमा

राज्य सरकार द्वारा प्रतिकूल मौसमी घटना की स्तिथि से 7 दिनों के भीतर क्षतिग्रस्त बीमा इकाइयों के विवरण के साथ ऑनलाइन–खाते में भुगतान की पात्रता को परिभाषित करने के लिए एक आदेश जारी किया जाएगा। प्रतिकूल मौसमी घटना से 15 दिन के भीतर संयुक्त समिति द्वारा प्रभावित बीमा इकाई के स्तर पर नुकसान के आकलन की रिपोर्ट पूरी की जायेगी।

शर्तें

1. आपदा की अधिसूचना से पहले मात्र ऋण संवितरण या ऋण की मंजूरी बिना प्रीमियम रसीद/डेबिट वाले किसान दावे के पात्र नहीं होगें।
2. बीमा कंपनी द्वारा खाते में ऑनलाइन–भुगतान केवल सरकार के प्रीमियम सब्सिडी की हिस्सेदारी प्राप्ति के बाद ही वितरित किया जाएगा।
3. सभी पात्र बीमित किसानों को ऑनलाइन अकाउंट भुगतान राज्य सरकार द्वारा अधिसूचना लागू होने के एक माह के

भीतर (जो राज्य सरकार से नुकसान की रिपोर्ट की प्राप्ति के अधीन होगा) किया जाएगा।

कमीशन और बैंक शुल्क

बैंक और अन्य वित्तीय संस्थानों आदि का सेवा शुल्क भुगतान किसानों से एकत्रित प्रीमियम के 4 प्रतिशत के रेट पर किया जाएगा और सेवा कर से छूट भी दी जाएगी। ग्रामीण किसानों के लिए बीमा से संबंधित सेवाएं प्रदान करने में लगे हुए एजेंटों को उचित कमीशन का भुगतान आईआरडीए के नियमों के तहत बीमा कंपनी द्वारा किया जाएगा।

फसल बीमा पोर्टल

कृषि, सहकारिता और किसान कल्याण विभाग, कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार ने फसल बीमा के लिए एक वेब पोर्टल (http://agri-insurance.gov.in) एकीकृत आईटी समाधान विकसित किया गया हे। इसका मुख्य उद्देश्य किसानों को पहले की तुलना में तेजी से बीमा सेवाएं प्रदान करना है जो मानविय प्रक्रिया को खत्म करने और इस तरह खंडित डेटाबेस को एकजुट करने और सेवा प्रदान करने में तेजी लाने के लिए सहायक सिद्ध होगा। बीमा से संबंधित सेवाएं प्रदान करने, चरणबद्ध तरीके से निगरानी, बेहतर प्रशासन, समन्वय और पारदर्शिता, वित्त मंत्रालय और अन्य हितधारकों के साथ परामर्श सुनिश्चित करने के लिए सरकार इस एकल आईटी मंच का प्रयोग कर रही है ताकि सभी हितधारक अर्थात किसानों, बीमा कंपनियों, वित्तीय संस्थानों और सरकार का एकीकरण हो सके। सभी हितधारकों इस आईटी प्लेटफॉर्म वेब पोर्टल की सहायता से एक दूसरे से जुड पाऐंगे जो संबंधित जानकारी को इलेक्ट्रॉनिक प्रवाह के साथ बढाने और दावों के तेजी से प्रसंस्करण में मदद करेंगी। हालांकि वर्तमान में यह पोर्टल दो भाषाओं हिंदी और अंग्रेजी में उपलब्ध है लेकिन आगे इसे सभी क्षेत्रीय भाषाओं में परिवर्तित किया जाएगा। फसल बीमा पोर्टल योजनाओं की अधिसूचना के डिजिटलीकरण योजनाओं के कार्यवाहन में सहायता करेगा। बीमा प्रीमियम कैलकुलेटर किसानों और अन्य हितधारकों को बीमित राशि, प्रीमियम राशि, कार्यान्वयन एजेंसी का विवरण पता करने में मदद करेगा। फसल बीमा के बारे में जानकारी प्रदान करने और प्रीमियम कैलकुलेटर के लिए एंड्रॉयड आधारित मोबाइल अनुप्रयोग 'फसल बीमा' एप, भी विकसित किया गया है। यह मोबाइल एप्लिकेशन 23 दिसंबर, 2015 को शुरू किया गया था और दो महीने से कम के भीतर इस एप्लिकेशन के 6115 डाउनलोड हुए हैं। किसान फसल बीमा पोर्टल (http://agri-insurance.gov.in) पर उपलब्ध ऑनलाइन आवेदन और अपेक्षित प्रीमियम के भुगतान भी कर सकते हैं। इस तरह तत्कालिन प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना को सहज और सरल किया जा चुका है ताकि ज्यादा से ज्यादा भारतीय किसान इस योजना का लाभ ले कर प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हो सके।

शीत भंडारण - दशा एवं दिशा

विजय पाल[1], राकेश पाण्डे[1], आर. ऐजेकिल[2], प्रमोद कुमार[1], अतर सिंह[1] एवं आर.सी. मीणा[1]

[1]पादप कार्यिकी संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

[2]राष्ट्रीय समन्वयक, राष्ट्रीय कृषि नवोन्मेषी परियोजना (एन.ए.आई.पी.)

कृषि अनुसंधान भवन–II, पूसा कैम्पस, नई दिल्ली–110012

शीत भंडारण बहुत से फलों, सब्जियों और प्रसंस्कृत उत्पादों के फसलोत्तर प्रबंधन का एक अटूट भाग है। शीत भंडारण व्यापारिक खाद्य उत्पादों में उनके भंडारण और संग्रहण अवधि को बढ़ाकर कटाई–तुड़ाई उपरांत होने वाले क्षति को कम करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अत्यंत ह्यसशील और ह्यसशील खाद्य–उत्पादों का कम तापमान पर सामयिक भंडारण उनके खाद्य या संसाधन उद्देश्यों के लिए नियमित और सतत आपूर्ति करने में सहायक होता है। यह उत्पादों के मूल्य–आपूर्ति, मूल्य–स्थिरीकरण, उपयुक्त–वितरण और बाजारीकरण करने की दिशा में भी अत्यंत उपयोगी है। उपयुक्त और सामयिक भंडारण की सार्थकता को समझते हुए निकट भविष्य में शीत भंडारण गृहों में वृद्धि का पूर्वानुमान किया जा रहा है। एसोचैम (ASSOCHAM) की 2009 की रिपोर्ट के अनुसार भारतीय शीत–श्रृंखला एवं गृहों जोकि 102 बिलियन रुपयों से तैयार किए गए उनमें 25.8 प्रतिशत की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर होने की आशा है और यह 2017 तक लगभग 640 बिलियन रुपये हो जायेगी। अभी भारत में 6,227 शीत भण्डार हैं और ये 31.26 मिलियन टन तक भंडारण क्षमता प्रदान करते हैं। मुख्यतः बागवानी उत्पाद, प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ, पशुधन और फार्मस्यूटिकल के उत्पादों को शीतगृहों में रखा जाता है। इस लेख में वर्तमान में शीतगृहों की स्थिति, उपलब्धता और भंडारण स्थलों के उपयोग और उपयोग के तरीकों के साथ–साथ उनकी कमियों को भी रेखांकित किया गया है तथा प्रयोग होने वाले शीत भंडारों के प्रभावी उपयोग और उनके विभिन्न परिवर्तित रूपों में प्रयोग किए जाने के लिए कुछ तरीकों के सुझावों का भी वर्णन किया गया है।

तालिका 1: भारत में शीत भंडारण

शीत भंडारण क्षमता जो है	31.26 मिलियन टन
अनुमानित क्षमता प्रति शीत भंडार यूनिट	5,021 टन
कुल शीत भण्डार गृहों की संख्या	6,227
शीत भंडारण क्षमता जो की उपयोग में है	26.00 मिलियन टन
शीत भंडारण की आवश्यक क्षमता	61.13 मिलियन टन
वर्तमान अंतर	35.13 मिलियन टन

Source: NCCD (www.nccd.gov.in/), FICCI, ASSOCHAM, McKinsey

वर्तमान स्थिति एवं समस्याएं

भारत फलों का 88.98 मिलियन टन और सब्जियों का 162.90 मिलियन टन उत्पादन करके विश्व का दूसरा बड़ा उत्पादक देश है। इस उत्पादन के साथ भारत विश्व के कुल उत्पादन फलों में 11.36 प्रतिशत और सब्जियों में 14.04 प्रतिशत का योगदान दे रहा है। फल और सब्जियों के उत्पादन क्षेत्र में (विशेषतः पिछले दस वर्षों में) भारत ने एक कीर्तिमान प्रगति की है किन्तु इनके फसलोत्तर प्रबंधन की स्थिति अभी भी अत्यधिक निराशाजनक बनी हुई है। जबकि यह एक सत्य है कि बागवानी उत्पादों ने अधिकतम रोजगार दिए है और गुणयुक्त पोषण भी उपलब्ध कराया है। सीफेट (CIPHET) के अनुमान अनुसार केवल फलों एवं सब्जियों की कटाई उपरांत अनुमानित वार्षिक हानि 133 बिलियन रुपये है।

अभी भारत में विभिन्न खाद्य उत्पादों के लिए लगभग 61.13 मिलियन टन भंडारण क्षमता की आवश्यकता है, (तालिका–1) परन्तु उपलब्ध सुविधा लगभग 31.26 मिलियन टन की जिसमें केवल 26 मिलियन टन ही उपयोग की जा रही है। इस प्रकार, भारत में शीत भंडारण की कमी फलों एवं सब्जियों में कटाई

उपरांत होने वाली क्षति का एक बड़ा कारण है जो वार्षिक आधार पर कुल उत्पादन का 25 से 40 प्रतिशत तक है। आज भारत में फल एवं सब्जियों की खपत 90 और 190 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रति दिन है जोकि वास्तव में 120 और 280 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रति दिन होनी चाहिए। कटाई उपरांत हानि को इसका एक जिम्मेदार कारक माना जा सकता है और यह भारत के लोगों की खाद्य जरूरतों और खाद्य सुरक्षा को पूरा करने में एक बाधा साबित हो रही है। अत्यंत ह्रासशील टमाटर, आम, आड़ू, प्लम, स्पोटा, बेरीज, ब्रोकली, मशरूम, लेट्यूस, स्वीट कार्न आदि और ह्रासशील आलू, सेब, नाशपाती, कीवी, अंगूर आदि उत्पादों का कटाई उपरांत प्रसंस्करण के लिए फसलोत्तर उत्पादों और गुणवर्धन का अपर्याप्त उपयोग होना भी कमजोर फसलोत्तर प्रबंधन का दूसरा प्रमुख कारण है। शीतगृहों की अपर्याप्त उपलब्धता के अतिरिक्त कुछ दूसरी समस्याएं भी हैं। जो निम्नलिखित है :

1. शीतगृहों का असमान वितरणः कुल भंडारण क्षमता का लगभग 80 प्रतिशत केवल भारत के पांच राज्यों जैसे– उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, गुजरात, पंजाब और आंध्र प्रदेश में ही स्थित है (तालिका–2)।
2. शीत भंडारण का उच्च मूल्य होना (जैसे कि 50 किलो आलू बोरी का मूल्य 10 से 15 रुपये प्रति महीना)।
3. शीतगृहों का कमजोर प्रबंधन।
4. शीतगृहों में कोई आपसी तालमेल न होना क्योंकि इनमें से अधिकतर शीतगृह अकेली यूनिट के रूप में ही संचालित होती है। इसके अलावा तकनीकी दृष्टि से भी अधिकतर शीतगृह पुराने हो चुके हैं।
5. शीतगृहों की सुविधा आज भी कमजोर किसान और सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों के किसानों की पहुंच से दूर है।
6. बिजली की आपूर्ति ना होना।

इस समय किसानों एवं अन्य उत्पादकों की मूलभूत जरूरतें इस प्रकार हैं– शीत–भंडारण की कम लागत, कम दूरी, उपयुक्त और समय पर शीत भंडारों की उपलब्धता जिससे उत्पाद जैसे कि आलू, सेब, ब्रोकली, अंगूर, कीवी, मशरूम, आड़ू, नाशपाती, प्लम, बेरी आदि को अच्छी तरह भंडारित किया जा सके। लेकिन कृषक इन सुविधाओं से या तो वंचित है या इन्हें केवल आंशिक रूप से पूरा कर पा रहा है। यहां पर यह जानना जरूरी है कि कुल शीत भंडारों में से लगभग 3,414 शीत भण्डार (शीत भंडारों का 55 प्रतिशत) केवल आलू के भंडारण में प्रयोग किए जाते हैं। कुल मात्रा का लगभग 20 से 24 मिलियन टन आलू शीत भंडारों में भंडारित किया जाता है। आलू के कुल उत्पादन का 48 से 58 प्रतिशत (जोकि 20 से 24 मिलियन टन है) शीत भंडारण में कुल स्थान का लगभग 70 से 80 प्रतिशत के बराबर है। इस तरह से अधिकतर शीत भंडारण में स्थान केवल एक ही उत्पाद द्वारा प्रयोग में लाए जा रहे है और वो है आलू।

तालिका–2: भारत के विभिन्न राज्यों में शीत भण्डार गृहों की स्थिति

राज्य	शीतगृहों की संख्या	शीत भंडारण क्षमता (मीट्रिक टन)
उत्तर प्रदेश	2176	1,36,33,039
पश्चिमी बंगाल	502	59,01,925
गुजरात	560	20,73,873
पंजाब	606	20,04,778
आन्ध्र प्रदेश	404	15,77,828
बिहार	303	14,06,395
महाराष्ट्र	540	7,06,302

Source: MOFPI, www.indiastar.com September, 2015

भावी दृश्य एवं दिशा निर्देश

भारत सरकार के द्वारा निर्धारित एजेंडे अनुसार उत्पादकों और खरीददारों के जुड़ाव के साथ–साथ तकनीकी विकास और ह्रासशील बागवानी उत्पादों के रख–रखाव की पद्धति में सुधार कर कटाई उपरांत होने वाली हानि को कम करने पर जोर देना है। शीतगृहों और भंडारण से जुड़ी समस्याओं के स्थाई समाधान के लिए वर्तमान शीतगृहों के तेजी से आधुनिकरण के साथ–साथ नये शीतगृह बनाने की पहल करने और बड़े नीति निर्णय लेने की जल्द आवश्यकता है। तकनीकी तौर पर आधुनिक बनाए गए शीतगृहों में तापमान, आपेक्षिक आर्द्रता, वायु संवहन और कार्बन डाईआक्साइड के स्तर को

अच्छी तरह से नियंत्रित करने को सुनिश्चित करना होगा। यह कार्य उत्तम भंडारण के प्रति विश्वसनीयता, भंडारित उत्पाद की गुणवता एवं रख–रखाव में सुधार करने में सहायक होगा। गत वर्षो में भारत में आवश्यकता से अधिक ताजे उत्पाद को संसाधन प्रक्रिया में लाने के लिए उल्लेखनीय प्रगति हुई है। परन्तु अभी भी वर्तमान उत्पादन का केवल 2 प्रतिशत सब्जी और 4 प्रतिशत फल उत्पादन ही प्रसंस्करण में उपयोग हो रहा है। अन्य देश जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका और नीदरलैंड फलों एवं सब्जियों का 40 से 75 प्रतिशत प्रसंस्कृत कर रहे हैं। फल एवं सब्जियों का मलेशिया, फिलीपीन्स, ब्राजील और थाईलैंड में भी 83, 78, 70 और 30 प्रतिशत प्रसंस्करण किया जा रहा है। भारत सरकार द्वारा की गई पहल; जैसे खाद्य प्रसंस्करण के कारखानों में स्वतः 100 प्रतिशत एफ.डी.आई., खाद्य के लिए मूलभूत ढांचे जिसमें खाद्य पार्क, आसवादन और एल्कोहल किण्वण, शीत–भंडारण श्रृंखला एवं सामान रखने के भंडार और फल एवं सब्जियों के प्रसंस्करण में नई यूनिटों पर पांच वर्ष तक छूट तथा दूसरे अन्य लाभ अवश्य ही इस क्षेत्र की वृद्धि को प्रोत्साहित करने में सहायक होंगे। देश में 30 बड़े खाद्य पार्क लगाने की भारत सरकार की प्रस्तावित योजना से खाद्य उत्पादों को गुणवर्धित तथा उत्पाद का प्रसंस्करण करने की दिशा में अवश्य ही बढ़ावा मिलेगा। इस सन्दर्भ में भारत सरकार की बागवानी के समग्र विकास की योजना भी महत्वपूर्ण स्वेच्छिक प्रयास है, जो कि फार्म गेट से उपभोक्ता तक शीत–श्रृंखला के विकास एवं कटाई उपरांत ताजे उत्पादों के रख–रखाव के प्रयासों को आर्थिक रूप से सहयोग प्रदान करेगा। इसके लिए भारत सरकार द्वारा 35 से 50 प्रतिशत तक की आर्थिक मदद दी जाने की योजना का कार्यान्वयन भी शामिल है।

कृषि अभियांत्रिकी में रोजगार एवं शिक्षा

अनिल कुमार मिश्र एवं रणबीर सिंह
जल प्रौद्योगिकी केन्द्र
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली–110012

परिचय

कृषि अभियांत्रिकी विषय का दूसरे विषयों की तुलना में अपना अलग आकर्षण एवं विशेष महत्व है। अनुभव से पता चलता है कि किसी भी राष्ट्र का आर्थिक विकास का स्तर मानव संसाधनों पर निर्भर करता है विशेषकर विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर। महान कृषि अभियंता डॉ. ए.एम. माइकल कहते हैं कि "पर्याप्त खाद्य आपूर्ति एवं संतुलित आहार सभी लोगों को मिल सके, इसके लिए हमें विश्वभर में कृषि अभियंताओं के महत्वपूर्ण योगदान की आवश्यकता होगी, इनके योगदान के बिना यह परिकल्पना अधूरी मानी जा सकती है।" कृषि अभियंता खेती को टिकाऊ, सुरक्षित एवं पर्यावरण के अनुकूल करने में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है। वर्तमान परिदृश्य में कृषि के सभी कार्य आधुनिक तकनीकियों एवं परिशुद्ध कृषि उपकरणों की सहायता से कम समय, कम श्रम एवं कम लागत में सम्पन्न किये जा सकते हैं तथा कार्य भी सटीक होता है, जिन्हें संचालित करने के लिए कृषि अभियंताओं की आवश्यकता पड़ती है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अधिकांश परिशुद्ध यंत्र एवं मशीनों की मांग तेजी से बढ़ने के कारण कृषि अभियंताओं की माँग बढ़ रही है।

कृषि अभियांत्रिकी एवं यंत्रीकरण

कृषि अभियांत्रिकी में विज्ञान के विभिन्न विषय एवं प्रौद्योगिकी पद्धतियां समाहित हैं जो कि उच्च कृषि उत्पादन, खाद्य प्रसंस्करण, पशु का खाद्य एवं जैविक ईंधन उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कृषि यंत्रीकरण से अभिप्राय यह है कि कृषि संबंधित अधिकतर कार्य मनुष्य या पशुओं के स्थान पर यंत्रों जैसे ट्रैक्टर, पावरटिलर, हारवेस्टर, थ्रेशर आदि द्वारा किये जाएं। प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन के अनुसार "खेती में कृषि अभियांत्रिकी के विभिन्न आयामों के त्वरित उपयोग से व कृषि यंत्रीकरण व औद्योगिकरण को प्रोत्साहन देकर 21वीं सदी की कृषि क्रांति संभव है।"

कृषि अभियांत्रिकी का कार्यक्षेत्र

एक कृषि अभियंता के तौर पर काम करने के लिए आप में कृषि अभियांत्रिकी विषय की अच्छी तकनीकी जानकारी होनी चाहिए, इसके साथ ही मैकेनिकल, इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रोनिक्स इंजीनियरिंग की समझ होनी भी जरुरी है। इण्डस्ट्री के अनुसार कार्यक्षेत्र का दायरा भी कुछ अलग हो सकता है, वैसे तो एक कृषि अभियंता का मुख्य कार्य कृषि कार्यों में प्रयोग होने वाले यंत्र, खाद्य प्रसंस्करण उपकरण, सिंचाई प्रणाली एवं पम्प और ट्रैक्टर इत्यादि का निर्माण, सुधार, संचालन एवं मरम्मत करना होता है, लेकिन ये कृषि यंत्र एवं मशीनों की अभिकल्पना (डिजाइन) की रुपरेखा करने समेत कई अन्य जिम्मेदारियां भी निभाते हैं। इसके अलावा अनुसंधान, संशोधन, प्रचालन, विकास एवं डिजाइनिंग का काम भी इन्हीं के जिम्में होता है। कई बार अभियंताओं को कृषि अभियांत्रिकी के सर्वेक्षण की भी भूमिका निभानी पड़ती है जिसके अंतर्गत कृषि यंत्रों का परीक्षण, स्थापना और सुरक्षा उपायों में नेतृत्व की गुणवता का होना भी आवश्यक है, क्योंकि इन्हें कृषि तकनीशियनों की टीम का प्रबंधन भी करना पड़ सकता है, इसके साथ–साथ सूक्ष्म सिंचाई के सरकारी एवं गैर सरकारी विभाग में इनकी भूमिका अहम होती है तथा भारतीय खाद्य निगम, राष्ट्रीय बीज निगम, खाद्य उद्यम, ट्रैक्टर, पावर टिलर, कम्बाईन और कृषि उपकरण बनाने वाली कम्पनियों व बैकिंग आदि क्षेत्रों में कृषि अभियंताओं की मांग तेजी से बढ़ रही है। उपर्युक्त रोजगारों के अलावा देश में संचालित विभिन्न परियोजनाओं जैसे मनरेगा, आत्मा व एन.जी.ओ. आदि में भी विभिन्न पदों जैसे तकनीकी सहायक, परियोजना सहायक एवं संचालक पदों में संविदा पर भर्ती होती है।

व्यक्तिगत योग्यताएं

चूंकि यह नौकरी बहुत चुनौतीपूर्ण है इसलिए इसमें करियर बनाने के लिए सोच रहे युवाओं को अलग–अलग वातावरण एवं माहौल में खुद को सामजस्य करना आना चाहिए, साथ ही साथ दूसरे प्रवृत्ति के लोगों के संग आसानी से घुल–मिल जाने की भी प्रवृति भी होनी चाहिए।

नौकरी दक्षता

प्राइवेट कंपनियों, ट्रैक्टर कंपनियों या सरकारी प्रतिष्ठानों एवं सरकारी संस्थाओं में कृषि अभियंता के रुप में करियर बनाने की चाह रखने वाले युवाओं में कुछ जरुरी कार्य दक्षता भी होनी चाहिए। अभ्यर्थियों में समस्या हल दक्षता, गणित और सूचना तकनीक दक्षता, अच्छी सम्पर्क व संवाद दक्षता, बेहतर तकनीकी जानकारी, नेतृत्व गुणवता एवं कृषि यंत्रों का चलाने में सुरक्षा के उपायों की समझ होनी चाहिए।

शैक्षणिक योग्यता

कृषि अभियांत्रिकी के क्षेत्र में आने के इच्छुक युवा कृषि अभियांत्रिकी में डिग्री या डिप्लोमा लेकर आजीविका शुरु कर सकते हैं। चुंकि यह मैकेनिकल इंजीनियरिंग के ट्रेड से मिलता जुलता है, अतः छात्र इसके जरिये भी निजी क्षेत्र एवं सरकारी नौकरियों में प्रवेश कर सकते हैं। जिसके पास स्नातक (बी. टेक) की डिग्री हो, वह ट्रैक्टर या व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में नौकरी प्राप्त कर सकते हैं तथा जिसके पास स्नातकोत्तर (एम. टेक) की डिग्री हो वह वैज्ञानिक/सहायक प्राध्यापक के तौर पर सरकारी व निजी संस्थानों में नौकरी प्राप्त कर सकते है। कृषि अभियांत्रिकी के स्नातक (बी. टेक) पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिए प्रार्थी को गणित, भौतिक, रसायन के साथ 12वीं पास होना चाहिए।

नौकरी के अवसर

कृषि अभियांत्रिकी के अंतर्गत विशेष रुप से कृषि यंत्र एवं शक्ति, मृदा एवं जल संरक्षण, सिंचाई एवं जल निकास, फसल कटाई उपरान्त खाद्य प्रसंस्करण, डेरी इंजीनियरिंग एवं अक्षय ऊर्जा में एम. टेक एवं पी.एच.डी डिग्री धारक छात्र शैक्षणिक, विकास कार्य, कृषि उत्पादन उपकरण की बिक्री एवं सर्विस, वित्त प्रबंधन, सलाहाकार तथा स्वंय रोजगार चलाकर अपना भविष्य बना सकते हैं। इसके अलावा कृषि यंत्र, सिंचाई, कटाई उपरान्त प्रौद्योगिकी एवं अक्षय ऊर्जा से संबंधित विकास कार्य में सार्थक योगदान दे सकते हैं तथा भारत की विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियों एवं स्थानीय किसानों के अनुकूल कृषि यंत्रों का विकास करके खेती में उच्च उत्पादकता एवं किसानों की दुर्घटनाओं को कम कर सकते हैं।

कृषि अभियांत्रिकी में स्नातक छात्र निम्नलिखित विषयों में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त कर सकते है:

1. कृषि यंत्र एवं शक्ति अभियांत्रिकी

यह कृषि अभियांत्रिकी का महत्वपूर्ण कार्यक्रम है इसमें कृषि शक्ति एवं मशीन प्रणाली प्रारुप, जुताई और कर्षण में मृदा गतिकी, कृषि कार्य संचालन में परिस्थिति एवं सुरक्षा, अभियांत्रिकी मॉडलों में समानता, कर्षण एवं कृषि यंत्रों का परीक्षण एवं मूल्याकंन, कृषि शक्ति एवं मशीनरी प्रबंधन में प्रचालन अनुसंधान, कृषि ऊर्जा लेखा परीक्षण एवं प्रबंधन, व्यवहारिक मापयंत्रण, भूमि एवं जल संसाधन प्रबंधन के लिए जी.आई.एस. व दूरस्थ संवेदन का उपयोग, खाद्य प्रसंस्करण/कंपन में इकाई संचालन, कृषि अनुसंधान की नैतिकता एवं ग्रामीण विकास कार्यक्रम, आपदा प्रबंधन, तंत्रिका नेटवर्क एवं उसके अनुप्रयोग, बौद्धिक संपदा और कृषि में प्रबंधन आदि विषय शामिल हैं।

2. अक्षय ऊर्जा अभियांत्रिकी

अक्षय ऊर्जा संसाधन के अंतर्गत अक्षय ऊर्जा का औद्योगिक अनुप्रयोग, अक्षय ऊर्जा रुपान्तरण प्रणाली का प्रारुप एवं विश्लेषण, बायोगैस प्रौद्योगिकी एवं तंत्र, जैव ऊर्जा रुपान्तरण एवं अपशिष्ट पदार्थ का प्रसंस्करण, सौर ऊर्जा उपयोग, ऊर्जा संरक्षण एवं प्रबंधन, कृषि ऊर्जा लेखा परीक्षण एवं प्रबंधन पवन ऊर्जा उपयोग, कृषि में ऊर्जा प्रबंधन, खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में ऊर्जा प्रबंधन, वैकल्पिक ईंधन एवं अनुप्रयोग, शीतलक एवं ताप के लिए सौर अनुप्रयोग, प्रत्यक्ष ऊर्जा रुपान्तरण प्रौद्योगिकियां, शक्ति प्रणाली विश्लेषण, पारिस्थितिक पर्यावरण,

पर्यावरण प्रदूषण एवं नियंत्रण, प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन एवं उपयोग आदि शामिल हैं।

3. मृदा एवं जल संरक्षण अभियांत्रिकी

इसके अंतर्गत भू–जल अभियांत्रिकी, फसल पर्यावरण अभियांत्रिकी, जल संसाधन अभियांत्रिकी, अभियांत्रिकी मॉडलों में समानता, प्रयोगशाला तकनीक में बुनियादी अवधारणाएं, कृषि सिंचाई प्रणाली का प्रारूप, वाटरशेड जल विज्ञान, वाटरशेड प्रबंधन और मॉडलिंग, कृषि जल निकास प्रणाली, भूमि एवं जल संसाधन प्रबंधन के लिए जी.आई.एस. एवं दूरस्थ संवेदन का उपयोग, व्यवहारिक मापयंत्रण, जल विज्ञान, प्राकृतिक वर्षा, जल संरक्षण, सिंचाई, वाटरशेड विकास, सुधार एवं मृदा एवं जल कटाव के उपाय आदि शामिल हैं।

4. सिंचाई एवं जल निकास प्रबंधन अभियांत्रिकी

इसके अंतर्गत व्यवहारिक जल विज्ञान स्रोत, जल–पौध संबंध, तरल यांत्रिकी एवं मुक्त नाली, जलगति विज्ञान, सिंचाई प्रबंधन, कृषि भूमि में जल निकास, जलगति संरचना एवं मशीनरी, सिंचाई प्रणाली प्रारूप, वाटरशेड विकास और प्रबंधन, मृदा लवणता और पानी की गुणवता, भू–जल विकास एवं नलकूप, फसल पर्यावरण अभियांत्रिकी, वायु चित्र स्पष्टीकरण एवं दूरस्थ संवेदन, छिद्रयुक्त माध्यम से प्रवाह, सिंचाई व जल निकास परियोजनाओं की योजना, निष्पादन एवं प्रबंधन, नियंत्रित वातावरण में सिंचाई प्रबंधन, सिंचाई जल परियोजनाओं का आर्थिक मूल्यांकन, सिंचित फसल, लघु सिंचाई एवं कुआ जलगति विज्ञान आदि विषय शामिल हैं।

5. कृषि प्रसंस्करण एवं खाद्य अभियांत्रिकी

इसके अंतर्गत खाद्य प्रसंस्करण एवं परिवहन तथ्य, खाद्य सामग्रियों के अभियांत्रिकी गुण, खाद्य प्रसंस्करण अभियांत्रिकी में इकाई संचालन, अभियांत्रिकी मॉडलों में समानता, खाद्य सूक्ष्म जैविकी, खाद्य विश्लेषण तकनीकी, खाद्य प्रसंस्करण किण्वन, उन्नत खाद्य प्रक्रिया अभियांत्रिकी, अनाज, दालों, तिलहनों का प्रसंस्करण, भंडार अभियांत्रिकी एवं कृषि उत्पादों का रख–रखाव, जैव रासायनिक और प्रक्रिया अभियांत्रिकी, खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों में ऊर्जा प्रबंधन, व्यवहारिक मापयंत्रण, संवेष्टन (पैकिंग), कृषि अनुसंधान की नैतिकता एवं ग्रामीण विकास कार्यक्रम, आपदा प्रबंधन, बौद्धिक संपदा एवं इसका कृषि में प्रबंधन आदि शामिल हैं।

भारत में कृषि अभियांत्रिकी शिक्षा का विकास

भारत में कृषि अभियांत्रिकी डिग्री स्तर की शिक्षा का आरंभ सर्वप्रथम इलाहाबाद कृषि संस्थान, नैनी, इलाहबाद (उ.प्र.) में 1942 से हुआ। वर्ष 1952 में स्नातक (बी.टेक.) कार्यक्रम भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर (पश्चिमी बंगाल) तथा स्नातकोत्तर (एम. टेक) एवं पी.एच.डी. कार्यक्रम क्रमशः 1957 एवं 1962 में शुरू हुआ था। देश में स्थापित प्रथम कृषि विश्वविद्यालय, गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर (उत्तराखंड) ने 1960 में नये स्वरूप पर आधारित कृषि अभियांत्रिकी पाठ्यक्रम शुरू किया था। इनके अलावा बाद में देश के अन्य कृषि विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों ने यह कोर्स शुरू किए जिनका विवरण सारणी 1 में दिया गया है।

सारणी 1: देश के विभिन्न संस्थानों एवं राज्य कृषि विश्वविद्यालयों में कृषि अभियांत्रिकी पाठ्यक्रम

क्र. सं.	कृषि विश्वविद्यालय/ संस्थान	बी.टेक	एम.टेक	पी.एच.डी
1.	इलाहाबाद कृषि संस्थान नैनी, इलाहबाद (उ.प्र.)	√	√	–
2.	भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर, (पं. बंगाल)	√	√	√
3.	गोन्विद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर (उत्तराखंड)	√	√	√
4.	पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना (पंजाब)	√	√	√
5.	ओडिसा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, भुवनेश्वर (उड़ीसा)	√	√	–
6.	जवाहर लाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (मध्य प्रदेश)	√	√	√
7.	राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल, हरियाणा	–	–	√

क्र. सं.	कृषि विश्वविद्यालय/संस्थान	बी.टेक	एम.टेक	पी.एच.डी
8.	भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली	–	√	√
9.	महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी (महाराष्ट्र)	√	√	–
10.	डॉ. पंजाब राव देशमुख कृषि विद्यापीठ, कृषिनगर, अकोला (महाराष्ट्र)	√	√	–
11.	तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयम्बटूर, तमिलनाडु	–	√	√
12.	आचार्य एन.जी. रंगा कृषि विश्वविद्यालय, बापटला, हैदराबाद (आंध्र प्रदेश)	√	–	√
13.	राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, पूसा समस्तीपुर (बिहार)	√	–	–
14	जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय, जूनागढ़ (गुजरात)	√	√	–
15.	केरल कृषि विश्वविद्यालय, त्रिचुर (केरल)	√	√	–
16.	मराठवाड़ा कृषि विश्वविद्यालय, परभनी (महाराष्ट्र)	√	–	–
17.	चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)	√	√	√
18.	इन्दिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)	√	√	√
19.	सरदार वल्लभ पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उत्तर प्रदेश)	√	√	–
20.	बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, रांची (झारखंड)	√	√	–
21.	कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय, रायचुर, कर्नाटक	√	√	–
22.	नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, फैजाबाद (उत्तर प्रदेश)	√	√	–
23.	डॉ. बी.आर. अम्बेडकर कालेज ऑफ एग्री. इंजी. एवं प्रौ. इटावा, यू.पी.	√	–	–
24.	महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान	√	√	√
25.	तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, त्रिरुचिरापल्ली	√	√	–
26.	बिधान चन्द कृषि विश्वविद्यालय, मोहनपुर, पश्चिम बंगाल	√	√	–

2009 में स्नातकोत्तर डिप्लोमा आरंभ किया जोकि कृषि प्रबंधन में दिया जाता है। यह दो वर्ष का कार्यक्रम है। जोकि अखिल भारतीय शिक्षा परिषद से स्वीकृत है। इस डिप्लोमा में प्रवेश लेने हेतु छात्रों का चयन कैट/सी.मैट परीक्षा में प्राप्तांकों के आधार पर किया जाता है। छात्रों का चयन निम्नलिखित प्रक्रिया में वरीयता के आधार पर किया जाता है।

कैट/सीमेट परीक्षा में प्राप्तांक	40 प्रतिशत
समूह चर्चा	25 प्रतिशत
साक्षात्कार	25 प्रतिशत
शैक्षणिक रिकार्ड	10 प्रतिशत

न्युनतम योग्यता

इस प्रक्रिया में प्रवेश हेतु छात्र के पास भा.कृ.अनु.प. से मान्यता प्राप्त किसी भी कृषि विश्वविद्यालय से 4 वर्षीय स्नातक उपाधि होनी चाहिए। कृषि अभियांत्रिकी के स्नातकों के अलावा अन्य कृषि विषय में स्नातक भी इस कार्यक्रम में प्रवेश ले सकते हैं। इस कोर्स से संबंधित समस्त जानकारी राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रबंधन अकादमी की वेबसाइट पर उपलब्ध है। पी.जी.डी.एम.ए. में निम्नलिखित कोर्स पढ़ाया जाता है।

कृषि व्यवसाय के मूल सिद्धांत, विश्लेषणात्मक कौशल, सूचना प्रणाली, संगठनात्मक एवं नेतृत्व अनिवार्यता, मूलभूत व्यापार कार्य, कृषि व्यवसाय वातावरण, ऐच्छिक विषय, ग्रीष्म प्रशिक्षण, अंतिम परियोजना।

निष्कर्ष

देश के प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के अलावा कृषि उत्पादकता बढ़ाने, आदानों की दक्षता बढ़ाने, फसल कटाई उपरांत क्षति को कम करने एवं कृषि उत्पादों का मूल्य संवर्धन आदि संबंधित कृषि अभियांत्रिकी के मुख्य विषय हैं। कृषि

अभियांत्रिकी की पढ़ाई करके छात्र फार्म मशीनरी एवं पावर, प्रसंस्करण, परिशुद्ध सिंचाई, वाटरशेड प्रबंधन, वानिकी, पोस्ट हारवेस्ट टेक्नोलॉजी, एक्वाकल्चर, खाद्य इंजीनियरिंग, वेल्यू एडिशन, कृषि अपशिष्ट, ऊर्जा प्रबंधन में अपना भविष्य बना सकते हैं जिसके लिए उन्हें उचित मार्ग–दर्शन एवं जानकारी कृषि विश्वविद्यालय एवं कृषि संस्थानों से मिल सकती है।

पावर टिलर

पशु–चालित यंत्रों द्वारा खेती

किसानों की आय दुगनी कैसे हो: सफलता की कहानी

प्रतिभा जोशी, नीलम पटेल, नफीस अहमद, निशि शर्मा, श्रुति सेठी, गीतान्जलि जोशी व जे.पी. शर्मा

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली – 110012

जैसा कि सर्वविदित है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है और इसकी दो तिहाई आबादी मूल रूप से कृषि पर आधारित है तथा भारतीय अर्थव्यवस्था का मूलभूत आधार कृषि ही है। यदि हम खेती को अनदेखा कर भारत के विकास की बात करें तो यह सम्भव नहीं है क्योंकि जब तक किसान व कृषि का विकास नहीं होगा तब तक देश के विकास की बात सार्थक नहीं होगी। आंकड़ों के अनुसार 40–45 प्रतिशत किसान कृषि छोड़ना चाहते हैं। परन्तु गांव की दशा इससे भी अधिक विकट है। किसान विशेषकर युवा कृषक पूर्ण रूप से कृषि से विमुख होते जा रहे हैं और इसे त्यागना चाहते हैं। कृषि के प्रति युवाओं के रूझान में कमी व पलायन के अनेक कारक हैं जैसे कृषि से कम आमदनी, शहरी चकाचौंध के प्रति आकर्षण, जनसंख्या वृद्धि के कारण प्रति कृषक कम जोत, संयुक्त परिवारों का एकल परिवारों में परिवर्तित होना आदि। भूमि की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में कमी आयी है तथा वर्तमान में जोत घटकर प्रति परिवार केवल 1.6 हेक्टेयर ही शेष बची है। फलस्वरूप 80–85 प्रतिशत कृषक छोटे व सीमान्त हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर कम हैं जो युवाओं के पलायन का मुख्य कारण है। आज के समय में खेती महंगाई का सौदा होती जा रही है क्योंकि बीज, पानी, खाद, कीटनाशी, श्रमिकों का मानदेय व उत्पादन लागत निरंतर बढ़ती ही जा रही है। जलवायु परिवर्तन भी कृषकों के सम्मुख, विकट रूप धारण कर कृषि पर प्रभाव डाल रही है।

वर्तमान में भारत सरकार की प्राथमिकता है कि इन विषम परिस्थितियों में भी किसान की आय को दोगुना किया जाए। यह स्वप्न कैसे संभव हो! क्योंकि उत्पादन की वृद्धि दर 3 से 4 प्रतिशत है, न्यूनतम समर्थन मूल्य वृद्धि दर 7 से 8 प्रतिशत है लेकिन कृषि में लागत कहीं ज्यादा दर से बढ़ रही है। अर्थात् यदि उत्पादन बढ़ा भी तो वह कृषि लागत के अनुरूप नहीं बढ़ रहा है। फलस्वरूप उत्पादन बढ़ने से किसान की आमदनी में ज्यादा फर्क नहीं पड़ेगा। चिन्ता का विषय यह है कि ऐसे और क्या माध्यम हो सकते हैं जिसकी वजह से किसान की आमदनी बढ़े तथा वर्ष 2022 तक दोगुनी हो जाए। इसी क्रम में हम कुछ बिन्दु उजागर करना चाहते हैं यदि इन पर अमल किया जाए तो कृषकों को अत्यंत लाभ होगा।

1. कृषि में विविधीकरण– कृषि में विविधीकरण लाकर, जैसे कृषक गेहूं–धान फसल प्रणाली के साथ–साथ अन्य अवयव जैसे सब्जी, फल, पुष्प उत्पादन, मशरूम, मछली पालन, मधुमक्खी पालन, नर्सरी आदि का समावेश कर सकते हैं, क्योंकि एकल फसल प्रणाली जैसे गेहूं–धान से कृषक को प्रति हेक्टेयर 40,000–50,000 तक आय प्राप्त होती है जबकि यहां हम जमीन व घरेलू श्रमिक की दर/लागत नहीं जोड़ रहे है। यदि किसान कृषि में विविधीकरण लायें व उपयुक्त अवयव तथा कृषि आधारित व्यवसाय अपनाएं तो कम जोत व समय में अधिक आमदनी प्राप्त की जा सकती है और गांव में रोजगार की समस्या में भी कृषि आधारित उद्यमों की सहायता से नीतिगत कमी आ सकती है। कृषकों को अपनी सोच में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है।

2. उत्पादों का मूल्य संवर्धन– मूल्य संवर्धन व कटाई उपरांत फसल प्रबन्धन के द्वारा कृषक अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं। फिलिपींस, मलेशिया, ब्राजील व अन्य देशों में 70–75 प्रतिशत तक कटाई उपरान्त फसल प्रबन्धन किया जाता है। जबकि भारत में इसकी दर मात्र 7 प्रतिशत हैं जिसे कारण 15–20 प्रतिशत कृषि उत्पाद खराब हो जाते हैं तथा कृषक फसल प्रबंधन की अनुपलब्धता के कारण मजबूरी में कृषि उत्पाद कम दामों में बेच देते हैं। यदि हम जल्दी खराब होने वाले कृषि व अन्य उत्पाद जैसे फल, सब्जी, फूल व दुग्ध उत्पादों का संरक्षण व प्रसंस्करण कर मूल्य संवर्धन करें तो आमदनी कई गुना प्राप्त की जा सकती है। मूल्यसंवर्धन

के क्षेत्र में किसानों, सरकार, नीतिधारकों, वैज्ञानिकों व स्वयं कृषकों को पहल करने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त किसानों को सीधे कृषि उत्पादों के व्यवसायीकरण में आना होगा जिससे उपभोक्ता को सही मूल्य पर उत्पाद प्राप्त हो तथा किसान को अपने कृषि उत्पाद का लाभ मिले।

3. कृषि का व्यवसायीकरण– आज के समय में कृषकों को कृषि के साथ ही उद्यमता के क्षेत्र में आना होगा जिससे उत्पाद कृषक से नीचे उपभोक्ता तक पहुंच सकेगा। इसके लिये किसान से उपभोक्ता के बीच बिचौलियों को कम करने की आवश्यकता है। एकल किसान का कृषि व्यवसायीकरण करना संभव नहीं है, इसके लिये कृषि उत्पादों की सामूहिक विपणन प्रणाली अपनाकर कृषकों में उद्यमता का विकास करना जरूरी है।

समाज में ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिन्होंने उपर्युक्त राह पर चलकर अन्य कृषकों के प्रेरणास्रोत बने हैं। ऐसे बहुत सारे किसान पूसा संस्थान के सम्पर्क में है तथा उन्हें उनकी उपलब्धियों के लिए संस्थान द्वारा सम्मान प्रदान किया गया है। इस लेख में हम कुछ ऐसे कृषक बन्धुओं की सफलता गाथा प्रस्तुत कर रहे हैं–

1. प्रगतिशील किसान : श्री हरिमन शर्मा – द्वारा गर्म जलवायु में सेब का उत्पादन

नाम : हरिमन शर्मा	
व्यक्तिगत विवरण जन्मतिथि : 12 मार्च, 1977 शिक्षा : 10वीं पास जमीन : 5 एकड़ पेशा : खेती और अब कृषि उत्पादों का विपणन	**पता : हरिमन शर्मा** गांव : पनियाला कोठी तहसीलः घुमरावी – 174021 जिलाः बिलासपुर हिमाचल प्रदेश मोबाइल नं. 09418867209

मनुष्य में अगर लगन हो तो वह असंभव को भी संभव कर सकता है। वर्ष 2000 तक किसी ने भी यह नहीं सोचा था कि बर्फीली पर्वतश्रृंखला पर उत्पन्न होने वाला सेब, निचले हिमालयी क्षेत्र में (जिसकी समुद्रतल से ऊंचाई 700 मीटर व तापमान 40 से 46 डिग्री सेल्सियस) भी सफलतापूर्वक लगाया जा सकता है। हिमाचल प्रदेश के बिलासपुर जिले के प्रगतिशील किसान श्री हरिमन शर्मा ने घुमारवीं क्षेत्र की गर्म जलवायु में उच्च किस्म का सेब उगाकर सभी को आश्चर्यचकित किया है। सेब व कीवी फल के लिए जिला बिलासपुर की जलवायु अनुकूल न होने के बावजूद भी उन्होंने परंपरागत गेहूं व मक्का की फसल त्यागकर सेब का बगीचा तैयार किया है जोकि प्रदेश के सेब उत्पादक बागवानों के लिए एक मिसाल है। इन्होंने सेब उत्पादन की वैज्ञानिक तकनीकी अपनाकर 1.5 कुन्तल सेब का उत्पादन किया है। श्री हरिमन अब तक उना, हमीरपुर, बिलासपुर, मंडी, सोलन व कांगड़ा में 4000 से अधिक पौधे लगवा चुके हैं। बागवानी के साथ हरिमन ने कृषि के क्षेत्र में नया आयाम स्थापित किया है। ये पॉलीहाउस में खीरा, घीया, करेला आदि सब्जियों का भी उत्पादन करते हैं तथा गोभी, बैंगन व टमाटर की बेमौसमी पनीरी तैयार कर लोगों को मुहैया कराते हैं।

मुख्य उपलब्धियां

- इन्होंने चयन द्वारा एक सेब की प्रजाति विकसित की है, जिसका नाम हरिमन सेब रखा है।
- यह कम चिलिंग प्रजाति है और उपोष्णकटिबंधीय मैदानों में, जहां तापमान 45 डिग्री सेंटीग्रेड तक पहुंच जाता है, वहां फूल व फल का उत्पादन करती है।
- इन्होंने इस प्रजाति के 2,25,000 पौधों का उत्पादन किया तथा सेब प्रेमियों, किसानों, बागवानों, उद्यमियों और राष्ट्रपति भवन सहित अन्य सरकारी संगठनों को वितरित किया।
- इनकी इस प्रजाति ने राष्ट्रपति भवन में फूल और फल देना प्रारंभ कर दिया है।
- हरिमन सेब का हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, कर्नाटक, हरियाणा और दिल्ली में प्रदर्शन अच्छा और संभावनाशील है।

- इन्हें विभिन्न राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों के अनेक पुरस्कार मिले हैं। वर्ष 2017 में इन्हें भा.कृ.अ.सं. के नवोन्मेषी किसान पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है।
- श्री हरिमन शर्मा ने उन्नत प्रौद्योगिकियों और अपने नवाचारों को अपने क्षेत्र के साथी किसानों के साथ साझा कर उनका प्रचार प्रसार किया। इससे कृषक समुदाय की दशा में सुधार आया और वह पहले से बेहतर हुई है।

2. श्रीमती पुष्पा साहू द्वारा फल उद्यानिकी में एक पहल

नाम : श्रीमती पुष्पा साहू

पता : रायपुर जिला, राज्य छत्तीसगढ़

दूरभाष : 91–07694936828, 0771–2444755

ई–मेलः pushpakksahu1966@gmail.com

शहरी क्षेत्रों में कृषि व घरेलू बागवानी हेतु भूमि की उपलब्धता एक चुनौती है। इस परिप्रेक्ष्य में श्रीमती पुष्पा साहू ने परिवार को पौष्टिक भोजन प्रदान करने हेतु घरों की छत पर साग–सब्जी, फल–फूल की खेती की आधुनिक कृषि तकनीकों का उपयोग कर सक्षम कर दिखाया है। इन्होंने बागवानी में पानी की बचत के साथ ही श्रम व समय का सदुपयोग करने के उद्देश्य से स्वनिर्मित गुरुत्वाकर्षण आधारित टपक सिंचाई पद्धति अपनाई हैं जिसे घर की पानी की टंकी से जोड़ा है। इसके उपयोग से समय व जल की बचत होती है।

मुख्य उपलब्धिया

- श्रीमती साहू छत उद्यानिकी द्वारा विभिन्न फल जैसे सेब, केला, चीकू, सीताफल, अमरूद आदि तथा अनेक सब्जियां जैसे चेरी टमाटर, मुंगा, करेला, तोरई, कुंदरू, बैंगन, लौकी, पालक, चौलाई और ग्वार फली आदि की खेती कर रही हैं।
- फलों और सब्जियों के अलावा इन्होंने विभिन्न प्रकार के फूल जैसे गुलाब, नीलकमल, दहेलिया, गेंदा, गुलदाउदी, चीनी गुलाब, चमेली, ग्लेडियोलस आदि और अनेक फूलों का उत्पादन किया है।
- इन्होंने वर्मीवाश और वर्मीकम्पोस्ट के साथ घरेलू जैव नाशीजीवनाशियों का उपयोग किया है।
- पिछले 2 वर्षों से ये प्याज, लहसुन, हल्दी और मैंथोल आदि भी सफलतापूर्वक उगा रही हैं।
- सिंचाई प्रणाली को इन्होंने ड्रिपों की सहायता से सीधे–सीधे घर के ओवरहैड टैंक के साथ जोड़ा है।

- उनके द्वारा उत्पन्न किए गए फल और सब्जियां ताजे, ऑर्गेनिक तथा उच्च गुणवता वाले होते हैं।
- इनके कार्य को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय, दोनों स्तरों पर सराहा गया है और इन्हें विभिन्न संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत किया जा चुका है।

3. श्री दिनेश कुमार द्वारा नवीन विपणन तंत्र का विकास

नाम : श्री दिनेश कुमार
पता : ग्राम माछी, जिला मुजफ्फरपुर, बिहार
दूरभाष : 91–9430865973

जैविक तरीके से उगाई जाने वाली बिहार के सकरा प्रखण्ड के माछी के सब्जी आज देशभर में लोकप्रिय हो रही है और किसान अच्छा मुनाफा कमा रहे हैं। जैविक खाद से उगाई जाने वाली इन सब्जियों की सबसे बड़ी खरीदार रिलायंस कंपनी है। खेत की घाटे का सौदा समझ आज युवा कृषक अन्य व्यवसायों की ओर अग्रसर हैं। वहीं बिहार के मुजफ्फरपुर जिले के सकरा प्रखंड के युवा कृषक दिनेश कुमार ने अपनी लगन व दृढ़ इच्छाशक्ति व वैज्ञानिक तरीके से खेती के प्रशिक्षण द्वारा उन्नत खेती कर रहे हैं। ये अन्य किसानों के लिए भी प्रेरणास्रोत हैं व तकनीकों का प्रचार–प्रसार कर रहे हैं। इनके सहयोग से उगाई जा रही 50 कुन्तल जैविक सब्जियां बिहार से रोजाना उत्तर प्रदेश, दिल्ली व भारत के अन्य राज्यों में भेजी जा रही हैं। श्री दिनेश कुमार ने अनेक स्वयं सहायता समूह का गठन कर उनके उत्पादों को रिलायंस फ्रेश से जोड़ा है। सब्जी में बैंगन, फूल गोभी, मिर्च, शिमला मिर्च व खीरा आदि की सप्लाई की जाती है। रिलायंस कम्पनी इन सब्जियों को दोगुने दाम पर खरीदती है। जैविक खाद से उत्पन्न होने के कारण यह सब्जी जल्दी खराब नहीं होती है।

मुख्य उपलब्धियां

- श्री कुमार पशु पालन, मछली पालन, कुक्कुट पालन और बकरी पालन के साथ–साथ आलू, मटर, टमाटर, गेहूं और दालों की खेती करते हैं।

- इन्होंने आमदनी बढ़ाने के लिए गेहूं तथा दलहनी फसलों में शून्य जुताई प्रणाली अपनाई हुई है।
- कृषि में बेहतर उत्पादकता और लाभ के लिए ये गोमूत्र तथा वर्मिवाश का उपयोग करते हैं।
- आलू में रोग प्रबंधन के लिए इन्होंने लम्बवत (वर्टीकल) दिशा में कीटनाशी के छिड़काव की प्रौद्योगिकी अपनाई है।
- इस तकनीक के प्रचार–प्रसार के लिए इन्होंने इस प्रौद्योगिकी को अपने साथी किसानों तक पहुंचाया है। इसके साथ ही ये टमाटर, बैंगन, करेला, खीरा आदि की जैविक खेती भी कर रहे हैं।
- इनके कृषि में उत्कृष्ट कार्यों के लिए इन्हें विभिन्न वर्गों से सराहना के साथ ही 2011 में उद्यान रत्न तथा सर्वश्रेष्ठ किसान के पुरस्कार से भी सम्मानित किया जा चुका है।
- वर्ष 2015 में इन्हें भा.कृ.अ.सं., नई दिल्ली में प्रगतिशील बीज उत्पादक तथा वर्ष 2017 में भा.कृ.अ.सं. के नवोन्मेषी किसान पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है।

4. मधुमक्खी पालन द्वारा उद्यमता का विकास

नाम : सुश्री मुकेश देवी

पता : ग्राम मालिकपुर, तहसील बेरी

जिला : झज्जर, राज्य हरियाणा

दूरभाष : 9671904462

ई–मेल: mukeshdevi625@gmail.com

तकनीकी का व्यवहारिक सदुपयोग कर महिलाएं स्वावलम्बी बनकर अन्य आर्थिक रूप से कमजोर महिलाओं को साथ लेकर महिला सशक्तीकरण, लगन व उद्यमशीलता का एक उदाहरण प्रस्तुत कर रही है। इसी उद्यमशीलता के संबंध में एक महिला उद्यमी की स्वरोजगार गाथा आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं।

मुख्य उपलब्धिया

- सुश्री देवी साथी किसानों को ब्लॉक, जिला और राज्य स्तर पर शहद प्रसंस्करण के लिए बढ़ावा दे रही हैं।
- इन्होंने कृषि विज्ञान केन्द्र उजवा और झज्जर, हरियाणा से मधुमक्खी पालन सीखा है।
- सुश्री मुकेश देवी विशेष रूप से तैयार 'हाइव सुपर' से नवोन्मेषित छत्ता शहद उत्पन्न कर रही हैं जिसमें कुदरती गुण अधिक मात्रा में है तथा स्वाद और औषधीय गुण बेहतर है। ये शहरी बाजार में अपने अनूठे उत्पादों के लिए जानी जाती हैं।
- इन्होंने 2001 में 30 बक्सों के साथ मधुमक्खी पालन आरंभ किया था जो अब बढ़कर 1500 बक्से हो गई है।
- पूरे वर्ष आपूर्ति बनाए रखने के लिए शहद विभिन्न फूलों से एकत्र किया जाता है।

- झज्जर में प्रतिदिन एक टन संसाधन क्षमता वाला शहद संसाधन संयंत्र 2015 में स्थापित किया गया है।
- ये अन्य युवा उद्यमियों को प्रशिक्षण भी दे रही हैं।
- इनका शहद एफएसएसएआई प्रमाणीकरण के अंतर्गत वाणिज्यिक स्तर पर बेचा जा रहा है।

निष्कर्ष

कृषि, किसान के जीवन का आयाम है तथा भारतीय अर्थव्यवस्था का मूलभूत आधार है। जहां भारत ने हरित क्रान्ति के बाद सन 1960 के दशक में अन्न उत्पादन में बहुमूल्य आत्मनिर्भरता हासिल की है, वहीं दूसरी ओर हमारे बहुत से किसान कृषि त्यागना चाहते हैं। घटती जोत, अन्धाधुन्ध रूप से कृषि रसायनों का प्रयोग, घरेलू बाजार में कृषि उत्पादों की कम मांग व घटता लाभ आदि चुनौतियों के साथ किसानों का कृषि के प्रति रुझान व सफलता अर्जित करना अपने आप में एक उपलब्धि है। जीवन की कड़ी चुनौतियों को अवसरों में परिवर्तित कर देना, यही इन सफल किसानों ने अपनी लगन व उद्यमशीलता से साबित कर दिखाया है और राष्ट्रीय छवि के व्यक्तित्व के रूप में जाने जाते हैं। आज के समय में बढ़ती जनसंख्या, कृषि हेतु घटती भूमि, पलायन आदि समस्याओं के बावजूद कृषि की चुनौतियों का सामना कर व आशातीत सफलता प्राप्त कर इन सफल कृषकों ने अपना मुकाम प्राप्त किया है तथा इन्हें अनेक राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय पटल पर सम्मानित किया गया है। निश्चित ही आज के युग में इन कृषकों की सफलता व मार्गदर्शन अन्य किसानों के लिए प्रेरणादायक है।

आम सबसे खास

निमिशा शर्मा एवं संजय कुमार सिंह
फल एवं औद्यानिक प्रौद्योगिकी संभाग
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

नाम है मेरा आम पर हूँ मैं सबसे खास
मैं हूँ बड़ा रसीला हर दिल को हूँ भाता
मैं हूँ अलबेला और निराला, हजारों रूप में हूँ आता

इसीलिए हर इंसान के लिए हर प्रकार में मिल जाता
चाहे दशहरी हो या अल्फन्सो, देसी विदेशी सभी को लुभाता
गर्मियों में आता और खूब सारा पोषण मैं हर वर्ग के लिए लाता
सारे विटामिन और खनिज तत्व उपलब्ध कराता

अच्छे स्वास्थ्य को देकर गर्मी की छुट्टियों का मजा दोगुना कर जाता
अपने हर रूप में उपयोग में आता
जब होता केरी तो अचार, चटनी और अमचूर बन जाता
अपने इस रूप में लू से करता हूँ मैं रक्षा

जब मैं पक जाता तो अपने रस से मोहित कर लेता हूँ
चाहे खाओ फल रूप में नहीं तो बना लो आमरस
बच्चों के लिए बन जाता केक और आइसक्रीम भी
मेरी कैंडी भी है मन लुभावन साथ ही आम पापड़ भी है मजेदार

भगवान को भी मैं हूँ अति प्रिय
मंदिर भी सज जाता मेरे पत्तों से
यज्ञ संपन्न होता मेरी ही शाखाओं से
कोयल की मधुर आवाज से सुबह को कर देता हूँ बड़ा ही खास
तभी तो मैं हूँ हर दिल अजीज

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

भाकृअनुप
ICAR

प्रशस्ति-पत्र

राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार

वर्ष 2015-16 के दौरान सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग में उल्लेखनीय योगदान के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली को बड़े संस्थानों की श्रेणी में प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।

दिनांक: 16 जुलाई 2017
नई दिल्ली

सचिव
(भा.कृ.अनु.प.)

महानिदेशक
(भा.कृ.अनु.प.)

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली)

प्रशस्ति पत्र

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) द्वारा वर्ष 2016-17 के दौरान भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा प्रकाशित पत्रिका पूसा सुरभि को उत्कृष्ट पत्रिका के लिए द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया जाता है।

दिनांक: 30 जून, 2017
स्थान: नई दिल्ली

पी. आर. राव
सदस्य-सचिव

वी. एन. शारदा
अध्यक्ष

राजभाषा खण्ड....

हिंदी की भाषा से राजभाषा तक का सफर

किशवर अली

जैव रसायन विज्ञान संभाग

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

माँ, मातृभूमि और मातृभाषा का चयन ईश्वर करता है हमारे वश में यह नहीं होता है। कालांतर में हम कई भाषाएं सीख सकते हैं। किसी अन्य देश की नागरिकता ले सकते हैं किन्तु जो प्रेम और आत्मिक लगाव अपनी अपनी माँ, मातृभूमि और मातृभाषा से होता है, किसी अन्य से नहीं होता। पाश्चात्य सभ्यता और वैश्वीकरण के प्रभाव में आज अंग्रेजी का बोलबाला है, किन्तु हम अपनी मातृभाषा में बात करने में जितने सहज होते हैं उतने किसी अन्य भाषा अथवा अंग्रेजी में नहीं। इसका तात्पर्य यह नहीं की अन्य भाषाओं की उपेक्षा करें, कदापि नहीं, उपेक्षा सभ्य समाज का गुण नहीं है। भाषाएं जितनी भी सीखीं जाएं अच्छा है किन्तु अपनी मातृभूमि और मातृभाषा का सम्मान सर्वोपरि होना चाहिए। जो व्यक्ति स्वयं को, अपनी माँ, मातृभूमि और मातृभाषा को सम्मान नहीं देते उनको समाज में वांछित स्थान नहीं मिल पाता है।

भाषा व्यक्ति को अभिव्यक्ति प्रदान करती है यह एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से वह अपनी भावनाओं और विचारों को दूसरों पर प्रकट करता है। हम अपने विचार, भावनाएं, वेदना और संवेदनाएं कई रूप में प्रकट कर सकते हैं, लेकिन भाषा इनको व्यक्त करने का एक सशक्त माध्यम प्रदान करती है। भाषा ही तो है जो हमें संसार के समस्त प्राणियों में श्रेष्ठ बनाती है। यूँ तो संसार में अनगिनत भाषाएं और बोलियां हैं किन्तु एक आकलन के अनुसार लगभग 6909 भाषाएं विश्व के विभिन्न भागों में प्रयोग होतीं हैं। हर देश या राष्ट्र की अपनी एक भाषा होती है जिसे वहां के लोग प्रयोग करते हैं। सरकारी काम काज में उसका प्रयोग होता है और उसे राष्ट्रभाषा का गौरव प्राप्त होता है। भारत वर्ष एक विशाल राष्ट्र है यह अपने आप में कई राज्यों को समेटे हुए है। यहां हर प्रकार की विविधता है। भाषाओं की विविधता तो अवर्णीय है, कहते हैं कि प्रत्येक 100 मील के बाद यहां की बोली बदल जाती है। 1961 के एक सर्वे के अनुसार लगभग 1652 भाषाएं एवं बोलियां यहां बोली जाती हैं जिनमें से कुछ तो यहां की मूल भाषाएं भी नहीं हैं।

इन सब विभिन्नताओं के पश्चात् भी यहां एक ऐसी भाषा है जो लोगों जोड़ती है और सबसे ज्यादा बोली जाती है। इस भाषा का नाम है हिंदी। 2001 की जनगणना के अनुसार भारत के 422,048,642 अर्थात 41 प्रतिशत लोग हिंदी का प्रयोग करते हैं। हिंदी भारत वर्ष की सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा है। यह यहां के जन मानस में रमी–बसी है, हिंदी भारत में ही नहीं बल्कि पाकिस्तान, नेपाल, बांग्लादेश, फिजी, दक्षिण अफ्रीका और मॉरीसस आदि देशों में भी बोली जाती है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सबसे अधिक प्रसारित होने वाली भाषा भी हिंदी ही है। यह जानकर आप को आश्चर्य होगा कि पूरे विश्व में लगभग 490 मिलियन लोग हिंदी का प्रयोग करते हैं इनमें 370 मिलियन लोगों की यह मातृभाषा है। उत्तर भारत में हिंदी का सबसे अधिक प्रयोग होता है इनमें मुख्य राज्य बिहार, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, झारखंड और मध्य प्रदेश हैं। हिंदी भारत के जनमानस की भाषा है। भारतेन्दु हरिश्चंद्र, हजारी प्रसाद द्विवेदी, रामचंद्र शुक्ल, जयशंकर प्रसाद, राहुल सांस्कृत्यायन, सूर्यकांत निराला जैसे लेखकों की कलम ने हिंदी साहित्य को नयी ऊंचाइयां दी है और इसको समृद्ध किया है। आज हिंदी हर प्रकार से समृद्ध और सक्षम है। प्रेमचंद ने हिंदी साहित्य में ऐसा जादू बिखेरा है जिसका उदाहरण अन्यत्र दृष्टिगोचर नहीं होता। उन्होंने जन साधारण की मर्मस्पर्शी वेदनाओं को साम्राज्यवादी सोच को हिंदी के माध्यम से ही लोगों के सम्मुख प्रस्तुत किया है। कविता, कहानी, उपन्यास, आलोचना तथा चिंतन सभी तो हिंदी साहित्य में उपलब्ध हैं। हिंदी ने भारत ही नहीं अपितु विदेशी लोगों को भी अपनी ओर आकर्षित किया है।

स्वतंत्रता के 6 दशक बाद भी हिंदी को जो स्थान मिलना चाहिए नहीं मिल पाया है। इसका क्या कारण रहा है। स्पष्ट रूप से नहीं कहा जा सकता किन्तु हिंदी के प्रति हमारी उदासीनता एक मुख्य कारण अवश्य नजर आता हैं। हिंदी बोलने और हिंदी पढ़ने वालों के प्रति जैसा व्यवहार हमारे यहां होता है वैसा अन्यत्र नहीं होता है। ज्यादातर लोग हिंदी बोलने में शर्म महसूस करते हैं जबकि अंग्रेजी का प्रयोग गर्व के साथ किया जाता है व हमारे संविधान निर्माता इस बात से अच्छी तरह परिचित थे। आजादी से पहले और आजादी के बाद कई प्रयास हिंदी के प्रयोग के प्रोत्साहन हेतु किये गए। इस लेख में मैंने इन्हीं कुछ महत्वपूर्ण संवैधानिक प्रयासों के परिचय को प्रस्तुत करने की कोशिश की है। 13 सितंबर, 1949 को पंडित जवाहरलाल नेहरू ने संविधान सभा में बहस में भाग लेते हुए यह कहा था कि यद्यपि अंग्रेजी ने हमको बहुत योगदान दिया है, सिखाया है और इससे हमने बहुत उन्नति भी की है। लेकिन, "किसी विदेशी भाषा से कोई राष्ट्र महान नहीं हो सकता।" उन्होंने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की सोच को आधारभूत मानकर कहा था कि विदेशी भाषा के वर्चस्व से नागरिकों में दो श्रेणियां स्थापित हो जाती हैं, "क्योंकि कोई भी विदेशी भाषा आम लोगों की भाषा नहीं हो सकती"। आज हम साफ तौर से समाज को दो खेमों में बंटा देख रहे हैं जहां अंग्रेजी का वर्चस्व है। राजभाषा होने के बावजूद हिंदी अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही है।

हिंदी की उत्पत्ति : हिंदी शब्द की उत्पत्ति सिंधु शब्द से हुई है अरब, फारस और ईरान के लोग भारत में सिंधु को पार करके पहुंचते थे। ये लोग सिंधु को हिन्द कहते थे और यहां के निवासियों को पहले हिनूद और भाषा को हिंदीक अर्थात 'हिन्द का' कहते थे। यही हिंदीक शब्द कालान्तर में हिंदी में बदल गया और हिंदी भाषा का जन्म हुआ। जो आज भारत के जनमानस की भाषा है। प्राचीन काल में संस्कृत भाषा का प्रयोग होता था। 500 ईसवी पूर्व तक संस्कृत का रूप काफी बदल गया था और इसने पाली का रूप धारण कर लिया था। गौतम बुद्ध के समय में पाली ही लोक भाषा थी गौतम बुद्ध ने ज्यादातर अपने उपदेश पाली भाषा में ही दिए हैं। परिवर्तन प्रकृति का नियम है। पाली भाषा भी समय के चक्र के साथ बदलती गयी और प्राकृत भाषा के रूप में जानी जाने लगी। यह लगभग 500 ईसवी तक प्रयोग में लायी जाती रही। कालांतर में क्षेत्रीय भाषाओं का प्रभाव बढ़ा और प्राकृत भाषा का भी स्वरुप बदल गया। प्राकृत के इस बदले स्वरुप को अपभ्रंश की संज्ञा दी गयी। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे कई विद्वानों का मत है कि हिंदी का विकास इसी अपभ्रंश से हुआ है।

भाषा से राजभाषा : सर्वप्रथम गुजराती कवि श्री नर्मद (1833–86) ने हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का विचार देश के सामने रखा। 1918 में लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने कांग्रेस अध्यक्ष की हैसियत से घोषणा की कि हिंदी भारत की राजभाषा होगी। महात्मा गांधी ने 1918 में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की स्थापना की। मद्रास राज्य के तत्कालीन मुख्यमंत्री सी० राजगोपालाचारी ने 1935 में मद्रास राज्य में हिंदी शिक्षा को अनिवार्य कर दिया। तब से लेकर अब तक भारत सरकार सतत् प्रयास करती आ रही है। सरकारी कार्यालयों में अधिक से अधिक कार्य हिंदी में करने पर बल दिया जा रहा है। इसके लिए हर मंत्रालय में हिंदी के कार्य को प्रोत्साहन देने हेतु हिंदी विभागों की स्थापना भी की गयी है। जो लोग अहिंदी भाषी हैं उनके समुचित प्रशिक्षण की व्यवस्था भी की गयी है। महात्मा गांधी ने किसी देश की राष्ट्रभाषा होने के लिए किसी भाषा में क्या विशेषताएं होनी चाहिए, इसका उल्लेख किया था। उनके अनुसार एक राजभाषा सरल हो और उस भाषा के द्वारा भारतवर्ष का आपसी धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार होना चाहिए। भारतवर्ष के अधिकतर निवासी उस भाषा को बोलते हों तथा उस भाषा का विचार करते समय किसी क्षणिक या अल्प स्थायी स्थिति पर जोर नहीं देना पड़े। हिंदी में ये सभी विशेषताएं विद्यमान हैं। भारत में अनेक राज्य हैं, उन सभी की अपनी अलग–अलग भाषाएं हैं। इस प्रकार भारत एक बहुभाषी राष्ट्र है किन्तु उसकी अपनी एक राजभाषा है जो कि ''हिंदी'' है। 14 सितंबर, 1949 को इसको भारत की राजभाषा घोषित की गयी। इसी कारण से हिंदी के राजभाषा बनने के उपलक्ष्य में 14 सितम्बर का दिन प्रतिवर्ष हिंदी दिवस के रूप में मनाया जाता है। 26 जनवरी, 1950 को भारत का अपना संविधान बना तो हिंदी को राजभाषा

का दर्जा दिया गया और यह माना कि धीरे–धीरे हिंदी अंग्रेजी का स्थान ले लेगी।

वह भाषा जो किसी भी देश के अधिकतर निवासियों द्वारा बोली एवं समझी जाती है राष्ट्रभाषा कहलाती है। प्रत्येक राष्ट्र की कोई न कोई राष्ट्रभाषा अवश्य होती है।

इसके बाद संविधान में राजभाषा के सम्बन्ध में अनुच्छेद 120, 343 और 352 तक की व्यवस्था की गयी।

अनुच्छेद 120 : संसद में प्रयोग की जाने वाली भाषा – (1) भाग 17 में किसी बात के होते हुए भी, अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संसद में कार्य हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा। परंतु, यथास्थिति, राज्य सभा का सभापति या लोक सभा का अध्यक्ष अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो हिंदी में या अंग्रेजी में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा।

अनुच्छेद 343 : इसके अनुसार

1. संघ की राजभाषा हिंदी, लिपि देवनागरी होगी।
2. शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतरराष्ट्रीय रूप होगा।
3. खंड (1) संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि तक संघ के उन सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए उसका ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था, परन्तु राष्ट्रपति उक्त अवधि के दौरान, आदेश द्वारा, संघ के शासकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिंदी भाषा का और भारतीय अंकों के अंतरराष्ट्रीय रूप के अतिरिक्त देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा।
4. इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी, संसद उक्त पन्द्रह वर्ष की अवधि के पश्चात, विधि द्वारा

   (क) अंग्रेजी भाषा का, या

   (ख) अंकों के देवनागरी रूप का,

   ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग उपबंधित कर सकेगी जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएं।

अनुच्छेद 351 : संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत के समाज एवं संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द–भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करें।

राजभाषा संकल्प, 1968

भारतीय संसद के दोनों सदनों (राज्यसभा और लोकसभा) ने 1968 में 'राजभाषा संकल्प' के नाम से निम्नलिखित संकल्प लिया :

1. जबकि संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार संघ की राजभाषा हिंदी रहेगी और उसके अनुच्छेद 351 के अनुसार हिंदी भाषा का प्रसार, वृद्धि करना और उसका विकास करना ताकि वह भारत के समाज संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, संघ का कर्तव्य है।
2. यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी के प्रसार एंव विकास की गति बढ़ाने के हेतु तथा संघ के विभिन्न राजकीय प्रयोजनों के प्रयोग हेतु भारत सरकार द्वारा एक गहन एवं व्यापक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा और किए जाने वाले उपायों की प्रगति की विस्तृत वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट संसद की दोनों सभाओं के पटल पर रखी जाएगी और सब राज्य सरकारों को भेजी जाएगी।
3. संविधान की आठवीं अनुसूची में हिंदी के अतिरिक्त भारत की 21 मुख्य भाषाओं का उल्लेख किया गया है, और देश की शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि इन भाषाओं के पूर्ण विकास हेतु सामूहिक उपाए किए जाने चाहिए।

4. यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी के साथ–साथ इन सब भाषाओं के समन्वित विकास हेतु भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के सहयोग से एक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा ताकि वे शीघ्र समृद्ध हो और आधुनिक ज्ञान के संचार का प्रभावी माध्यम बनें।
5. एकता की भावना के संवर्धन तथा देश के विभिन्न भागों में जनता में संचार की सुविधा हेतु यह आवश्यक है कि भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के परामर्श से तैयार किए गए त्रि–भाषा सूत्र को सभी राज्यों में पूर्णत कार्यान्वित करने के लिए प्रभावी किया जाना चाहिए।
6. यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी तथा अंग्रेजी के अतिरिक्त एक आधुनिक भारतीय भाषा के, दक्षिण भारत की भाषाओं में से किसी एक को तरजीह देते हुए, और अहिंदी भाषी क्षेत्रों में प्रादेशिक भाषाओं एवं अंग्रेजी के साथ–साथ हिंदी के अध्ययन के लिए उस सूत्र के अनुसार प्रबन्ध किया जाना चाहिए।
7. और जबकि यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि संघ की लोक सेवाओं के विषय में देश के विभिन्न भागों के लोगों के न्यायोचित दावों और हितों का पूर्ण परिक्षण किया जाए।

राजभाषा अधिनियम, 1963 के तहत भारत वर्ष को भाषा की दृष्टि से तीन भागों में बांटा गया है :

'क' क्षेत्र : इसके अंतर्गत बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, उत्तराखंड राजस्थान और उत्तर प्रदेश राज्य तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूह, दिल्ली संघ राज्य क्षेत्र अभिप्रेत है

'ख' क्षेत्र : इसके अंतर्गत गुजरात, महाराष्ट्र और पंजाब राज्य तथा चंडीगढ़, दमण और दीव तथा दादरा और नगर हवेली संघ राज्य

'ग' क्षेत्र : के अंतर्गत क और ख क्षेत्र के अतिरिक्त शेष भारत

- क्षेत्र 'क' में स्थित केन्द्रीय सरकार के ऐसे कार्यालयों के बीच, जो खण्ड (क) या खण्ड (ख) में विनिर्दिष्ट कार्यालयों से भिन्न हैं, पत्रादि हिंदी में होंगे।
- क्षेत्र 'क' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों और क्षेत्र 'ख' या 'ग' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिंदी या अंग्रेजी में हो सकते हैं।
- क्षेत्र 'ख' या 'ग' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिंदी या अंग्रेजी में हो सकते हैं।

सरकारी कार्यालयों में राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 3(3) के अंतर्गत प्रावधान के अनुसार निम्नलिखित दस्तावेज हिंदी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में जारी किये जाने चाहिए :–

1. संकल्प
2. सामान्य आदेश
3. नियम
4. अधिसूचनाएं
5. प्रशासनिक तथा अन्य प्रतिवेदन
6. प्रेस विज्ञिप्तियां
7. संसद के किसी सदन अथवा दोनों सदनों के समक्ष प्रस्तुत किये जाने वाले प्रशासनिक तथा
   अन्य प्रतिवेदन और सरकारी कागजात
8. संविदा
9. करार
10. अनुज्ञप्ति (लाइसेंस)
11. अनुज्ञा पत्र (परमिट)
12. निविदा सूचनाएँ
13. निविदा फॉर्म

नोट:

राजभाषा नियम, 1976 के नियम 6 के अनुसार ''यह सुनिश्चित करना ऐसे दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्तियों का दायित्व होगा कि ऐसे दस्तावेज हिंदी तथा अंग्रेजी दोनों, में निष्पादित अथवा जारी किये जाएं।''

संवैधानिक रूप से भारत सरकार सतत् प्रयासरत रही है कि हिंदी का अधिक से अधिक प्रचार और प्रसार हो। सरकारी कार्यालयों में पूरा काम काज हिंदी में हो किन्तु क्या हमारी नीयत इस बात पर अमल करने के लिए तत्पर है। यह एक विचारणीय प्रश्न है। आत्मचिंतन का विषय है। आखिर कब तक हिंदी अपने घर में बैसाखियों पर चलने को मजबूर रहेगी। इसके लिए हमें संकल्प लेने की आवश्यकता है कि हम हिंदी में ही कार्य करेंगे। **महात्मा गाँधी ने कहा था ''भारत के हित में, भारत को एक शक्तिशाली राष्ट्र बनाने के हित में, ऐसा राष्ट्र बनाने के हित में जो अपनी आत्मा को पहचाने, जिसे आत्मविश्वास हो, जो संसार के साथ सहयोग कर सके, हमें हिंदी को अपनाना चाहिए।''** महात्मा गाँधी के इन शब्दों को सभी को गंभीरता से लेना चाहिए और इन पर अमल भी करना चाहिए।

राजभाषा प्रगति रिपोर्ट 2016-17

- संस्थान का प्रकाशन कार्य सुचारु रूप से प्रगति पर है। गत तीन वर्षों से संस्थान की वार्षिक रिपोर्ट हिंदी में भी प्रकाशित की जा रही है। वर्ष 2016–17 की हिंदी वार्षिक रिपोर्ट का प्रकाशन किया जा चुका है। संस्थान द्वारा पूसा सुरभि (वार्षिक), पूसा समाचार (तिमाही), प्रसार दूत (द्विमासिक) तथा सामयिकी (मासिक) जैसे नियमित प्रकाशनों के अलावा अनेक तदर्थ प्रकाशन, पैम्फेलेट तथा प्रसार बुलेटिन जारी किए जाते हैं।
- संस्थान में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग की स्थिति की मॉनीटरिंग के लिए गठित निरीक्षण समिति ने संभागों/निदेशक कार्यालय के अनुभागों का निरीक्षण किया तथा संबंधित निरीक्षण रिपोर्टें भेजी गईं। निरीक्षण के उपरांत संबंधित संभागों/अनुभागों पर हिंदी की वास्तविक प्रगति को वांछित गति प्राप्त हुई।
- संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन को वांछित गति प्रदान करने और अधिकारियों/कर्मचारियों में हिंदी में कार्य करने के प्रति जागरुकता का सृजन करने के लिए हिंदी चेतना मास के दौरान कुल 10 प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जिनमें प्रमुख थीं : वाद–विवाद, निबंध लेखन, काव्य पाठ टिप्पण एवं मसौदा लेखन, कम्प्यूटर पर शब्द प्रसंस्करण, आशु भाषण, प्रश्न मंच तथा श्रुतलेख तथा अनुवाद। उक्त प्रतियोगिताओं में सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया। इसके अतिरिक्त कुशल सहायी कर्मचारियों तथा दैनिक वेतनभोगी कर्मचारियों के लिए सामान्य ज्ञान–प्रतियोगिता भी आयोजित की गई।
- संस्थान के सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों/वैज्ञानिकों के लिए विभिन्न विषयों पर वर्षभर में 4 कार्यशालाएं आयोजित की गई जिनसे अधिक से अधिक अधिकारी/कर्मचारी लाभान्वित हुए।
- हिंदी बुलेटिन प्रकाशित करने के लिए संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) की अध्यक्षता में हिंदी प्रकाशन समिति गठित है जो प्रकाशन इकाई द्वारा हिंदी में तकनीकी बुलेटिन प्रकाशित करने के लिए विषयों का सुझाव देने, इन्हें तैयार करने के लिए वैज्ञानिकों की पहचान करने, वैज्ञानिकों द्वारा तैयार की गई पाण्डुलिपियों में शामिल किए जाने वाले पहलुओं पर सुझाव देने के अलावा उनका पुनरीक्षण भी करती है।
- प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी संस्थान में पूसा कृषि उन्नति मेला आयोजित किया गया। इस अवसर पर मुख्य पंडाल के सभी चित्रों के शीर्षक, ग्राफ, हिस्टोग्राम आदि हिंदी में प्रदर्शित किए गए। मल्टी मीडिया के माध्यम से कृषि संबंधी जानकारी आकर्षक ढंग से प्रस्तुत की गई तथा किसानों, छात्रों व अन्य आगन्तुकों को कृषि साहित्य हिंदी में उपलब्ध कराया गया।
- संस्थान को मानद विश्वविद्यालय का दर्जा प्राप्त है। यहां एम.एससी. और पीएच.डी. की उपाधियां प्रदान की जाती हैं। संस्थान के सभी पीएच.डी. छात्रों को अपनी थीसिस का सारांश हिंदी में प्रस्तुत करना अनिवार्य है। संस्थान द्वारा आयोजित की जाने वाली पीएच. डी. प्रवेश परीक्षा में अभ्यर्थियों को द्विभाषी माध्यम उपलब्ध कराया जा रहा है।
- संस्थान द्वारा बड़ी संख्या में किसानों, प्रसार कार्यकर्ताओं व उद्यमियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। इन सभी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में प्रतिभागियों को पाठ्य सामग्री भी हिंदी में उपलब्ध कराई जाती है तथा प्रशिक्षण का माध्यम भी हिंदी ही होता है।
- इस संस्थान में हिंदी में पुस्तक लेखन को बढ़ावा देने के लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक के लिए 'डॉ. रामनाथ सिंह पुरस्कार' प्रदान किया जाता है। इस पुरस्कार योजना में 10,000/– रुपए नकद प्रदान किए जाते हैं। इसी प्रकार विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में हिंदी में वैज्ञानिक लेख लिखने पर एक पुरस्कार योजना चल रही है जिसमें 7000/–, 5000/– तथा 3000/– रुपये नकद पुरस्कार स्वरूप

दिए जाते हैं। हिंदी में व्याख्यान देने को बढ़ावा देने के लिए इस संस्थान के प्रवक्ताओं द्वारा हिंदी में सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक/तकनीकी व्याख्यान देने के लिए पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार के नाम से एक नकद पुरस्कार योजना चलाई जा रही है। इस योजना में प्रत्येक वर्ष में हिंदी में सर्वश्रेष्ठ तीन व्याख्यान देने पर 10,000/– रुपये का नकद पुरस्कार प्रदान किया जाता है। हिंदी में प्रशासनिक कार्य को बढ़ावा देने के लिए राजभाषा विभाग की नकद पुरस्कार योजना को लागू किया गया है जिसके तहत कुल दस कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किए जाने का प्रावधान है।

- संस्थान के वैज्ञानिकों को हिंदी में शोध पत्र तैयार करने और उनका पॉवर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से एक प्रतियोगिता/संगोष्ठी का आयोजन किया जाता है जिसमें संस्थान के वैज्ञानिक निर्धारित विषय पर अपने शोध–पत्रों का पावर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण करते हैं। इस वर्ष 'नीतिपरक कृषि अनुसंधान' विषय पर पावर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया तथा 10,000/–, 7,000/–, 5,000/–, 3,000/– व 3,000/– रुपये के पांच नकद पुरस्कार प्रदान किए गए।
- संस्थान द्वारा प्रकाशित पत्रिका पूसा सुरभि की मांग देश के किसान समुदाय के बीच बेहद बढ़ी है इसका उदाहरण समय–समय पर किसानों से मिलने वाला फीडबैक और उनके द्वारा पत्रिका की मांग किया जाना है।
- संस्थान की वेबसाइट पर सभी संभागों से संबंधित तकनीकी शब्दावली उपलब्ध करा दी गई है।
- हिंदी पुस्तकों की खरीद के लिए एक समिति बनाई गई है जो हिंदी पुस्तकालय के लिए पुस्तकें खरीदने की सिफारिश करती है। पुस्तकालय में प्रत्येक वर्ष राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य के अनुसार पुस्तकें खरीदने का प्रयास किया जा रहा है। संस्थान के राष्ट्रीय कृषि हिंदी पुस्तकालय में उपलब्ध सभी प्रकाशनों की सूची संस्थान की वेबसाइट पर उपलब्ध कराई गई है।
- राजभाषा विभाग, भारत सरकार के आदेशानुसार आशुलिपिकों तथा कनिष्ठ लिपिकों को क्रमशः हिंदी आशुलिपि व हिंदी टंकण का प्रशिक्षण प्राप्त करना अनिवार्य है। इसी अनिवार्यता को ध्यान में रखते हुए संस्थान स्तर पर हिंदी टंकण एवं आशुलिपि प्रशिक्षण केन्द्र चलाया जा रहा है जिसमें आशुलिपिकों एवं टंककों को हिंदी आशुलिपि एवं टंकण का प्रशिक्षण दिया जाता है। संस्थान में नव–नियुक्त सहायकों तथा कनिष्ठ लिपिकों को भी हिंदी टंकण का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इसके अलावा संस्थान के प्रशिक्षण प्राप्त कर्मचारियों के लिए समय–समय पर पुनश्चर्या प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है, साथ ही हिंदीतर भाषी अधिकारी/कर्मचारी वर्ग के लिए प्रबोध, प्रवीण एवं प्राज्ञ की कक्षाएं संचालित की जा रही है।
- संस्थान के जिन अधिकारियों और कर्मचारियों को हिंदी में प्रवीणता प्राप्त है उन्हें निदेशक महोदय और संयुक्त निदेशक (प्रशासन) ने अपना शत–प्रतिशत प्रशासनिक काम हिंदी में करने के आदेश दिए हैं। इसके अलावा निदेशक कार्यालय के अनुभागों को अपना शत–प्रतिशत सरकारी काम हिंदी में करने के लिए विनिर्दिष्ट किया गया है। इसके परिणामस्वरुप रिपोर्टाधीन वर्ष में संस्थान में राजभाषा के प्रयोग में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।
- इस वर्ष संस्थान तथा इसके क्षेत्रीय केन्द्र, इंदौर का संसदीय राज्य समिति द्वारा मौखिक किया गया जिसमें समिति द्वारा केन्द्र में किए जा रहे राजभाषा संबंधी कार्यों की सराहना की गई।
- संस्थान को प्राप्त होने वाले सभी हिंदी पत्रों के उत्तर हिंदी में दिए जा रहे हैं, 'क' और 'ख' क्षेत्रों में स्थित सरकारी कार्यालयों के साथ अब 93 प्रतिशत से अधिक पत्र–व्यवहार हिंदी में किया जा रहा है। इन दोनों क्षेत्रों में स्थित कार्यालयों से प्राप्त अधिकांश अंग्रेजी पत्रों के उत्तर भी हिंदी में दिए जा रहे हैं। मूल पत्राचार अधिकाधिक हिंदी में करने को बढ़ावा देने के लिए संस्थान के सभी संभागों, अनुभागों एवं केन्द्रों के बीच हिंदी व्यवहार प्रतियोगिता चलाई जाती है जिसमें वर्षभर सबसे अधिक पत्राचार हिंदी में करने वाले संभाग, अनुभाग एवं केन्द्र को चल–शील्ड प्रदान की जाती है।

- फाइलों पर हिंदी में टिप्पणियां लिखने में भी बहुत प्रगति हुई है, सेवा–पुस्तिकाओं व सेवा संबंधी अन्य रिकार्डों में अब प्रविष्टियां हिंदी में की जा रही हैं और राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपालन भी सुनिश्चित किया जा रहा है साथ ही संस्थान में हिंदी को दैनिक प्रशासन में बढ़ावा देने के उद्देश्य से फाइल कवर पर भी हिंदी–अंग्रेजी की प्रासंगिक टिप्पणियां प्रकाशित की गई हैं।

- संस्थान के अधिकारियों तथा कर्मचारियों के हिंदी शब्द ज्ञान को बढ़ाने के उद्देश्य से निदेशक कार्यालय एवं एनेक्सी भवन के प्रवेश द्वारों पर डिजिटल बोर्ड लगाया गाय है जिसमें प्रतिदिन हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थी शब्द के साथ एक सुविचार प्रदर्शित होता है। साथ ही सभी संभागों/इकाइयों में सभी प्रवेश द्वारों पर लगे सूचना पट्टों पर 'आज का शब्द' शीर्षक के अंतर्गत प्रतिदिन कम्प्यूटराज्ड हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थ के साथ लिखा जाता है ताकि आते–जाते कर्मचारियों की नज़र इन पट्टों पर पड़े और उनके शब्द ज्ञान में वृद्धि हो सके। इसी प्रकार का प्रयोग क्षेत्रीय केन्द्रों पर भी किया जा रहा है।

- संस्थान के सभी कम्प्यूटरों में हिंदी में यूनिकोड में काम करने की सुविधा उपलब्ध कराई गई है।

- राजभाषा के सफल कार्यान्वयन को ध्यान में रखते हुये संस्थान के सभी संभागों/क्षेत्रीय केन्द्रों में संभागीय स्तर पर भी राजभाषा कार्यान्वयन उप–समिति गठित है जिनकी नियमित रूप से बैठकें आयोजित की जा रही हैं।

- संभागों/अनुभागों/क्षेत्रीय केन्द्रों में हिंदी की प्रगति को वांछित गति प्रदान करने, संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में लिए गए निर्णयों को क्रियान्वित करने तथा संभाग और हिंदी अनुभाग के बीच सम्पर्क–सूत्र के रूप में कार्य करने के उद्देश्य से प्रत्येक संभाग/केन्द्र में राजभाषा नोडल अधिकारी नियुक्त किए गए हैं। इसके तहत सर्वश्रेष्ठ नोडल अधिकारी पुरस्कार योजना भी आरंभ की गई है।

- संस्थान के अनेक अधिकारियों व कर्मचारियों ने देश के विभिन्न संगठनों, संस्थाओं व भा.कृ.अ.प. के संस्थानों द्वारा देशभर के विभिन्न नगरों में आयोजित हिंदी वैज्ञानिक संगोष्ठियों, कार्यशालाओं, सम्मेलनों आदि में भाग लिया।

- उपर्युक्त सभी कार्य संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की देखरेख में किए जाते हैं। समिति प्रत्येक तिमाही में बैठक आयोजित करके राजभाषा कार्यान्वयन में हुई प्रगति की समीक्षा करती है और हिंदी के उत्तरोतर कार्यान्वयन के लिए निर्णय लेती है। इन बैठकों में प्रत्येक संभाग/इकाई द्वारा हिंदी की प्रगति के संबंध में किए गए अभिनव प्रयोग की रिपोर्ट भी प्रस्तुत की जाती है।

हिंदी चेतना मास एवं हिंदी वार्षिकोत्सव

संस्थान मुख्यालय, नई दिल्ली

हिंदी चेतना मास

संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन के प्रति नवीन चेतना और जागृति उत्पन्न करने तथा अधिकारियों/कर्मचारियों को हिंदी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से संस्थान मुख्यालय में गतवर्ष सितम्बर मास को हिंदी चेतना मास के रूप में मनाया गया। हिंदी चेतना मास के दौरान अनेक विविधरंगी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जैसे काव्य–पाठ, श्रुतलेख, वाद–विवाद, टिप्पण व मसौदा लेखन, निबंध लेखन, अनुवाद प्रतियोगिता, आशु भाषण, कम्प्यूटर पर शब्द प्रसंस्करण, प्रश्न–मंच एवं कुशल सहायी वर्ग के लिए सामान्य–ज्ञान। इस वर्ष आयोजित की गई वाद–विवाद प्रतियोगिता का विषय था– "नैतिक मूल्यों में गिरावट" पक्ष–विपक्ष, श्रुतलेख प्रतियोगिता के अन्तर्गत प्रतियोगियों की शुद्ध एवं मानक वर्तनी की परीक्षा ली गई वहीं एक अन्य लोकप्रिय प्रतियोगिता प्रश्न–मंच में विविधरंगी प्रश्न पूछे गए जिनमें भारतीय संस्कृति, सामान्य ज्ञान, अद्यतन संचेतना, खेलकूद, विज्ञापन एवं मनोरंजन से संबंधित प्रश्न शामिल थे। कुशल सहायी कर्मचारियों के लिए विशेष रूप से एक सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें विविधरंगी बहु–विकल्पी प्रश्न पूछे गए। उक्त सभी प्रतियोगिताओं में संस्थान मुख्यालय स्थित निदेशक कार्यालय एवं विभिन्न संभागों/इकाइयों के सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया।

संस्थान मुख्यालय के साथ–साथ संस्थान के विभिन्न संभागों तथा क्षेत्रीय केन्द्रों में भी हिंदी में जागरुकता का सृजन करने और हिन्दीमय परिवेश बनाने के उद्देश्य से अपने स्तर पर अनेक प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इसी क्रम में –

- कृषि प्रसार संभाग के अध्यक्ष डॉ. प्रेमलता सिंह की अध्यक्षता में दिनांक 24 अगस्त, 2016 को सुलेखन, प्रश्नोत्तरी, कविता–पाठ, आदर्श गांव के नियामक, विषय पर भाषण, प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। साथ ही कुशल सहायी कर्मचारियों के लिए विशेष रूप से अपना परिचय हिंदी में बोलना प्रतियोगिता आयोजित की गई। निर्णायक मण्डल में डॉ. मान सिंह, प्राध्यापक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र, डॉ. मनजीत सिंह नैन, वरिष्ठ वैज्ञानिक, कृषि प्रसार संभाग, श्री केशव देव, उप निदेशक (राजभाषा) शामिल थे। संभाग के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों/विद्यार्थियों ने प्रतियोगिताओं में बढ़ चढ़ कर भाग लिया। सभी सफल प्रतिभागियों को डॉ. वेद प्रकाश चहल, सहायक महानिदेशक (कृषि प्रसार),

चेतना मास के उद्घाटन के अवसर पर डॉ. के.वि. प्रभु संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) एवं अध्यक्ष, संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति अधिकारियों/कर्मचारियों को संबोधित करते हुये।

संभागाध्यक्ष कृषि प्रसार (संभाग) डॉ. प्रेमलता सिंह मुख्य अतिथि का स्वागत करते हुए

प्रतियोगिता में भाग लेते हुए संभाग के प्रतिभागीगण

मुख्य अतिथि डॉ. वेद प्रकाश चहल, सहायक महानिदेशक (कृषि प्रसार), भा.कृ.अ.प. से पुरस्कार ग्रहण करते हुए संभाग के प्रतियोगी

भा.कृ.अ.प. द्वारा पुरस्कार प्रदान कर सम्मानित किया गया। मुख्य अतिथि ने उक्त प्रतियोगिताओं के सफल आयोजन पर अपनी खुशी जाहिर की तथा सभी विजयी प्रतिभागियों को उनकी जीत पर हार्दिक बधाई दी।

- फाइटोट्रोन सुविधा संभाग ने दिनांक 27 सितम्बर 2016 को हिंदी दिवस के रूप में मनाया। जिसमें विभिन्न विषयों पर भाषण व सामयिक विषयों पर चर्चा आदि प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। प्रतियोगिताओं में संभाग के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया।
- सूत्रकृमि विज्ञान संभाग में हिंदी में कार्य करने के प्रति जागरुकता उत्पन्न करने और हिंदी में कार्य करने वाले कार्मिकों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से दिनांक 27 सितम्बर 2016 को प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता आयोजित की गई जिसमें वैज्ञानिक, तकनीकी, छात्र, प्रशासनिक, सहायी वर्ग तथा संभाग में कार्यरत सभी आर.ए., एस.आर.एफ., जे.आर.एफ. ने भी भाग लिया। विविधरंगी प्रतियोगिता में सामान्य ज्ञान, साहित्य, खेल जगत, मनोरंजन प्रभाग व सूत्रकृमि विज्ञान से संबंधित प्रश्नों को शामिल किया गया। विजेता टीमों को पुरस्कार के रूप में प्रसिद्ध साहित्यकारों/रचनाकारों की हिंदी किताबें संभागाध्यक्ष द्वारा वितरित कराई गईं।

भा.कृ.अ.सं., क्षेत्रीय केन्द्र, अमरतारा काटेज, शिमला

केन्द्र के अधिकारियों और कर्मचारियों ने हिंदी के प्रति अभिरुचि जागृत करने और उन्हें हिंदी में काम करने के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से क्षेत्रीय केन्द्र, अमरतारा काटेज, शिमला में 14 सितम्बर से 30 सितम्बर 2016 हिंदी पखवाड़े का आयोजन किया गया जिसके तहत अनेक प्रतियोगिताओं नामतः वाद–विवाद, मसौदा, निबंध–लेखन एवं टिप्पण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस समारोह का शुभारंभ केन्द्र के अध्यक्ष डॉ. कल्लोल कुमार प्रमाणिक ने किया। अपने संबोधन में उन्होंने राजभाषा के महत्व पर प्रकाश डाला। पखवाड़े के दौरान अनेक प्रतियोगिताओं का सफलतापूर्वक आयोजन के बाद दिनांक 28 सितम्बर को इसका समापन किया गया जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में डॉ. स्वरूप कुमार चक्रवर्ती, निदेशक भा.कृ.अ.प.–केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला उपस्थित रहे। इस समापन कार्यक्रम में प्रभारी, भा.कृ.अ.प. –राष्ट्रीय पादप आनुवंशिकी संसाधन ब्यूरो, क्षेत्रीय केंद्र शिमला भी विशेष तौर पर प्रतियोगिताओं के परिणाम घोषित करने हेतु आमंत्रित किए गए थे। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के स्वागत के लिए केंद्र की महिला कर्मचारियों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए। जिसमें वंदना, राष्ट्रभक्ति के गीत एवं राष्ट्रीय गीत आदि शामिल थे। इस कार्यक्रम के दौरान सामान्य ज्ञान, श्रुतलेख, काव्य पाठ प्रतियोगिताएं भी आयोजित की गई व परिणाम भी घोषित किए गए। अंत में सभी प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार वितरित किए गए।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षेत्रीय केन्द्र, कटराईं

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, कटराईं में अधिकारियों और कर्मचारियों में राजभाषा हिंदी के प्रति

जागरुकता का सृजन करने के उद्देश्य से 14 सितम्बर, 2016 को हिंदी दिवस मनाया गया। जिसमें विभिन्न प्रतियोगिताओं के अंतर्गत वाद विवाद, निबंध लेखन, प्रश्नोत्तरी, टिप्पण एवं प्रारूप लेखन व कुशल सहायी वर्ग के लिए प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में सभी वर्गों के अधिकारियों और कर्मचारियों ने भाग लिया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि तथा निर्णायकों के रूप में हिमाचल प्रदेश सरकार के शिक्षा विभाग के पूर्व मुख्याध्यापक श्री तोता राम, श्री पवन ठाकुर, प्रवक्ता रा.व.मा. विद्यालय, कटराईं तथा पूर्व सहायक प्रशासनिक अधिकारी श्री ओम प्रकाश शर्मा जी को प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाले प्रतियोगियों का मूल्यांकन करने के लिए निर्णायक के रूप में आमंत्रित किया गया। कुल 24 सफल प्रतियोगियों को नकद पुरस्कार प्रदान किए गए। इस दौरान स्टेशन के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों ने अपना सरकारी कार्यालय संबंधी कार्य अधिकाधिक रूप में हिंदी में करने का संकल्प लिया।

भा.कृ.अ.सं., क्षेत्रीय केन्द्र, करनाल

क्षेत्रीय केन्द्र, करनाल में दिनांक 01 से 15 सितम्बर 2016 तक हिंदी पखवाड़ा आयोजित किया गया। पखवाड़े के दौरान शब्द ज्ञान एवं सामान्य ज्ञान प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। शब्द ज्ञान प्रतियोगिता वैज्ञानिक वर्ग, तकनीकी वर्ग व प्रशासनिक वर्ग तथा सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता कुशल सहायी एवं दैनिक वेतन भोगी कर्मचारियों के लिए आयोजित की गई। जिसमें सभी वर्गों में प्रथम एवं द्वितीय पुरस्कार प्रदान किए गए। साथ ही सभी प्रतिभागियों को नकद पुरस्कार एवं प्रमाण पत्र देकर सम्मनित किया गया।

कार्यक्रम की संयोजिका एवं प्रभारी राजभाषा डॉ. अनुजा गुप्ता ने सभी अतिथि गणों का स्वागत किया एवं राजभाषा हिंदी का महत्व बताते हुए राजभाषा के नियमों व अधिनियमों की जानकारी तथा राजभाषा के संदर्भ में हुई उपलब्धियों के बारे में बताया।

कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. विनोद कुमार पंडिता, कार्यकारी अध्यक्ष, कार्यकारी अध्यक्ष, भा.कृ.अ.सं. क्षेत्रीय केन्द्र, करनाल ने की। उन्होंने कहा की संस्थान के अनुसंधानों का सीधा लाभ किसानों को मिले इसके लिए तकनीकी पुस्तिकाएं हिंदी में ही छपवाई जाती हैं और किसान भाइयों के लिए अनेक प्रशिक्षण कार्यक्रम भी आयोजित किए जाते हैं।

समारोह में श्री हरीराम, दैनिक वेतन भोगी ने नारी तेरी अजब कहानी विषय पर अपनी स्वरचित कविता गा कर सुनाई। डॉ. रविन्द्र कुमार वैज्ञानिक ने अपनी स्वरचित हास्य कविता प्रस्तुत की जिसने सभी का मन मोह लिया और हंसी के ठहाके लगाये। अंत में संस्थान के वैज्ञानिक डॉ. रविन्द्र कुमार ने सभी का धन्यवाद किया।

संस्थान के क्षेत्रीय केन्द्र, इंदौर में 29 सितम्बर 2016 को हिंदी कार्यशाला तथा हिंदी पखवाड़े का समापन

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, के क्षेत्रीय केन्द्र, इंदौर पर सितम्बर दिनांक 29.09.2016 को हिंदी कार्यशाला विशयः **"प्रशासनिक तथा वैज्ञानिक कार्यों में हिंदी का प्रयोग"** का आयोजन किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. देशराज जैन, अधिष्ठाता, शासकीय दन्त महाविद्यालय, इन्दौर तथा मुख्य वक्ता प्रो. राजीव शर्मा, विभागाध्यक्ष, हिंदी एवं पत्रकारिता विभाग, अटल बिहारी कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर थे। डॉ. मृदुला बिल्लौरे, अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, इन्दौर तथा डॉ. अखिलेष नन्दन मिश्रा, जो इस केन्द्र के पूर्व अध्यक्ष थे, विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित थे। केन्द्र के अध्यक्ष डॉ. सकूरू वैंकट साईप्रसाद ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की। कार्यशाला में केन्द्र के अतिरिक्त

मुख्य अतिथि डॉ देशराज जैन का संबोधन

मुख्य वक्ता प्रो. राजीव शर्मा का उद्बोधन

विभिन्न संस्थानों जैसे सोयाबीन अनुसंधान संस्थान, इन्दौर एवं कृषि महाविद्यालय, इन्दौर से कुल 40 प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया। कार्यक्रम की शुरूआत केन्द्र की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा द्वारा अतिथियों तथा कार्यशाला के सहभागियों के स्वागत भाषण से हुई। इसके बाद मुख्य वक्ता प्रो. शर्मा ने हिंदी को भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा का पुरजोर समर्थन किया तथा लोगों को हिंदी के प्रयोग में झिझक छोड़कर इसके अधिकतम प्रयोग पर जोर दिया। इस अवसर पर प्रो. शर्मा ने हिंदी को ही ऐसी भाषा बताया जो अर्थ का अनर्थ नहीं करती तथा बात के संप्रेषण का एक सशक्त माध्यम है। मुख्य अतिथि डॉ. जैन ने हिंदी के राष्ट्रभाषा बनने का समर्थन करते हुए, इसके तकनीकी विषयों में भी अधिकतम प्रयोग पर जोर दिया। विशिष्ट अतिथि डॉ. बिल्लौरे ने बड़ा स्पष्ट रूप से बताया कि कैसे हिंदी में पढ़ाया छात्रों को लगभग पूरा याद रहता है, जबकि अग्रेंजी में पढ़ाया गया पाठ छात्रों को बहुत ही कम समझ में आ पाता है तथा ज्ञान आधा–अधूरा ही रहता है। इसलिये उन्होंने हिंदी के अधिकतम प्रयोग पर बल दिया। डॉ. मिश्रा ने भी यही अपील की कि भले ही अंग्रेजी का ज्ञान रखिये, लेकिन हिंदी को अपनाना अतिआवश्यक है। उन्होंने ये भी कहा कि बिना अपनी भाषा के किसी भी देश का विकास मुमकिन नहीं है। सभी अतिथि एकमत थे कि हिंदी ही भारतवर्ष में राजभाषा के साथ राष्ट्रभाषा बनने की अधिकारिणी है तथा इसके प्रयोग में झिझक को दूर करके, इसे अपनाना अति आवश्यक है एवं प्रशासनिक तथा वैज्ञानिक कार्यों में इसका प्रयोग बड़ी आसानी से किया जा सकता है। केन्द्र के अध्यक्ष डॉ. सकूरू वैंकट साईप्रसाद ने मुख्य वक्ता तथा अतिथियों के द्वारा दिये गये भाषणों को सराहा तथा उनके द्वारा उठाये गये मुद्दों का समर्थन किया।

इसके अतिरिक्त केन्द्र पर दिनांक 14–28 सितम्बर तक हिंदी पखवाड़े का आयोजन किया गया। जिसके तहत काव्य पाठ, तात्कालिक लघुभाषण, वाद–विवाद प्रतियोगिता (भारत में हिंदी भाषा ही राष्ट्र भाषा बनने की अधिकारिणी), श्रुतलेख, प्रश्नमंच तथा हास्य–व्यंग्य प्रस्तुति का आयोजन किया। जिसमें संस्थान के अधिकारियों तथा कर्मचारियों ने बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया तथा पुरस्कार प्राप्त किये। काव्य पाठ में डॉ. कामिनी कौशल प्रथम, श्री प्रमेन्द्र सिंह परमार, द्वितीय तथा डॉ. व्ही. जी. दुबे व मिस. रितु जैन संयुक्त रूप से तृतीय पुरस्कार प्राप्त किया। तात्कालिक लघुभाषण प्रतियोगिता में मिस. रितु जैन प्रथम, डॉ. ए.के. सिंह, द्वितीय तथा डॉ. जंग बहादुर सिंह व श्री प्रकाश टी.एल. संयुक्त रूप से पुरस्कार प्राप्त किया। वाद–विवाद प्रतियोगिता में पक्ष तथा विपक्ष में बोलने वालों का अलग–अलग मूल्यांकन किया गया, जिसमें पक्ष में श्री प्रकाश टी.एल., प्रथम, दिव्या अंबटी द्वितीय तथा डॉ. कामिनी कौशल व डॉ. अमित गौतम ने संयुक्त रूप से तृतीय पुरस्कार प्राप्त किये, जबकि विपक्ष में मिस. रितु जैन प्रथम, डॉ. जंग बहादुर सिंह द्वितीय तथा डॉ. उपेन्द्र सिंह तृतीय पुरस्कार प्राप्त कियो। श्रुतलेख प्रतियोगिता में डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा प्रथम, डॉ. जंग बहादुर सिंह व श्री राकेश तिवारी संयुक्त रूप से द्वितीय तथा डॉ. कामिनी कौशल व श्री राहुल परमार द्वारा संयुक्त रूप से तृतीय पुरस्कार प्राप्त किया। प्रश्न मंच में डॉ. ए. के. सिंह, प्रथम, डॉ. जंग बहादुर सिंह व दिव्या अंबटी संयुक्त रूप से द्वितीय तथा तीन प्रतियोगी श्री प्रकाश टी.एल. डॉ. प्रकाश मालवीय व श्री प्रमेन्द्र सिंह परमार संयुक्त रूप से तृतीय पुरस्कार प्राप्त किया। अन्तिम प्रतियोगिता हास्य–व्यंग्य प्रस्तुति में डॉ. उपेन्द्र सिंह प्रथम, डॉ. ए. के. सिंह, द्वितीय तथा डॉ. कामिनी कौशल तृतीय पुरस्कार प्राप्त किया। हिंदी कार्यशाला के दौरान सभी विजेताओं को प्रमाण–पत्र तथा मोमेन्टो से सम्मानित किया गया। अंत में डॉ. जंग बहादुर सिंह द्वारा सभी को धन्यवाद ज्ञापित किया गया। कार्यक्रम का संचालन डॉ. कामिनी कौशल द्वारा किया गया।

हिन्दी वार्षिकोत्सव एवं पुरस्कार वितरण समारोह

संस्थान में दिनांक 21 नवम्बर, 2016 को आयोजित हिंदी वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। जिसमें हिंदी चेतना मास के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं और वर्षभर चलने वाली विभिन्न पुरस्कार योजनाओं के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किए गए। इस पुरस्कार वितरण समारोह के मुख्य अतिथि डॉ. गुरबचन सिंह, अध्यक्ष कृषि वैज्ञानिक चयन मंडल एवं अध्यक्ष नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) थे। समारोह की अध्यक्षता संस्थान की निदेशक (कार्यकारी) डॉ. रविन्द्र कौर ने की तथा संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) एवं अध्यक्ष राजभाषा, कार्यान्वयन समिति डॉ. के.वि. प्रभु ने सभी का स्वागत अपने भाषण से किया। संस्थान के उप निदेशक (राजभाषा) श्री केशव देव ने वर्ष 2015–16 की संस्थान की राजभाषा प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत की। संस्थान की सहायक निदेशक (राजभाषा) सुश्री सुनीता ने सफलतापूर्वक मंच–संचालन किया। समारोह की अध्यक्ष डॉ. रविन्द्र कौर ने मुख्य अतिथि का स्मृति चिन्ह व साल से अभिनंदन किया। उक्त समारोह में मुख्य अतिथि द्वारा हिंदी चेतना मास की प्रतियोगिताओं के प्रतिभागी विजेताओं को सम्मानपूर्वक पुरस्कृत किया गया।

हिन्दी वार्षिकोत्सव एवं पुरस्कार वितरण समारोह के मुख्य अतिथि डॉ. गुरबचन सिंह, अध्यक्ष कृषि वैज्ञानिक चयन मंडल एवं अध्यक्ष नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली)

पुरस्कार व सम्मान

वर्ष 2015–16 की अवधि में संस्थान को राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति के लिए अनेक पुरस्कार व सम्मान प्रदान किए गए।

❖ भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा परिषद के संस्थानों के निदेशकों की बैठक में बड़े संस्थानों के वर्ग में भा.कृ.अ.सं. को उत्कृष्ट राजभाषा कार्यान्वयन के लिए केन्द्रीय कृषि मंत्री माननीय श्री राधामोहन सिंह द्वारा 'राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार योजना 2015–16' का प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया।

❖ संस्थान की पत्रिका 'पूसा सुरभि' 2015–16' को उत्कृष्ट प्रकाशन हेतु नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में राजभाषा विभाग, भारत सरकार, गृह मंत्रालय नई दिल्ली के निदेशक (राजभाषा) श्री संदीप आर्य, द्वारा द्वितीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

हिंदी में सर्वाधिक सरकारी कामकाज के लिए नकद पुरस्कार योजना (2015–16)

संस्थान में विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी यह पुरस्कार योजना, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निर्देशों के अनुसार चलाई गई जिसमें वर्षभर हिंदी में सर्वाधिक सरकारी कामकाज करने वाले संस्थान के 07 कर्मचारियों को नकद पुरस्कार प्रदान किए गए।

अधिकारियों द्वारा हिंदी में डिक्टेशन देने के लिये पुरस्कार योजना (2015–16)

यह पुरस्कार योजना राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निर्देशानुसार लागू की गई है जिसमें अधिकारियों

द्वारा अधिक से अधिक हिंदी में डिक्टेशन देने हेतु अधिकारी द्वारा दिये गये डिक्टेशन की मात्रा व गुणवता को ध्यान में रखते हुए यह पुरस्कार दिया जाता है। गत वर्ष यह पुरस्कार डॉ. के.वि. प्रभु संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) एवं डॉ. वी.के. सिंह, प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी, कटैट को प्रदान किया गया। जिसमें प्रत्येक को 2,000 का नकद पुरस्कार दिया गया।

अन्य उपलब्धियां

संस्थान में दिनांक 09–11 मार्च 2016 को कृषि उन्नति मेले का आयोजन किया गया जिसमें समस्त प्रदर्शित सामग्री को हिंदी में सुलभ कराया गया।

पुरस्कार योजनाएं/प्रतियोगिताएं

वर्ष 2015–16 में कर्मचारियों को हिंदी में अपना अधिकाधिक सरकारी कामकाज करने के लिए प्रेरित करने हेतु विभिन्न प्रतियोगिताएं/प्रोत्साहन योजनाएं चलाई गईं। रिपोर्टाधीन अवधि में निम्न प्रतियोगिताओं/पुरस्कार योजनाओं का आयोजन किया गया।

हिंदी पत्र व्यवहार प्रतियोगिता (2015–16)

यह प्रतियोगिता संभाग, अनुभाग एवं क्षेत्रीय केन्द्र स्तर पर आयोजित की गई जिसमें वर्षभर हिंदी में सर्वाधिक कार्य करने वाले एक संभाग व क्षेत्रीय केन्द्र को तथा एक अनुभाग को चल–शील्ड से सम्मानित किया गया। रिपोर्टाधीन वर्ष में संभाग स्तर पर खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग व क्षेत्रीय केन्द्र स्तर पर क्षेत्रीय केन्द्र पुणे को तथा अनुभाग स्तर पर संयुक्त निदेशक के व्यक्तिगत अनुभाग को चल–शील्ड प्रदान की गई।

विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में हिंदी में कृषि विज्ञान लेखन के लिए पुरस्कार

इस पुरस्कार योजना के तहत 2015 कैलेन्डर वर्ष में प्रकाशित विभिन्न वैज्ञानिकों/तकनीकी अधिकारियों के लेखों के लिए प्रतियोगिता आयोजित की गई। प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार के रूप में क्रमशः 7000/–रु., 5000/–रु. एवं 3000/–रु. प्रदान किए गए।

पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार

पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार डॉ. लिवलीन शुक्ल एवं डॉ. गीता सिंह को संयुक्त रूप से दिया गया। पाठ्यक्रम समन्वयक की सिफारिशों और प्रशिक्षणार्थियों के फीडबैक के आधार पर इसको मूल्यांकित किया जाता है। इसमें पुरस्कार के रूप में 10,000/– रुपये का नकद पुरस्कार और एक प्रमाण–पत्र दिया जाता है।

हिंदी में पावर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता

संस्थान के वैज्ञानिकों के लिए सेस्करा के सभा भवन में 19 सितम्बर, 2016 को "किसान बेचारा या देश का सहारा" विषय पर पावर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता आयोजित की गई। प्रतियोगिता में संस्थान की कार्यवाहक निदेशक डॉ. रविन्द्र कौर एवं डॉ. के.वि. प्रभु, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) ने प्रतियोगिता में भाग लेने वाले प्रतियोगिता के निर्णायकों का पुष्प गुच्छ से स्वागत किया। प्रतियोगिता का संचालन उप निदेशक (राजभाषा) श्री केशव देव ने किया। विजेताओं को प्रथम, द्वितीय और तृतीय पुरस्कारों के रूप में क्रमशः 10,000/–,

(हिंदी वार्षिकोत्सव समारोह में मुख्य अतिथि से संभागों/अनुभाग एवं केन्द्रों में हिंदी में सर्वाधिक कामकाज करने के लिए चल–शील्ड प्राप्त करते हुए क्रमशः संभागाध्यक्ष, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, संयुक्त निरिक्षक (अनुसंधान) का वैयक्तिक अनुभाग एवं अध्यक्ष क्षेत्रीय केन्द्र पुणे।

7000/– और 5,000/–रु. तथा 3000–3000/–रु. के दो सांत्वना पुरस्कार की नकद राशि प्रदान की गई साथ ही सभी प्रतिभागियों को प्रशस्ति पत्र प्रदान किए गए।

राजभाषा कार्यान्वयन समिति

संस्थान में राजभाषा अधिनियम 1963 एवं 1976 के अनुसार राजभाषा नीति व नियमों का अनुपालन एवं कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के लिए संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) की अध्यक्षता में राजभाषा कार्यान्वयन समिति गठित की गई है। संस्थान के सभी संयुक्त निदेशक, संभागाध्यक्ष, लेखा नियंत्रक इसके पदेन सदस्य हैं जबकि उप निदेशक (राजभाषा) सदस्य सचिव हैं। रिपोर्टाधीन अवधि में इस समिति की बैठक नियमित रूप से प्रत्येक तिमाही में आयोजित की गई और संस्थान में राजभाषा के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए आवश्यक सुझाव व निर्देश दिए गए। प्रशासन में राजभाषा कार्यान्वयन का प्रभावी अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए इसी प्रकार संयुक्त निदेशक (प्रशासन) की अध्यक्षता में तथा सभी संभागों व केन्द्रों में उनके अध्यक्ष की अध्यक्षता में राजभाषा कार्यान्वयन उप समितियां गठित हैं जिनकी तिमाही बैठकें नियमित रूप से आयोजित की गईं।

राजभाषा नोडल अधिकारी

प्रत्येक संभाग/केन्द्र/इकाई एवं हिंदी अनुभाग के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करने के उद्देश्य से संपर्क सूत्र के रूप में राजभाषा नोडल अधिकारी नामित किए गए हैं जिससे संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन के कार्य में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। राजभाषा नोडल अधिकारियों की भूमिका को महत्व प्रदान करने एवं उन्हें प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से उत्कृष्ट राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार योजना प्रारंभ की गई है। वर्ष 2015–16 का सर्वश्रेष्ठ नोडल अधिकारी का पुरस्कार सेवानिवृत्त मुख्य तकनीकी अधिकारी डॉ. जसबीर सिंह को दिया गया।

राजभाषा के प्रगामी प्रयोग का निरीक्षण

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की सिफारिश एवं राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों को पूरा करने के लिए डॉ. इंद्रमणि, अध्यक्ष, कृषि अभियांत्रिकी संभाग की अध्यक्षता में गठित संस्थान राजभाषा निरीक्षण समिति द्वारा सभी संभागों, केन्द्रों, इकाइयों एवं अनुभागों में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग का जायजा लेने हेतु निरंतर निरीक्षण जारी है। निरीक्षण उपरांत संबंधित संभागों/अनुभागों/इकाइयों, केन्द्रों को राजभाषा कार्यान्वयन में वांछित प्रगति के लिए आवश्यक सुझाव देते हुए निरीक्षण रिपोर्ट प्रेषित की जा रही है। इसके साथ ही उक्त सभी संभागों/अनुभागों/इकाइयों का औचक निरीक्षण भी किया जा रहा है।

संगोष्ठी एवं हिंदी कार्यशालाएं (मुख्यालय)

संस्थान के विभिन्न वर्गों के अधिकारियों व कर्मचारियों को अपने कार्यों से राजभाषा हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करने के प्रति प्रेरित करने के उद्देश्य से कार्यशालाओं का आयोजन किया गया। वर्ष 2016–17 के दौरान संस्थान मुख्यालय में कार्यशालाएं आयोजित की गई।

- संस्थान के सहायक प्रशासनिक अधिकारियों के लिए दिनांक 28–29 जून, 2016 तक दो दिन की कार्यशाला आयोजित की गई जिसमें राजभाषा के विविध आयाम एवं सरकारी कामकाज में मसौदा एवं टिप्पण लेखन का महत्त्व के बारे में जानकारी प्रदान की गई। इस कार्यशाला में कुल 43 सहायक प्रशासनिक अधिकारियों ने भाग लिया।
- 14–15 फरवरी, 2017 को संस्थान के वैज्ञानिकों के लिए दैनिक कामकाज में राजभाषा नीति तथा सरकारी कामकाज में हिंदी का व्यावहरिक प्रयोगः कठिनाइयां एवं समाधान तथा हिंदी में कामकाज की अनिवार्यता विषयों पर जानकारी दी गई। कार्यशाला में कुल 50 वैज्ञानिकों ने भाग लिया।

वर्षभर हिंदी में सर्वाधिक काम करने के लिए नकद पुरस्कार पाने वाले प्रतिभागी/चल-शील्ड प्राप्त करने वाले संभाग/अनुभाग/क्षेत्रीय केन्द्र

नकद पुरस्कार 2016–17

प्रथम पुरस्कार — राशि

1. श्रीमती शाहनी मनोचा, सहायक, पेंशन अनुभाग ₹ 5000/–
2. श्रीमती मधुबाला, वरिष्ठ लिपिक, पीजीएस–2 अनुभाग ₹ 5000/–

द्वितीय पुरस्कार

1. श्रीमती नीलम, स.प्र.अ., खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग ₹ 3000/–
2. श्री नरेन्द्र कुमार, सहायक, जल प्रौद्योगिकी केन्द्र ₹ 3000/–

अधिकारियों द्वारा हिंदी में डिक्टेशन देने के लिए पुरस्कार प्रोत्साहन योजना

प्रथम पुरस्कार

1. डॉ. राजकुमार, अध्यक्ष, क्षेत्रीय केन्द्र कटराईं, हि.प्र. ₹ 5000/–

चल शील्ड विजेता

हिन्दी व्यवहार प्रतियोगिता (2016–17)

1. संभाग स्तर पर : जैव रसायन विज्ञान संभाग
1. अनुभाग/इकाई स्तर पर : कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केन्द्र
3. क्षेत्रीय केन्द्र स्तर पर : भा.कृ.अ.सं. क्षेत्रीय केन्द्र, इन्दौर

सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार (2016–17)

संयुक्त रूप से

1. डॉ. शशिबाला सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, कृषि रसायन विज्ञान संभाग ₹ 2,500/–
2. श्री किशन सिंह, सहा. मुख्य तकनीकी अधिकारी, कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केन्द्र ₹ 2,500/–

हिंदी चेतना मास, 2016 में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में पुरस्कृत प्रतियोगी

क्र.सं.	पुरस्कृत प्रतियोगी का नाम व स्थापना	पुरस्कार	राशि (रु. में)
(1)	निबंध प्रतियोगिता		
1.	डॉ. अल्का जोशी, वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौ. स.	प्रथम	रु. 2500/–
2.	डॉ. कमलेश कुमार सिंह, मुख्य तकनीकी अधिकारी, कृषि अर्थशास्त्र संभाग	द्वितीय	रु. 2000/–
3.	श्री राजकमल मीना, तकनीकी सहायक, कृषि भौतिकी संभाग	तृतीय	रु. 1500/–
4.	डॉ. रविश चौधरी, तकनीकी सहायक, बीज विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी संभाग	सांत्वना	रु. 600/–
(2)	टिप्पण एवं मसौदा लेखन प्रतियोगिता		
1.	श्री नरेश चन्द्र बौड़ाई, सहायक, स्नातकोत्तर विद्यालय–1	प्रथम	रु. 2500/–
2.	डॉ. युगल किशोर काला, मुख्य तकनीकी अधिकारी, आनुवंशिकी संभाग	द्वितीय	रु. 2000/–
3.	श्रीमती कृष्णा बिष्ट, सहायक, लेखापरीक्षा–3	तृतीय	रु. 1500/–
4.	श्री मुकेश कुमार, सहायक, संपदा नयाचार एवं सुरक्षा अनुभाग	सांत्वना	रु. 600/–
(3)	काव्य पाठ प्रतियोगिता		
1.	श्रीमती नीलम, सहायक, पी.सी.ए. अनुभाग	प्रथम	रु. 2500/–
2.	श्री किशन सिंह, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, कटैट	द्वितीय	रु. 2000/–
3.	श्री शिव कुमार सिंह, तकनीकी सहायक, आनुवंशिकी संभाग	तृतीय	रु. 1500/–
4.	डॉ. राजेश कुमार, मुख्य तकनीकी अधिकारी, सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग	सांत्वना	रु. 600/–
(4)	सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता (केवल कुशल सहायी वर्ग के लिए)		
1.	श्री विनोद कुमार, ड्राइवर, परिवहन अनुभाग	प्रथम	रु. 2500/–
2.	श्री राम विलास, कुशल सहायी कर्मचारी, कृषि अभियांत्रिकी संभाग	द्वितीय	रु. 2000/–
3.	श्री राजेश राय, दैनिक वेतन भोगी, कार्मिक–3 अनुभाग	तृतीय	रु. 1500/–
4.	श्री दिनेश कुमार गुप्ता, कुशल सहायी कर्मचारी, सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग	सांत्वना	रु. 600/–
(5)	अनुवाद प्रतियोगिता		
1.	डॉ. किश्वर अली, मुख्य तकनीकी अधिकारी, जैवरसायन विज्ञान संभाग	प्रथम	रु. 2500/–
2.	डॉ. अम्बरीश कुमार शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, आनुवंशिकी संभाग	द्वितीय	रु. 2000/–
3.	डॉ. वीरेन्द्र कुमार, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, जल प्रौद्योगिकी केन्द्र	तृतीय	रु. 750/–
4.	श्री लोकेन्द्र सिंह, तकनीकी अधिकारी, संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी संभाग	तृतीय	रु. 750/–

5.	डॉ. सुरेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, जैव–रसायनविज्ञान संभाग	सांत्वना	रु. 600 / –
(6)	**आशुभाषण प्रतियोगिता**		
1.	श्री आनंद विजय दुबे, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, कटैट	प्रथम	रु. 2500 / –
2.	डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, सेस्करा	द्वितीय	रु. 2000 / –
3.	डॉ. अर्चना सिंह, वरिष्ठ वैज्ञानिक, कृषि जैवरसायन विज्ञान संभाग	तृतीय	रु. 1500 / –
4.	श्री लोकेन्द्र सिंह, तकनीकी अधिकारी, संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी संभाग	सांत्वना	रु. 600 / –
(7)	**प्रश्न मंच प्रतियोगिता**		
1.	श्री नरेश बौड़ाई, सहायक, निदेशालय डॉ. करुणा दीक्षित, एसीटीओ, निदेशालय	प्रथम	रु. 1250 / – रु. 1250 / –
2.	सुश्री कृति गुप्ता, सहायक, कृषि प्रसार संभाग सुश्री ज्योत्सना झा, सहायक, निदेशालय	द्वितीय	रु. 1000 / – रु. 1000 / –
3.	श्री गुलाब सिंह, तकनीकी सहायक, सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग श्री निरंजन राय, तकनीकी सहायक, आनुवंशिकी संभाग डॉ. कुमार दुर्गेश, वैज्ञानिक, आनुवंशिकी संभाग डॉ. रेखा जोशी, वैज्ञानिक, आनुवंशिकी संभाग	तृतीय	रु. 375 / – रु. 375 / – रु. 375 / – रु. 375 / –
4.	डॉ. अभिषेक मण्डल, वैज्ञानिक, कृषि रसायन संभाग डॉ. इन्दु चोपड़ा, वैज्ञानिक, कृषि रसायन संभाग	सांत्वना	रु. 300 / – रु. 300 / –
	दर्शक पुरस्कार		
1.	डॉ. कमलेश कुमार सिंह, मुख्य तकनीकी अधिकारी, कृषि अर्थशास्त्र संभाग	–	रु. 300 / –
2.	श्री विवेक वर्मा, संविदा श्रमिक, निदेशालय	–	रु. 300 / –
3.	श्रीमती नीलम, सहायक, व्यक्तिगत दावा अनुभाग	–	रु. 300 / –
4.	श्रीमती संतोष गौतम, सहायक, लेखापरीक्षा	–	रु. 300 / –
5.	श्री आनंद विजय दुबे, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, कटैट	–	रु. 300 / –
6.	श्री रणबीर सिंह, तकनीकी अधिकारी, कृषि अभियांत्रिकी संभाग	–	रु. 300 / –
7.	मो. सैयद रजा अब्बास, कुशल सहायी कर्मचारी, निदेशालय	–	रु. 300 / –
8.	श्री दिनेश कुमार गुप्ता, कुशल सहायी कर्मचारी, सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग	–	रु. 300 / –
(8)	**वाद-विवाद प्रतियोगिता**		
1.	डॉ. बी.एस. तोमर, अध्यक्ष, शाकीय विज्ञान संभाग	प्रथम	रु. 2500 / –
2.	डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, सेस्करा	द्वितीय	रु. 2000 / –
3.	डॉ. अर्चना सिंह, वरिष्ठ वैज्ञानिक, कृषि जैवरसायन विज्ञान संभाग	तृतीय	रु. 1500 / –
4.	डॉ. वीरेन्द्र कुमार, मुख्य तकनीकी अधिकारी, कृषि रसायन संभाग	सांत्वना	रु. 600 / –

(9)	**श्रुतलेख प्रतियोगिता**		
1.	श्री आनंद विजय दुबे, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, कटैट	प्रथम	रु. 2500/–
2.	श्री नरेश बौड़ाई, सहायक, स्नातकोत्तर विद्यालय–1	द्वितीय	रु. 2000/–
3.	सुश्री कृति गुप्ता, सहायक, कृषि प्रसार संभाग	तृतीय	रु. 1500/–
4.	डॉ. अल्का जोशी, वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग	सांत्वना	रु. 600/–
(10)	**हिंदी टंकण प्रतियोगिता**		
1.	श्री दिनेश कुमार, सहायक, स्नातकोत्तर विद्यालय–1	प्रथम	रु. 2500/–
2.	श्री चंदेश्वर कापर, सहायक, सूत्रकृमि विज्ञान संभाग	द्वितीय	रु. 2000/–
3.	श्रीमती मधुबाला, अवर श्रेणी लिपिक, स्नातकोत्तर विद्यालय–1	तृतीय	रु. 1500/–
4.	श्री शशिकांत, सहायक, लेखापरीक्षा–5	सांत्वना	रु. 600/–

कृषि विज्ञान लेख प्रतियोगिता (2016) – पुरस्कृत प्रतिभागी

कृषि विज्ञान संबंधी लेख प्रतियोगिता (2016)

पुरस्कार	लेख का शीर्षक	लेखक का नाम	पुरस्कार राशि
प्रथम (₹7000/–)	जलवायु परिवर्तन का फलोत्पादन एवं गुणवता पर प्रभाव	डॉ. राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग	₹7000/–
द्वितीय (₹5000/–)	पोषक तत्वों से भरपूर वैकल्पिक खाद्यान्न – किनोआ	डॉ. किशवर अली, मु.तक.अधि. डॉ. अरुणा त्यागी, वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. शैली प्रवीण, अध्यक्ष (जैवरसायन विज्ञान संभाग)	₹1667/– ₹1667/– ₹1666/–
तृतीय (₹3000/–)	जैविक खेतीः उत्पादकता एवं आय	डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक डॉ. मृणालिनी पुंडीर, (एसएफएस) सस्य विज्ञान संभाग	₹1500/– ₹1500/–
सांत्वना (₹2000/–)	कृषि के लिए सूचना संचार के नये आयाम	डॉ. प्रतिभा जोशी, वैज्ञानिक डॉ. गिरिजेश सिंह मेहरा, वैज्ञानिक कृषि प्रसार संभाग डॉ. जे.पी. शर्मा, संयुक्त निदेशक (प्रसार)	₹667/– ₹667/– ₹666/–
सांत्वना (₹2000/–)	अपशिष्ट जल से जापानी पुदीना (मेंथा) की सफल खेती	डॉ. राजेन्द्र कुमार, वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. रविन्द्र कौर, प्रधान वैज्ञानिक श्री अजय कुमार, तकनीकी सहायक डॉ. राजेन्द्र सिंह, वरिष्ठ वैज्ञानिक जल प्रौद्योगिकी केन्द्र	₹500/– ₹500/– ₹500/– ₹500/–
सांत्वना (₹2000/–)	भू–दृश्यवली में बोगेनविलिया का महत्व	डॉ. बबीता सिंह, वैज्ञानिक डॉ. एस.एस. सिंधु, अध्यक्ष डॉ. प्रतिभा आनंद, वैज्ञानिक पुष्पविज्ञान एवं भू–दृश्यनिर्माण संभाग	₹667/– ₹667/– ₹666/–
सांत्वना (₹2000/–)	जल संकट का समाधानः जल संरक्षण	डॉ. विश्वनाथ प्रसाद, तकनीकी अधिकारी डॉ. ए.के. मिश्रा, प्रधान वैज्ञानिक डॉ. रविन्द्र कौर, प्रधान वैज्ञानिक श्री रणबीर सिंह, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी जल प्रौद्योगिकी केन्द्र	₹500/– ₹500/– ₹500/– ₹500/–

डॉ. रामनाथ सिंह पुरस्कार (₹ 10,000)

पुस्तक का नामः उद्यमशीलता तकनीकी जानकारी संकुल	डॉ. रश्मि सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, कृषि प्रसार संभाग डॉ. जे.पी. शर्मा संयुक्त निदेशक (प्रसार) डॉ. मनजीत सिंह नैन, वरिष्ठ वैज्ञानिक कृषि प्रसार संभाग	₹3334/– ₹3333/– ₹3333/–

आपके उद्‌गार

आपके संस्थान द्वारा प्रकाशित राजभाषा पत्रिका पूसा सुरभि 2015–16 अंक की प्रति प्राप्त हुई है। इसके सफल प्रकाशन के लिये आपको तथा संपादकों को हार्दिक बधाई एवं भविष्य के लिये शुभकामनाएं।

रमेश
पुस्तकालयाध्यक्ष
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय मसाला फसल अनुसंधान संस्थान
कोषिक्कोड, केरल

आपके संस्थान द्वारा प्रकाशित राजभाषा पत्रिका पूसा सुरभि 2015–16 अंक की प्रति प्राप्त हुई है। पत्रिका अत्यंत उपयोगी एवं रोचक सामग्री से भरपूर है तथा कृषि अनुसंधान संस्थान का एक सराहनीय प्रयास है। निदेशक महोदया, संपादक मंडल, पत्रिका प्रकाशन से जुड़े सभी अधिकारी एवं कर्मचारी बधाई के पात्र है। सामान्य नागरिक विशेष रूप से दिल्ली क्षेत्र से जैविक सब्जियां प्राप्त करने, घर पर उगाने के लिए क्या उपाय करें आगामी अंक में इस विषय पर यदि किसी विशेषज्ञ का लेख शामिल कर सके तो पत्रिका और अधिक उपयोगी बन सकेगी।

भवदीय

भारत भूषण दुआ
संयुक्त निदेशक (तकनीकी)
राष्ट्रीय इलेक्ट्रॉनिकी एवं सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान
इंद्रलोक, दिल्ली

आपके कार्यालय की पत्रिका "पूसा सुरभि" का वर्ष 2015–16 अंक हमें प्राप्त हुआ है। पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनायें सुन्दर एवं पठनीय है। राम रोशन शर्मा, (जलवायु परिवर्तन का फलोत्पादन एवं गुणवता पर प्रभाव), एम.एस. राठी एवं संगीता पॉल (तरल जैव उर्वरक निरूपण), विरेन्द्र सिंह और मानसिंह (उत्तरी एवम् उत्तर पूर्वी प्रान्तों के भविष्य की दलहन–मसूर), की रचनायें उल्लेखनीय है। पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य के लिये बहुत–बहुत शुभकामनायें।

के.एल. सलूजा
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी (रा.भा.अ.)
कार्यालय महानिदेशक लेखापरीक्षा, डाक व दूरसंचार, दिल्ली

आपकी पत्रिका पूसा सुरभि वर्ष 2015–16 प्राप्त हुई। इसके अंतर्गत प्रकाशित लेख आइए लौट चलें परंपरागत कृषि की ओर, जलवायु परिवर्तन का फलोत्पादन पर प्रभाव, पशु–चालित कृषि यंत्र, व्यावसायिक खेती, रसायनिक मसालों से फल पकाने का दुष्प्रभाव तथा फूड पैकेजिंग, दलहन उत्पादन, उर्वरक, सब्जियों का प्रबंधन आदि उपयोगी व रोचक आलेखों के साथ सुसज्जित यह पत्रिका वास्तव में बेहद उपयोगी है। इस सफल प्रयोग के लिए आपके समूह सहयोगियों को बहुत–बहुत बधाई एवं भविष्य हेतु अनेकानेक शुभकामनाएं।

सोमेशवर पाण्डेय
हिंदी अधिकारी
सी.एस.आई.आर–केन्द्रीय विद्युत रसायन अनुसंधान संस्थान
वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद
कारैकुडी, तमिलनाडु

आपकी पत्रिका पूसा सुरभि वर्ष 2015–16 प्राप्त हुई। इसके सफल प्रकाशन के लिये आपको तथा संपादक मंडल को हार्दिक बधाई एवं भविष्य के लिये अनेक शुभकामनाएं।

निर्मला महाजन
सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी (पुस्तकालय)
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान
नबी बाग, बैरसिया रोड, भोपाल, मध्य प्रदेश

माननीय केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री के कर कमलों से विमोचन की गई आपके संस्थान की पत्रिका पूसा सुरभि वर्ष 2015–16 नौवें अंक की मानार्थ प्रति हमें प्राप्त हुई। इसे भेजने के लिए आपको असंख्य धन्यवाद। तकनीकी और राजभाषा हिंदी रचनाओं की गंगा जमुनी ज्ञानधारा बहाने वाली पत्रिका की आवरण सज्जा, रंग रूप और विषय वस्तु उत्कृष्ट है। तकनीकी रचनाओं की दृष्टि से आपकी पत्रिका अति उत्तम है जो गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार से भी सम्मानित की जा चुकी है।

कामना करते हैं कि आपकी पत्रिका सदैव पुष्पित–पल्लवित होती रहे और सफलता के पायदानों पर सदैव अग्रसर होती रहे।

के.एल. अहिरवार
वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी
भा.कृ.अपु.प.–पटसन एवं संवर्गी रेशा प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान
12, रीजेंट पार्क, कोलकाता

2016 की सचित्र झलकियां

Prof. M S SWAMINATHAN LIBRARY